

॥ इन्द्रियपराजयशतकम् ॥

प्रणम्य मृगलक्ष्माणं, पञ्चमं चक्रधारिणम् ।

श्री शान्तिमचिरासूनमचिराच्छान्तिकारिणम्

॥१॥

गाथार्थ : हरणना चिह्नवाळा, पांचमा चक्रवर्ती, अचिरा माताना पुत्र, विलंब विना शांतिने करनारा श्री शांतिनाथ भगवानने प्रणाम करीने. ॥१॥

वाञ्छितार्थप्रदाने यश्चिन्तामणिसमक्रियः ।

श्रीचिन्तामणिपार्श्वो मे, स्ताद्विघ्नध्वंसकारकः

॥२॥

गाथार्थ : ईच्छितने आपवामां जेनी चिन्तामणि रत्न समान क्रिया छे, एवा श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ भगवान मारा विघ्नोनो नाश करनार थाओ. ॥२॥

सन्निधत्तां गिरां सम्यगीश्वरा शारदाभिधा ।

यस्याः प्रसादतः शास्त्रबोधे स्याद्विशदा मतिः

॥३॥

गाथार्थ : वाणीनी सम्यग् मालिक एवी शारदा-सरस्वती नामनी देवी छे. जेनी कृपाथी शास्त्रना बोधमां (मारी) मति विशाल थाय, ते मने सानिध्य करो. ॥३॥

योगिनीनां चतुष्पष्टिर्येन जिग्ये महात्मना ।

स श्रीमान् जिनदत्ताह्वः प्रसीदतु दयानिधिः

॥४॥

गाथार्थ : चोसठ योगीनीओ जे महात्मा वडे जीताई छे एवा तथा दयाना भंडार एवा ते श्रीमान जिनदत्त नामना आचार्य कृपा करो. ॥४॥

पथि पाथः प्रदानेनापथो नीवृत्ति पप्रथे ।

यद्यशोराशिरुन्निद्रबोधाय कुशलप्रभुः

॥५॥

गाथार्थ : जेमणे मार्गमां पाणी आपवा वडे । मार्ग वगरनी यशनी राशिने विस्तारी एवा श्री जिनकुशलसूरी प्रभु विकसित बोधने माटे थाओ.

युगप्रधानसूरीन्द्रजिनचन्द्रगुरुगुरुः ।

सौम्यां दृष्टिं विधत्तां मे शुभयोगो हि सिद्धिदः

॥६॥

गाथार्थ : वडील, युगप्रधान अने आचार्योमां ईन्द्रसमान एवा श्री जिनचंद्रसूरीश्वरजी महाराजा, मारी उपर सौम्य दृष्टिने करो. कारण के, शुभनो योग सिद्धिने आपनार छे. ॥६॥

अनूचानसमीचीनपदप्रौढिभृतो गुरोः ।

श्रीमज्जयसोमाख्यस्यादेशाल्लेशेन लिख्यते

॥७॥

प्राच्याचार्यविनिर्मितखशतकविवृतिविचार्य निजमत्या ।

स्वपरावबोधहेतोः श्रमं महान्तः सफलयन्तु ॥८॥ युगम् ॥

गाथार्थ : अंगसहित प्रवचननो अभ्यास करनार, सारी रीते पदनुं ज्ञान करवामां प्रौढताने धारण करनार एवा श्री

जयसोम नामना गुरुना आदेशथी प्राचीन आचार्य द्वारा रचायेली ईन्द्रियशतकनी टीकाने पोतानी मति वडे विचारीने स्व अने परने बोध थाय ए हेतुथी कांईक लखाय छे. महान पुरुषो श्रमने सफळ करो. ॥७,८॥

त्यां प्रथम गाथा आ प्रमाणे-

सुच्चिय सूरु सो चव, पंडिओ तं पसंसिमो निच्चं ।

इंदियचोरेहिं सया, न लुंटाअं जस्स चरण-धणं ॥१॥

गाथार्थ : जेनुं ईन्द्रिय रूपी चौरु वडे शाश्वत एवं चारित्र रूपी धन लूटायुं नथी, ते ज शूरवीर छे. ते ज पंडित छे, तेनी नित्य प्रशंसा करीए छीए.

भाषांतर : ते ज शूरवीर छे. श्लोकमां च समुच्चय अर्थमां छे. 'उंव' अवधारण-निश्चय अर्थमां छे. अर्थात् ते ज पंडित छे. अर्थात् तत्त्वने अनुसरनारी जेनी मति छे, ते पंडित कहेवाय छे. तथा तेनी नित्य-सदा अमे प्रशंसा करीए छीए - स्तवना करीए छीए.

इंदिय-चवल-तुरंगे, दुग्गइ-मग्गाणु-धाविरे निच्चं ।

भाविअ भवस्सरुवो, रुंभइ जिणवयण-रस्सीहिं ॥२॥

गाथार्थ : भवनुं स्वरूप जेणे अनुभव्युं छे, एवो जीव दुर्गतिना मार्गने अनुसरनारा इन्द्रिय रूपी चपल घोडाओने जिनवचन रूपी दोरडाओ वडे हंमेशां रोके छे. ॥२॥

भाषांतर : अहीं धातुओनो अनेक अर्थ होवाथी 'भावितं' पदथी परिच्छिन्न ' अर्थ लेवानो छे. अर्थात् जाण्युं छे भवनुं स्वरूप. जिनेश्वर भगवंतोए उपदेशेला विशिष्ट वैराग्यथी तरंगित थयेला शास्त्रना अभ्यासथी उत्पन्न थयेला संवेगना उल्लासनी वासना वडे संयोग अने वियोग स्वरूप संसारना स्वभावने जेणे जाण्यो छे, ते पुरुष भवना स्वरूपने जाणनार कहेवाय. श्रोत्रादि इन्द्रियो रूप चपल अश्वोने तेओनुं चपलपणुं-चंचळपणुं होवाथी अटकाववा दुष्कर छे. इन्द्रियो पोतपोताना विषयने ग्रहण करवामां लोलुप होवाथी तेने चपल घोडानी उपमा घटे छे अर्थात् चपल घोडाने मार्गमां स्थिर करवा कठीन होय छे, तेम इन्द्रियोने अनादि वासनाना कारणे स्व-स्व विषयमां जती अटकाववी दुष्कर छे. (आ इन्द्रियो रूपी चपल घोडाओने तीर्थकरे प्ररूपेला आगम रूपी दोरडाओ वडे खोटा मार्गथी अटकाववी जोईए. 'रुंभइ' ए प्राकृत होवाथी लिंग अर्थे लट् प्रत्यय लागे छे. हवे इन्द्रियरूपी चपल घोडाओ केवा प्रकारना छे ? हंमेशां नरक-तिर्यचादि दुर्गतिना मार्ग तरफ अनुसरवाना स्वभाववाळा छे अर्थात् नरकतिर्यच दुर्गतिना जेटला मार्गो छे, तेटला मार्गो तरफ आ इन्द्रिय रूपी चपल घोडाओ जीवने लई जाय छे.

इंदिय-धुत्ताणमहो, तिल-तुसमित्तंपि देसु मा पसरं ।

जइ दिन्नो तो नीओ, जत्थ खणो वरिसकोडि समो ॥३॥

गाथार्थ : अरे आत्मा, इन्द्रियो रूपी धूर्तोनो तणखला मात्रनो पण - अल्प पण प्रसार न थवा दे. (कारण के) जो प्रसार आप्यो तो तने ज्यां एक क्षण क्रोड वर्ष समान छे तेवी नरकमां लई जशे. ॥३॥

भाषांतर : हे आत्मा ! अहीं आश्चर्यमां छे. इन्द्रियो रूपी धूर्तोंने अर्थात् इन्द्रियोने ज अहीं ठगारी कही छे. तेने तलना तणखला मात्र पण अर्थात् अत्यंत अल्प पण पोतपोताना विषयमां प्रवर्तवा न दे. 'मा' निषेध अर्थमां छे. इन्द्रियो रूपी धूर्तोंने वश थनारो तुं न था. ए प्रमाणे अर्थ छे. जो तारा वडे त्यां प्रवर्ताई, तो ते तने तेवी नरकमां लई जशे, जे नरकादिमां एक क्षण क्रोड वर्ष समान थशे. अहीं क्षण ए कालविशेष छे. क्षण -नाडिकानो षष्ठांश भाग अथवा मुहूर्त जाणवुं. जे नरकादिमां एक पण क्षण दुःखथी आकुल होवाथी वर्षकोटी समान थाय छे, एम कहेवानो भाव छे. सारी अवस्थामां रहेलाने अनुत्तरवासी देवोनी जेम पसार थतो काळ खबर पडतो नथी. नरकमां रहेला जीवोने क्षण पण पूराती नथी, अर्थात् क्षण पण पसार करवी

कठिन पडे छे, आथी ज ते नरकना जीवो तेमांथी नीकळवाने इच्छतां होवा छतां पण नीकळवा माटे समर्थ थता नथी. श्री राजप्रश्नीय उपांगमां कहुं छे के ! हे प्रदेशी ! चार स्थान वडे.

नरकमां हमणां ज उत्पन्न थयेलो नारकनो जीव मनुष्य लोकमां आववा माटे इच्छा करे छे पण त्यांथी संचार करी शकतो नथी. ॥३॥

अजिइंदिएहिं चरणं, कट्टं व घुणेहि कीरइ असारं ।

तो धम्मत्थीहि दढं, जइयव्वं इंदियजयंमि

॥४॥

गाथार्थ : काष्टनो कीडो काष्टने असार करे छे, तेम नहीं जितायेली इन्द्रियो वडे चारित्र असार थाय छे, तेथी धर्मना अर्थीओ वडे इन्द्रिय उपर विजय मेळववा माटे प्रयत्न करवो जोईए. ॥४॥

भाषांतर : काष्टनो कीडो जेम काष्टने असार-निःसार करे छे. तेम नहि जीतायेली - पोताना वशमां नहि करायेली इन्द्रियो वडे चारित्र के जे सिद्धि नामना महेलना शिखरने प्राप्त करावनारुं छे ते चारित्र, असार कराय छे अर्थात् निष्कळ कराय छे. अने कहुं छे के गोवाळ जे परनी गायने पाळे छे अथवा भंडपाल जे बीजाना वासणोनुं रक्षण करे छे, तो पण जे प्रमाणे ते द्रव्यनो मालिक थतो नथी, ए प्रमाणे श्रमण फक्त क्रियाकलाप करे अने इन्द्रिय उपर विजय न मेळवे तो श्रमणपणानो मालिक थतो नथी.

तेथी धर्मना अर्थीओ वडे सम्यक्त्वश्रुत देशविरति, सर्वविरति रूप धर्मनी मागणी कराय छे, इच्छा कराय छे. तेओ वडे अर्थात् धर्म करवाना स्वभाववाळाओ वडे स्थिर जे प्रमाणे थवाय ते प्रमाणे इन्द्रिय जयमां - इन्द्रियने वश करवामां प्रयत्न करवो जोईए. कारण के इन्द्रियना विजयथी ज धर्मनी प्राप्ति थाय छे. कहुं छे के... हे राजेन्द्र ! जे बाहुबलीनो जय अने रावणनो विभंग (थयो हतो) त्यां इन्द्रियोनो जय अने अजय कारण हतो ॥४॥

जह कागिणीइ हेउं, सहस्सं हारइ नरो ।

तह तुच्छविसय-गिद्धा, जीवा हारंति सिद्धिसुहं

॥५॥

गाथार्थ : जेम काकिणी माटे हजार कर्षापणने माणस हारे छे, तेम तुच्छविषयमां आसक्त जीवो सिद्धिसुखने हारे छे. ॥५॥

भाषांतर : श्लोकमां जह-यथा उदाहरणना उपन्यास माटे छे. रूपियाना एंसीमा भागने काकिणी कहे छे. काकिणीने माटे एक हजार कार्षापणोने माणस हारे छे; श्लोकमां कार्षापण आपेल नथी, पण ते अध्याहारथी ग्रहण करवानुं छे. अहीं उदाहरण आ प्रमाणे छे. एक गरीब माणस हतो. आजीविकाने मेळवता तेना वडे एक हजार कार्षापण प्राप्त कराई, तेणे तेने ग्रहण करीने सार्थनी साथे पोताना घर तरफ प्रयाण कर्युं. तेमांथी भोजनादि निमित्ते एक रूपियामांथी काकिणीओ खरीदी. त्यार बाद दिवसे दिवसे काकिणी वडे भोजन करे छे. तेमां एक काकिणी बाकी रही अने ते रस्तामां भूली गयो. सार्थमां आगळ वधते छते तेणे विचार्युं के मारे (बीजो) रूपियो भांगवो पडशे. आथी कार्षापणनी नळीने एक ठेकाणे संताडीने काकिणीने शोधवा गयो. ते काकिणी अन्य वडे चोराई गयेली. अने (आ बाजु) कार्षापणथी भरेल नळी पण संताडती वखते अन्य वडे जोवाई हती, ते तेने ग्रहण करी अने नाश्यो. पाछळथी ते गरीब घरे जईने शोक करे छे. आ दृष्टांत छे।

अहीं तथा, सादृश्य अर्थमां छे. तेनी समान तुच्छ विषयमां आसक्त - तुच्छ असार शब्दादि पांच विषयोमां आसक्त जीवो मुक्तिना सुखने हारे छे. भावार्थ ए छे के रत्नकोटी समान सिद्धिना सुखोनी आगळ काकिणी समान मनुष्य संबंधी आ विषयो छे. काकिणी जेवा तुच्छ विषयोना अर्थीओ वडे कार्षापणनी कोथळी जेवा सिद्धिना सुखो हराय छे. क्वचित् कोडि रयणाण हारण' आ पाठ छे, त्यां कर्कतनादि जे सो लाख रूप क्रोड किंमतना छे, ते रत्नोने एक काकिणी मेळववा माटे हारे छे. ए प्रमाणे अर्थ करवो. ॥५॥

तिलमित्तं विसयसुहं, दुहं च गिरिराय-सिंगतुंगयरं ।

गाथार्थ : तिल मात्र विषय सुखना बदलामां गिरिराजना अतिशय ऊंचा शिखर समान दुःख भव कोडी वडे - क्रोडो भवो वडे नाश पामतुं नथी. - पूर्ण थतुं नथी. जे जाणे ते कर. ॥६॥

भाषांतर : शब्दादि विषयथी उत्पन्न थयेल विषय सुख तिल मात्र एटले अरण्यमां उत्पन्न थयेल प्रमाणवाळु अतितुच्छे. अने तेना बदलामां नरकादिमां अशाताने अनुभववा स्वरूप सुवर्णाचलनुं उचुं जे शिखर तेनी जेम अतिशय मोटा दुःखो छे, जे क्रोड जन्मो वडे पण नाश पामता नथी. अर्थात् दुःख पूर्ण थतुं नथी. अनेकार्थ संग्रह २-१०८मां निष्ठाना अनेक अर्थ बतावेल छे. जेमके उत्कर्ष व्यवस्था, क्लेश, निष्पत्ति, नाश, अंत, निर्वाह याचन अने व्रत. अहीं निष्ठानो 'नाश' अर्थ अभिप्रेत छे. तेथी जे प्रमाणे तने बोध थाय ते प्रमाणे कर. विषयथी थता सुख अने दुःख ए बंने बाजुओने जोईने ज्यां आत्महित थाय ते कर. ए प्रमाणे गुरुनो उपदेश छे. गुरुओ जे परिणामे सुख-रूप होय अने देखावमां कदाच अप्रिय पण होय, छतां तेनी प्ररूपणा करे छे. वळी कह्युं छे के "वैद्य, गुरु अने मंत्री जे राजानुं प्रिय बोलनारा छे, ते राजा शरीर, धर्म अने कोशथी जलदी हीन थाय छे. ॥६॥

भुंजंता महूरा विवागविरसा किंपागतुल्ला इमे,

कच्छुकंडुअणं व दुक्खजणया दाविति बुद्धिं सुहे

॥७॥

गाथार्थ : आ (कामो) भोगवतां मधुर अने विपाके विरस छे. किंपाक फलनी समान छे. खरजवानी खणजनी जेम दुःखने उत्पन्न करनारा छे, छतां पण सुख आपनारा छे एवी बुद्धिने पेदा करे छे.

भाषांतर : आ एटले के सकल संसारी जीवोने प्रत्यक्ष एवा विषयो अनुभव करतां मीटा लागे छे अर्थात् मुखमां सुख करनारा लागे छे, पण विपाकमां अर्थात् तेना फलना उदयनी अवस्थामां विरस होय छे. विरागताने उत्पन्न करनारा होय छे अने वळी ते विषयो किंपाक फलनी समान छे. जे प्रमाणे किंपाक फलो भोगवतां रस वडे, वर्ण वडे, शब्दथी, अने गंधादि वडे मनोरम छे, पण विपाकमां विरसताना हेतु छे ते प्रमाणे आ विषयो पण विपाकमां विरस छे, तथा विषयो खरजवानी खणजना जेवा दुःखने उत्पन्न करनारा छे. सुखमां बुद्धि पेदा करे छे, जेमके खरजवाने नखादि वडे खणतो उपतप्ति (संताप) रूप दुःखने सुख माने छे. ते प्रमाणे मोहथी पीडाता जीवो विषयना दुःखने सुख कहे छे अने पोताने संतोषनो अनुभव थतो होवाथी बीजाने पण भोगोना दुःखने सुख छे एम जणावे छे. ॥७॥

मज्झणहे मयतिण्हअव्व सययं मिच्छाभिसंधिप्पया;

भुत्ता दिंति कुजम्म-जोणिगहणं भोगा महावेरिणो

॥८॥

गाथार्थ : मध्याहनमां मृगतृष्णा जेवा भोगो सतत मिथ्यात्वना जोडाणने करनार छे अने भोगवाता भोगो खराबजन्मरूप योनि ग्रहण करावे छे. आ प्रमाणे भोगो महावैरी छे. ॥८॥

भाषांतर : सतत एटले निरंतर अने भोगवाय ते भोग. मध्याहन एटले दिवसना यौवन समये मृगतृष्णा एटले झांझवाना नीरनी जेम शब्दादि भोगो मिथ्या अभिप्रायने आपे छे अर्थात् असत् बुद्धिने पेदा करे छे. अर्थात् मध्याहन समये मरुदेशमां देखाता झांझवाना नीर असत् छे, तेम सतत भोगवाता शब्दादि भोगो असत् छे अने झांझवाना नीरनी जेम मिथ्या अभिप्रायने पेदा करे छे, तेम भोगो पण मिथ्या अभिप्राय ने पेदा करे छे. कया मिथ्या अभिप्रायने पेदा करे छे ? ते कहे छे -

भर्तृहरी वैराग्यशतक गाथा-२० मां कहेल छे के कनकना कळशनी उपमा अपाय एवा बे स्तनो आखरे मांसना लोचा छे. चंद्रनी साथे सरखावातुं मुख ए श्लेष्मनुं घर छे. कुकुविना कुविकल्पो वडे मोटुं गणावायेलुं लिंग (पुरुष चिह्न) आखरे झरता एवा मूत्रथी भीनुं, हाथीना सूंढनी स्पर्धा करतुं, वारंवार निंदा करवा योग्य रूपवाळु छे. जे प्रमाणे मध्याहनमां झांझवानुं नीर असत् जलबुद्धिने उत्पन्न करे छे, तेम दुःख रूप भोगो पण

सुखनी बुद्धिने उत्पन्न करे छे, तथा सेवाता भोगो कुत्सित जन्मनी योनिना ग्रहणने आपे छे. ते कया जन्मोने आपे छे ? तेना जवाबमां कहे छे के - एक श्वासोच्छ्वासमां सत्तर वारथी अधिक जन्ममरण रूप उत्पत्ति जेमां छे, तेवी पृथ्वी जलादि रूप उत्पत्ति स्थानोने ग्रहण करावी आपे छे. अथवा कुजन्मयोनिगहन अर्थात् कुजन्म रूप योनि स्वरूप कान्तार जंगलने आपे छे. आ प्रमाणे व्याख्या करवी जोईए.

काममां आसक्त जीव विविध योनिमां उत्पन्न थाय छे. आथी कामोने-भोगोने कुजन्म योनिना आपनारा कहेल छे. आथी ज ते भोगो महावैरी छे. जे प्रमाणे महावैरी दुःखने उत्पन्न करे छे, ते प्रमाणे आ भोगो कुयोनिमां उत्पन्न करवा द्वारा दुःखी करे छे. ॥८॥

सक्को अग्गी निवारेंउं, वारिणा जलिओविहु ।

सव्वोदहिजलेणावि, कामग्गी दुन्निवारिओ

॥९॥

गाथार्थ : सळ्गेलो पण अग्नि पाणी वडे निवारवा माटे - शांत करवा माटे शक्य छे. (परंतु) काम रूपी अग्नि सर्व समुद्रोना पाणी वडे पण बुझावी शकाय तेम नथी. ॥९॥

भाषांतर : हु' निश्चय अर्थमां छे. सळ्गेलो पण अर्थात् घी-मधुना सिंचनथी उद्दीप्त थयेलो पण अग्नि पाणी वडे शांत पाडवा माटे शक्य छे, परंतु स्त्रीना भ्रमरना कटाक्षथी उद्दीप्त थयेलो आ कामाग्नि समग्र समुद्रना पाणी वडे पण शांत थतो नथी. अहीं कामनुं अग्निनी साथे साम्य छे आथी आवा वचननो उपन्यास कर्यो छे. अन्यथा समग्र समुद्रना पाणी वडे दुनिर्वारित छे, ते कथन अनुचित थात. ॥९॥

विसमिव मुहंमि महुरा, परिणामनिकामदारुणा विसया ।

कालमणंतं भुत्ता, अज्ज वि मुत्तं न किं जुत्ता

॥१०॥

गाथार्थ : विष जेवा विषयो मुखमां (शरूआतमां) मधुर छे. (परंतु) परिणामे अतिशय दारुण छे. अनंतकाल भोगवेला पण तृप्ति आपता नथी, तो शुं आजे पण मूकवा योग्य नथी ॥१०॥

भाषांतर : हे आत्मा ! आ विषयो के जे विष जेवा छे ते मुखमां एटले के देखावमां मधुर छे, परंतु परिणामे - तेना विपाकना काले अतिशय दारुण-रौद्र छे. क्षेत्रथी उत्पन्न थयेल, परस्पर करायेल, शस्त्रोथी उत्पन्न थयेल अने परमाधामीथी उत्पन्न करायेल, जे नरकमां दुःख छे, ते दुःख उत्पन्न थवानुं कारण विषय होवाथी ते भयंकर छे, जे प्रमाणे विष, मुखमां जीभनो संयोग थये छते मुधरता बतावे छे, परंतु विपाके दुःखने उत्पन्न करे छे. ते प्रमाणे आ विषयो पण जाणवा. कोईपण पुरुषने उपदेशनो विषय करीने उपदेश आपे छे के हे भव्य ! हे देवानुप्रिय ! अनंतकाल भोगवीने पण आ विषयो आजे पण मूकवा माटे शुं योग्य नथी ? अहीं श्लोकमां 'की' नो प्रयोग निंदा अर्थमां छे अर्थात् अनंतकाल सुधी भोगवेला पण विषयोए जो तृप्तिने न करी, तो अल्पकाल मनुष्य भवमां सेवाता विषयो शुं तृप्तिने उत्पन्न करशे ? अर्थात् नहीं करे आथी त्याज्य छे. ॥१०॥

विसयरसासवमत्तो, जुत्ताजुत्तं न याणई जीवो ।

झूरइ कलुणं पच्छा, पत्तो नरयं महाघोरं

॥११॥

गाथार्थ : विषयरस रूपी दारुथी मत्त जीव योग्य-अयोग्यने जाणतो नथी. पाछळथी महाभयंकर नरकने प्राप्त करे छे. अने (विवेकी) करुणता पूर्वक (मनुष्यभवमां मळेली धर्मसामग्रीने) याद करे छे. ॥११॥

भाषांतर : आ जीव विषयरस के जे दारु (आसव) छे, तेनाथी मत्त थयेलो गांडपणने पामेलो युक्त-अयुक्त सद्-असत् ने जाणतो नथी.

जे प्रमाणे दारुना पान वडे परवशताने पामेलो सद्-असद्ने विचारतो नथी. ते प्रमाणे विषयासक्त पण सद्-असद्नो विचार करतो नथी. पाछळथी मरण पछी अतिरौद्र नरकने प्राप्त करे छे. जीव स्मरण करे छे के मारा वडे मनुष्यभवमां धर्मसामग्री ने प्राप्त करीने विषयासक्ति कराई जेथी हंमेशां दुःखी थयेलो रहं छुं

दीनवाक्यने तेवी रीते बोले छे, ॥११॥

जह निंबदुमुप्पत्रो, कीडो कडुअंपि मत्रए महुरं ।

तह सिद्धिसुहपरुक्खा, संसारदुहं सुहं बिंति

॥१२॥

गाथार्थ : जे प्रमाणे लीमडाना वृक्षमां उत्पन्न थयेलो कीडो, कडवा पण रसने मधुर माने छे. ते प्रमाणे सिद्धिसुखथी परोक्ष जीव संसारना दुःखने सुख कहे छे. ॥१२॥

भाषांतर : जे प्रमाणे लीमडाना वृक्षमांथी उत्पन्न थयेल कीडो (क्षुद्रजंतु) कडवा पण रसने मधुर माने छे - विचारे छे. तथा सादृश्य अर्थमां छे. ते प्रमाणे मुक्तिनुं सुख परोक्ष-अप्रत्यक्ष छे जेओने, एवा ते जीवो मुक्तिना सुखने नहीं इच्छता धन उपार्जनादि स्वरूप संसारना दुःखने पण बीजाओनी आगळ सुख कहे छे. जेथी कह्युं छे के - धननी प्राप्तिमां दुःख, मेळवेलानुं रक्षण करवामां दुःख, लाभमां दुःख, व्ययमां दुःख (आम) दुःखना साधन एवा अर्थने धिक्कार छे. ॥१२॥

अथिराण चंचलाण य, खणमित्त-सुहंकराण पावाणं ।

दुग्गइ-निबंधणाणं, विरमसु एआण भोगाणं

॥१३॥

गाथार्थ : अस्थिर, चंचल, क्षणमात्र सुखने करनारा, पापस्वरूप, दुर्गतिना कारण एवा आ भोगोथी विराम पाम. ॥१३॥

भाषांतर : हे आत्मा ! 'आ भोगोथी' त्यां पंचमीना अर्थमां षष्ठी थई छे. 'द्वितीयोदः' सूत्रथी क्यारे द्वितीयादि विभक्तिने स्थाने षष्ठी थाय छे, जेमके चौरुष्ष चोरथी गभराय छे. आ प्रमाणे फेरफार थाय छे. हे आत्मा आ भोगोथी तुं विराम पाम-पाछो फर.

हवे पाछा फरवानो उपदेश आपवामां कारण बतावे छे. भोगो केवा प्रकारना छे ? आ भोगो लांबो समय रहेनार नथी एटले अस्थिर छे. चंचल छे अर्थात् चटुल छे. अस्थिर अने चंचल ए बे शब्दो एक ज अर्थने सूचन करनारा छे, एटले एक अर्थवाळा शब्दनो बे वार उपयोग करेल छे. ते भोगो अतिशय चंचळ छे ते जणाववा माटे छे. तथा क्षण मात्र सुख करनारा छे. एटले प्रिय करनारा छे. अहीं प्राकृत होवाथी म नो आगम अलाक्षणिक छे, तथा पाप रूप - अनिष्ट रूप छे अर्थात् एनुं कोई कार्य नथी. ए भोगो नरकादि दुर्गतिना कारण छे अहीं चंचलपणुं, क्षणसुखकारीपणुं, पापपणुं, दुर्गतिकारणपणुं ए भोगोना विरमणमां हेतु छे. ॥१३॥

पत्ता य कामभोगा, सुरेसु असुरेसु तहय मणुएसु ।

न य जीव ! तुज्झ तित्ती, जलणस्स व कडुनियरेण

॥१४॥

गाथार्थ : हे जीव तारा वडे वैमानिक देवलोकमां भवनपतिमां तेमज मनुष्यलोकमां काम,भोगो प्राप्त कराया छे. (पण तृप्ति थई नथी) (जेमके) लाकडाना समूह वडे अग्निने तृप्ति थती नथी. (अर्थात् लाकडाना समूह वडे अग्नि शांत पडतो नथी, पण वधे छे.) ॥१४॥

भाषांतर : हे जीव ! तारा वडे वैमानिक देवलोकमां तथा पातालवासी भवनपति देवलोकमां अने मनुष्यजन्ममां कामभोगो प्राप्त कराया छे अने परंतु तृप्ति थई नथी अर्थात् इच्छानो निरोध थयो नथी जे जीवोने तृप्ति एटले इच्छानो निरोध थतो नथी अहीं 'तहय'मां च छे ते अवधारण अर्थमां छे. जेनी इच्छा कराय ते काम अने शब्दादि ते भोगो. अथवा शब्द अने रूप ए काम छे. गंध, रस अने स्पर्श ए भोग छे. ए बनेनो द्वन्द्व समास छे एटले काम अने भोग. श्लोकमां च पादपूरण माटे छे. तेवा जीवो माटे कह्युं छे के - अन्नने विषे, जीवनने विषे, भोगने विषे, धनने विषे तृप्त नहि थयेला जीवो सर्व जग्याए गया छे, जशे अने जाय छे.

जीवने कामभोगो शांत थता नथी कोना वडे अने कोनी जेम? ते उपमा द्वारा बतावे छे. लाकडाना समूह

वडे अग्नि जेम शांत थतो नथी. तेम जीवना काम अने भोगो शांत थता नथी. (पण उलटाना वधे छे. वांछा वधे छे)

भर्तृहरी सुभाषित संग्रहमां कहुं छे के लाकडाओ वडे अग्नि तृप्त थतो नथी. नदीओ - वडे सागर तृप्त थतो नथी. यमदेव सर्व प्राणीओ वडे तृप्त थतो नथी. पुरुषो वडे स्त्री तृप्त थती नथी. ॥१४॥

जहा य किंपागफला मणोरमा, रसेण वन्नेण य भुजंमाणा ।

ते खुट्टए जीविय पच्चमाणा, ए ओवमा कामगुणा विवागे ॥१५॥

गाथार्थ : जे प्रमाणे रस वडे अने वर्ण वडे मनोरम पण किंपाकना फळो खानारना जीवितनो नाश करे छे (ते प्रमाणे) विपाक स्थानने प्राप्त करेला कामगुणो विपाकमां किंपाकफळ समान छे. ॥१५॥

भाषांतर : यथा जे प्रमाणे अने च ए उंव अर्थमां छे. श्लोकमां मणोरमा साथे अपि नो प्रयोग न होवा छतां ते अध्याहारथी ग्रहण करवानो छे. आथी रस वडे, वर्ण वडे अने य शब्दथी गंध वडे भोगवाता मनोरम पण किंपाकना फळो जीवितनो नाश करे छे. अहीं 'खुट्टो' ए आर्ष प्रयोग होवाथी नाश करे छे एम अर्थ छे. तेवी रीते विपाक स्थानने प्राप्त करायेला कामगुणो विपाकमां किंपाक फलनी उपमावाळा छे अर्थात् किंपाक फळ अने कामगुणोनुं फळ भयंकरतानी विपाक दारुणतानी साम्यताए तुल्य छे एटले के बनेनो विपाक दारुण छे ॥१५॥

सव्वं विलवियं गीयं, सव्वं नट्टं विडंबियं ।

सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा

॥१६॥

गाथार्थ : सर्व गीत विलाप समान छे. सर्व नृत्य विडंबना प्राय छे. सर्व आभूषणो भार समान छे. सर्व कामो दुःखने वहन करनारा छे. ॥१६॥

भाषांतर : सर्व गीत निरर्थक होवाथी विलाप जेवा छे एटले के मत्त बालकना गीत जेवा निरर्थक छे. सर्व नृत्य विडंबना प्राय छे, जेम यक्षथी अधिष्ठित अने दारु आदि मादक द्रव्य पीधेलाना अंगना धमपछाडा विडंबना प्राय छे, तेम सर्व नृत्य विडंबना प्राय छे. सर्व आभूषणो भार समान छे, ते आ प्रमाणे-

कोईक श्रेष्ठिपुत्रने भार्या प्रिय हती, तेणी एक वार पोतानी सासु वडे घरना मध्यमांथी खल वाटवाना पत्थरने लाववा माटे बोलावाई, तेणी वडे कहेवायुं के अतिभारवाळा ते पत्थरने लाववा माटे हुं समर्थ नथी, तेथी तेना पतिए ते सांभळीने (विचार्युं के) अरे! आने शरीरना व्यायामना रक्षण माटे एटले शरीरने तकलीफ न पडे ते माटे खोटो अने वक्र उत्तर आप्यो छे, तेथी तेणीने शिक्षा करुं ए प्रमाणे विचारीने खल वाटवाना पत्थरने सुवर्ण वडे मठारीने तेणीने आप्युं अने तेणी वडे ते कंठनुं आभरण कराव्युं. एक दिवसे ते श्रेष्ठिपुत्र वडे स्मित करीने तेणीना ते वचनने याद कराव्युं. ते विलखी पडी गई. आ प्रमाणे सर्वे कामो दुःखने वहन करनारा छे अर्थात् दुःखने आपनारा छे. मृगादिनी जेम आगामी काळे दुःखना हेतु होवाथी अने नरकना हेतु होवाथी दुःखने वहन करनारा छे. जेम मृग गीतमां आसक्त थाय छे तो बंधन रूप दुःख पामे छे. तेम काममां आसक्त जीव दुःख पामे छे. ॥१६॥

देविंद-चक्कवट्टि-त्तणाइ रज्जाइ-उत्तमा-भोगा ।

पत्ता अणंतखुत्तो, न य हुं तित्ति गओ तेहिं

॥१७॥

गाथार्थ : देवेन्द्रपणामां चक्रवर्तिपणामां राज्यो अने उत्तम भोगो अनंत वार प्राप्त कराया (पण) ते भोगो वडे तृप्ति प्राप्त न थई. ॥१७॥

भाषांतर : हे जीव ! तारा वडे देवेन्द्रपणामां अने चक्रवर्तीपणामां राज्यो अने उत्तम-प्रधान भोगो अनंत वार प्राप्त कराया छे. श्लोकमां च न होवा छतां अध्याहारथी ग्रहण करवानो छे एटले राज्य अने उत्तम भोगो एम अर्थ करेल

छे. प्रकरणथी देवपणामां अने मनुष्यपणामां बनेमां लेवानुं छे. देवपणानी अने मनुष्यपणानी जातिनी अनंती वार प्राप्ति घटती होवाथी भोगो पण अनंत वार प्राप्त करायेला छे, ते घटे छे. कह्युं छे के- देवेन्द्रपणुं, चक्रवर्तिपणुं, तीर्थकरपणुं अने अणगारपणाना भावमां तीर्थकर भावने मूकीने बाकीना भावो अनंती वार प्राप्त कराया छे. हुं ए अव्यय पृच्छा अर्थमां छे एटले तुं पूछाय छे के ते राज्य अने भोगो वडे, तुं तृप्तिने नथी पाम्यो ? (सि. ८-२-१९७) सूत्रथी 'हूं' दान पृच्छा अने निवारण अर्थमां वपराय छे. दानमां अरे ग्रहण कर पोतानुं ज छे. पृच्छामां अरे ! सद्भावने कहे, निवारणमां अरे ! निर्लज्ज ! खस. ए प्रमाणे उदाहरण छे. ॥१७॥

संसार-चक्कवाले, सव्वे वि अ पुग्गला मए बहुसो ।

आहरिया य परिणा-मिया य न य तेसु तित्तोऽहं ॥१८॥

गाथार्थ : भवचक्रमां मारा वडे सर्वे पण पुद्गलो बहु वार भोगवाया अने परिणमाया (मूकाया) (तो पण) तेओने विषे हुं तृप्त थयो नथी. ॥१८॥

भाषांतर : संसार चक्रवालमां एटले के भवचक्रमां मारा वडे अनेक प्रकारनी योनिओमां भटकतां सर्वे पण घी वगरे पुद्गलो के जे पूरण, गलनना स्वभाववाळा छे. ते पुद्गलोनो बहु वार आहार कर्यो अर्थात् भोगव्या अने खल-रस भाव वडे परिणमाव्या तो पण ते घी आदि पुद्गलोमां हुं तृप्त थयो नथी. जेथी कह्युं छे के- हिमवंत पर्वत, मलय पर्वत, मेरु पर्वत, द्वीप, सागर अने पृथ्वीनी समान अथवा एनाथी पण अधिकतर एवो आहार भूख्या वडे खवायो होय (१) बाफ अने आतपथी पीडा पामेल वडे जेटलुं पाणी पीवायुं होय ते सर्वे कूवाओ, तळावो, नदीओ, समुद्रो जेटलुं पण न थाय अर्थात् तेनाथी अधिक थाय तो पण जीवने तृप्ति थई नथी. अनंत संसारमां भमतां एकबीजी माताओना स्तननुं एटलुं दूध पीधुं छे के जो तेनी गणत्री करवामां आवे तो सागरना पाणीथई पण अधिकतर थाय. (३) ॥१८॥

उवलेवो होइ भोगेसु, अभोगी नोवलिप्पइ ।

भोगी भमइ संसारे, अभोगी विप्पमुच्चई ॥१९॥

गाथार्थ : भोगो वडे करीने (आत्मा) लेपाय छे, अभोगी लेपातो नथी. भोगी संसारमां भमे छे, अभोगी मुक्त थाय छे. ॥१९॥

भाषांतर : 'भोगेसु' तृतीयाना स्थाने सप्तमी थयेली छे. भोगो वडे आत्मानो कर्मनी साथे आश्लेष-संबंध थाय छे. अर्थात् आत्मा भोगो वडे करीने कर्मथी बंधायेलो थाय छे. (सि. ८-३-१३५) सूत्रथी द्वितीया अने तृतीयाना स्थाने क्यारेक सप्तमी थाय छे. जेमके गाममां रहुं छुं, नगर तरफ जतो नथी. अहीं द्वितीयाना स्थाने सातमी थई छे. अने 'धुजती एवी मारा वडे मर्दन कराया' 'ते त्रण वडे पृथ्वी अलंकृत कराई छे.' अहीं तृतीयाना स्थाने सप्तमी थई छे.

अभोगी एटले के भोगोथी विराम पामेलो लेपातो नथी, कर्मथी लेपातो नथी. भोगी संसारमां भमे छे, अभोगी कर्मोथी मूकाय छे अर्थात् आत्मा कर्मोथी मूकाय छे. ॥१९॥

अल्लो सुक्को अ दो छूढा, गोलया मट्टियामया ।

दो वि आवडिआ कूडे, जो अल्लो सो तत्थ लग्गइ ॥२०॥

एवं लग्गंति दुम्मेहा, जे नरा कामलालसा ।

विरत्ता उ न लग्गंति, जहा सुक्के अ गोलए ॥२१॥

गाथार्थ : एक भीनो अने एक सूको एम बे माटीना गोळा कोई वडे भीत उपर फेंकाया. बने भीतने विषे पड्या एमांथी जे भीनो हतो, ते भीत उपर चोंटी जाय छे. ए ज प्रमाणे जे पुरुषो काममां लम्पट अने दुर्बुद्धिवाळा होय छे

ते (भीना गोळानी जेम) स्त्री आदिनी साथे लागे छे अने जेओ विरक्त होय छे, तेओ सूका गोळानी जेम लागता नथी. ॥२०-२१॥

भाषांतर : भीनो अने सूको एम बे गोळाकार माटीना गोळा कोईना वडे हाथथी भीत उपर फेंकाया. बंने भीत उपर पड्या, एमांनो जे भीनो गोळो हतो, ए भीतनी साथे चोटी जाय छे, ए ज प्रकार वडे जे लोको काम लालसावाळा एटले के काममां लम्पट होय छे, दुर्बुद्धि होय छे, तेओ स्त्रीओनी साथे जोडाय छे एटले के आसक्त थाय छे. ज्यारे जेओ विरक्त छे, तेओ शिवकुमारनी जेम स्त्रीओ वडे परिवरेला होवा छतां तेओने विषे रागनी बुद्धि करता नथी. कोनी जेम ? जेम सूको माटीनो गोळो भीत उपर नथी चोँटतो एम विरागी जीवो स्त्रीओ विषे राग करता नथी. ॥२०-२१॥

तणकट्टेहिं व अग्गी, लवणसमुद्रो नईसहस्सेहिं ।

न इमो जीवो सक्को, तिप्पेउं कामभोगेहिं

॥२२॥

गाथार्थ : तृण अने काष्ठ वडे जेम अग्नि, हजारो नदीओ वडे जेम लवणसमुद्र, तेम कामभोगो वडे आ जीव संतोष पमाडवा माटे शक्य नथी. ॥२२॥

भाषांतर : आ जीव कामभोगो वडे, आशा पूरवा वडे खुश करवा द्वारा संतोषवो शक्य नथी. कामभोगो वडे पण आ जीवनी आशा पूराती नथी. कोना वडे करीने कोनी जेम ? घास अने लाकडाना अनेक टुकडा वडे जेम अग्नि संतोषवो शक्य नथी अने हजारो नदीओ वडे एटले के उपलक्षणथी अनेक नदीओ वडे लवणादि समुद्रो संतोषाता नथी ते रीते आ जीव अनेक कामभोगो वडे संतोषातो नथी. ॥२२॥

भुतूण वि भोगसुहं, सुर-नर-खयरेसु पुण पमाणं ।

पिज्जइ नरएसु भैरव-कलकलतउतंब-पाणाइं

॥२३॥

गाथार्थ : वळी सुर नर अने खेचरना (भवोमां) प्रमाद वडे भोगसुखना अनुभव करनारने पण कालांतरे नरकमां भयानक 'कलकल' उकळता सीसा अने तांबानो रस पीवडावाय छे. ॥२३॥

भाषांतर : वळी निद्रा, विषयादि प्रमाद वडे सुर, नर अने विद्याधरोना (भवमां) भोगसुखने भोगवीने एटले के अनुभवीने पण केटलाक काळ पछी तो कर्मोनों उदय थवाथी नरकमां भैरव एटले के रौद्र, भयजनक 'कलकल' ए अनुकरण शब्द छे. एटले के उकळता एवा 'कलकल' ए प्रमाणे अवाजने मूकता एवा सीसु अने तांबाना पानीय - रस ते पीवडावाय छे. जे पीवाय ते पान, पानीय ॥२३॥

को लोभेण न निहओ, कस्स न रमणीहिं भोलिअं हिअयं ।

को मच्चुणा न गहिओ, को गिद्धो नेव विसएहिं

॥२४॥

गाथार्थ : लोभ वडे कोण नथी हणायो ? स्त्रीओ वडे कोनुं चित्त वशीकृत नथी करायुं ? मृत्यु वडे कोण ग्रहण नथी करायो ? विषयोमां कोण मूर्च्छा नथी पाम्युं ? (एटले के बधा ज) ॥२४॥

भाषांतर : लोभ वडे एटले के विविध वस्तुनी इच्छा वडे कोण नथी हणायो ? एटले के कोण व्यथा नथी पाम्यो ? कारण के लोभ सर्व दोषोमां अधिक दोष छे. जे भर्तृहरि वडे कहेवायुं छे के "जो लोभ (मोटो दुर्गुण) छे तो दुर्गुणो वडे शु ? जो चाडीयापणुं छे तो (अन्य) पापो वडे शु ? जो सत्य छे तो तप वडे करीने शु ? जो पवित्र मन छे तो तीर्थ वडे सर्युं, जो सौजन्य छे तो स्वजनो वडे सर्युं. जो स्वमहिमा छे तो आभूषणो वडे शु ? जो सद्विद्या छे तो धन वडे शु ? अने जो अपयश छे तो मृत्यु वडे शु ? (नीतिशतक गाथा ५५)

कया पुरुषनुं चित्त रमणीओ-स्त्रीओ वडे नथी भोळवायुं ? नथी मोहित करायुं ? अथवा वशीकृत नथी करायुं ? मृत्यु एटले के यमराजा वडे कोण ग्रहण नथी करायुं ? एटले के पोतानी दाढामां कोण नथी नंखायुं ? जेथी द्विपद, चतुष्पद, बहुपद के अपद, समृद्ध होय के निर्धन दरेकने, थाकेलो अने हताश थयेलो

यमदेव अपकार न कर्यो होय तो पण हरण करी ले छे. (१) यमराजाना नोकरो वडे दररोज लोको लई जवाते छते पण आखुं जगत स्वस्थ रहेलुं छे आथी वधारे शुं आश्चर्य ? (२) पोतानाथी के अन्यथी आ बाजुथी अने ते बाजुथी पोताने अभिमुख दोडती आपत्तिवाळा मनुष्योनी केवी निपुणता छे के तेना वडे क्षण माटे पण जीवाय छे. कारण के अतिभूख्या वडे अतिमधुर अने अल्प एवुं मोढामां मूकायेलुं फळ चवाया वगरनुं, बे दांतनी वच्चे केटलो काळ रही शके ? तात्पर्य ए के जेम आवी अवस्थामां फळ तरत ज चवाई जाय तेम संसारमां आटली आपत्तिथी घेरायेलो जीव केटलो काळ भाव मरणथी बची शके ? गाथामां 'विषरूहि' ए प्रमाणे सप्तमी विभक्तिना अर्थमां तृतीया विभक्ति करी छे. एटले के विषयोमां कोण आसक्त न थाय ? ॥२४॥

खणमित्तसुखा बहुकालदुक्खा, पगामदुक्खा अनिकामसुक्खा ।

संसार-मोक्खस्स विपक्खभूआ, खाणी अणत्थाण उ कामभोगा ॥२५॥

गाथार्थ : कामभोगो क्षण मात्र सुख आपनारा, घणा काल सुधीना दुःखने आपनारा, अतिशय दुःखवाळा, तुच्छ सुखवाळा, मोक्षने प्रतिकूल अने अनर्थोनी खाण ज छे. ॥२५॥

भाषांतर : क्षण मात्र जेटलुं ज सुख छे जेओमां एवा क्षण मात्र सुखवाळा, घणा काळ सुधी शरीर संबधी नरकादिमां दुःख छे जेनाथी एवा बहुकाल दुःखवाळा, प्रकाम एटले के अतिशय दुःखवाळा, अनिकाम एटले अप्रकृष्ट-तुच्छ सुखवाळा, संसारथी मोक्ष एटले के संसारथी वियोग छे जेमां ते संसारमोक्ष एटले के मुक्ति, ए मुक्तिने अटकावता होवाथी प्रतिकूल छे, माटे संसारमोक्षना विपक्षभूत छे. ॥२५॥

सव्वगहाणं पभवो, महागहो सव्वदोस-पायट्टी ।

कामग्गहो दुरप्पा, जेणऽभिभूअं जगं सव्वं ॥२६॥

गाथार्थ : जेना वडे आखुं जगत वशीकृत करायेलुं छे एवो काम नामनो ग्रह, सर्व उन्मादोनुं उत्पत्तिस्थान छे, मोटो उन्माद छे, सर्व दोषोने प्रवर्तावनार छे. ॥२६॥

भाषांतर : सर्वग्रहो नो प्रभव एटले के समस्त उन्मादोनुं उत्पत्तिस्थान, महाग्रह एटले के मोटो उन्माद अने सर्वदोषनो प्रवर्तक, सर्वदोष - परस्त्रीने आकर्षण विगरे जे दोषो तेनो प्रवर्तक एवो कोण छे ? कामग्रह-एटले के मदन वडे थयेलो चित्तनो भ्रम. वळी केवो छे ? दुरात्मा एटले दुष्ट स्वभाववाळो, जेना वडे आखुं जगत अभिभूत एटले के वशीकृत करायुं छे. ॥२६॥

जह कच्छल्लो कच्छुं, कंडुअमाणो दुहं मणइ सोक्खं ।

मोहाउरा मणुस्सा, तह कामदुहं सुहं बिति ॥२७॥

गाथार्थ : जेम खरजवाना रोगवाळो खरजवाने खणतो उत्पन्न थयेला दुःखने सुख माने, ते ज रीते मोहथी विट्ठवळ थयेला मनुष्यो कामथी जनित दुःखने सुख कहे छे. ॥२७॥

भाषांतर : जेम खरजवाना रोगवाळो खरजवाने नखादि वडे खणतो अने खणवाथी उत्पन्न थयेला दुःखने सुखरूप माने छे. तेवी ज रीते मोहातुर एटले के मदन जनित विपर्यास एटले के कामथी उत्पन्न थयेली विपरीत बुद्धि वडे विट्ठवळ थयेला मनुष्यो पण काम जनित दुःखने 'पोते संतुष्ट थयो' एम मानतो बीजाने सुख रूपे कहे छे. ॥२७॥

सल्लं कामा विसं कामा, कामा आसीविसोवमा ।

कामे य पत्थेमाणा, अकामा जंति दुग्गइं ॥२८॥

गाथार्थ : कामा ते शल्य छे, कामो विष छे. कामो सर्प जेवा छे. कामोनी प्रार्थना करता मनुष्यो अकामा एटले नहि पूरी

थयेली इच्छावाळा दुर्गतिमां जाय छे. ॥२८॥

भाषांतर : कामो ते शल्य-कांटा छे, कामो ते विष जेवा छे, जेम खवातुं एवुं झेर शरूआतमां मधुर लागे छे अने परिणतिमां दारुण एटले के मोत निपजावतुं होवाथी भयंकर छे, ए रीते आ कामो पण एवा ज छे. वळी कामो आशीविषनी उपमावाळा छे. आशी एटले दाढ अने दाढमां छे विष जेने ए आशीविष, एटले के सर्प तेनी उपमावाळा कामो छे. वळी कामने माटे प्रार्थना करता पण 'अकामा' एटले के नथी पूरी थती इच्छाओ जेनी; इच्छायेला कामोनो अभाव थवाथी अकाम एवा मनुष्यो द्रमकनी जेम दुर्गतिमां जाय छे, जे प्रमाणे-
आहार मेळववा माटे लोको उपर गुरसे थयेला भिखारीनी जेम भोगोने नहि भोगववा छतां मोहातुर मनुष्यो अधोगतिमां पडे छे. राजगृही नगरीमां महोत्सवमां लोको वैभारगिरि उपर रहेला उद्यानमां गये छते, भिक्षाने नहीं प्राप्त करतो एवो कोईक भिखारी आरक्षको पासेथी सांभळीने ते ज उद्यानमां गयो. त्यां पण लोको महोत्सवमां रक्त बनेला होवाथी लोकोना प्रमाद वडे नहीं प्राप्त थयेली भिक्षावाळो आ भिखारी लोको उपर तीव्र क्रोधवाळो थयो. आ बधा दुरात्मा लोकोने हुं चूरी नाखुं', ए प्रमाणे विचारतो ए पर्वत उपर चढ्यो. कोदाळी वडे मोटो पत्थर खोदीने काढ्यो, पोतानी उपर पडता एवा ते पत्थर वडे वधता एवा रोद्रध्यानवाळो एवो ते भिखारी ज चूराई गयो अने सातमी नरकमां गयो. लोको नाशी गया. ॥२८॥

विसए अवइक्खंता, पडंति संसार-सायरे घोरे ।

विसएसु निराविक्खा, तरंति संसार-कंतां

॥२९॥

गाथार्थ : विषयोनी अपेक्षा करता (मनुष्यो) घोर एवा संसाररूपी सागरमां पडे छे अने विषयोने विषे निरपेक्ष (मनुष्यो) संसाररूप अटवीने ओळंगी जाय छे. ॥२९॥

भाषांतर : विषयोनी अपेक्षा करता एटले के विषयना संगने करता मनुष्यो घोर एटले के रौद्र-भयंकर एवा संसारसागर - भवसमुद्रमां पडे छे. विषयोने विषे निरपेक्ष एवा मनुष्यो एटले विषयोमां रागने नहि करता संसाररूपी अटवीने तरे छे-ओळंगी जाय छे. सिद्धि रूपी महेलमां रहे छे. ॥२९॥

छलिआ अवइक्खंता, निरावइक्खा गया अविग्घेणं ।

तम्हा पवयणसारे, निरावइक्खेण होयव्वं

॥३०॥

गाथार्थ : (विषयोनी) अपेक्षा करता (मनुष्यो) ठगाया छे अने (विषयोने) विषे निरपेक्ष (मनुष्यो) विघ्न वगर (मुक्तिमां) गया छे ते कारणथी प्रवचनना सारने पामीने (संयम प्राप्त करीने) निरपेक्ष थवा योग्य छे. ॥३०॥

भाषांतर : 'विषयो' शब्द मूळमां न आपेलो होवा छतां जणातो होवाथी विषयोनी अपेक्षा राखता मनुष्यो ठगाय छे. एटले के मोक्षना सुखथी वंचित रखाय छे अने विषयोने विषे निरपेक्ष मनुष्यो विघ्न विना मुक्तिमां गया छे. ते कारणे प्रवचनसारमां एटले के जिनशासननो जे सार एटले के तत्व रूप जे संयम, ते संयमने प्राप्त करीने विषयोने विषे निरपेक्ष थवा योग्य छे. अहीं द्वितीयाना अर्थमां सप्तमी छे. ॥३०॥

विसयाविक्खो निवडइ, निरविक्खो तरइ दुत्तरभवोहं ।

देवीदीवसमागय-भाउअ-जुअलेण दिट्ठतो

॥३१॥

गाथार्थ : विषयनी अपेक्षावाळो (संसार समुद्रमां) पडे छे, विषयोनी अपेक्षा नहि राखतो दुःखेथी तरी शकाय एवा भवसमुद्रना प्रवाहने तरी जाय छे. देवीद्वीप उपर आवेला भ्रातृयुगलनुं अहीं दृष्टांत छे. ॥३१॥

भाषांतर : विषयोनी अपेक्षा राखतो (मनुष्य) संसार समुद्रमां पडे छे, अहीं संसार समुद्रने अध्याहारथी ग्रहण करवानुं छे. विषयमां निरपेक्ष एवो दुस्तरभवोघ एटले के दुःखेथी तरी शकाय एवा भव समुद्रना प्रवाहने तरी जाय छे.

जं अइतिक्खं दुक्खं, जं च सुहं उत्तमं तिलोयम्मि ।

तं जाणसु विसयाणं, वुडिढक्खय-हेउअं सव्वं

॥३२॥

गाथार्थ : त्रण लोकमां जे अति-तीक्ष्ण दुःख छे अने जे उत्तम सुख छे ते सर्व विषयोनी वृद्धि अने विषयोना क्षय रूप हेतुवाळा छे ते तु जाण. ॥३२॥

भाषांतर : जे अतितीक्ष्ण एटले के अति उग्र नरकादि विषयवाळुं दुःख अने जे उत्तम सुख त्रण एवा जे लोक ए त्रिलोक ते संबंधी त्रैलोक्य तेमां-ते सर्व (सुख अने दुःख) तुं जाण के विषयोनी वृद्धि अने क्षयना हेतुवाळा छे. एटले के वृद्धि अने क्षय ते वृद्धि क्षय अने ते बने छे हेतु जेमां ते वृद्धिक्षयहेतुक कहेवाय छे. तात्पर्य ए के विषयोनी वृद्धिमां अति तीक्ष्ण दुःख अने विषयोना क्षयमां उत्तम सुख छे. ॥३२॥

इंदिय-विसय-पसत्ता, पडंति संसारसायरे जीवा ।

पक्खि व्व छिन्नपंखा, सुशील-गुण-पेहुण-विहूणा ॥३३॥

गाथार्थ : इन्द्रियोना विषयोमां आसक्त, सुशीलवाळाना गुणोने नहि जोता एवा जीवो कपाई गयेली पांखवाळा पक्षीनी जेम संसार रूपी सागरमां पडे छे. ॥३३॥

भाषांतर : इन्द्रियना विषयोमां आसक्त संसार सागरमां पडे छे एटले के डूबे छे. केवा जीवो ? 'सुशील गुण पेहुण' एटले के सुंदर आचारवाळाना जे गुणो-संघ सत्कारादि तेओनुं जे जोवुं तेनाथी रहित. विषयोमां आसक्त जीवो सुशीलना गुणोने जोता नथी. केवा प्रकारना कोनी जेम ? (तेओ पडे छे ?) छेदाई गयेली पांखवाळा पक्षीओनी जेम. जेम छेदायेली पांखवाळा पक्षीओ पडे तेम आवा जीवो पण पडे छे. ॥३३॥

न लहइ ज हा लिहंतो, मुहल्लिअं अट्टिअं तहा सुणओ ।

सोसइ तालु य रसिअं, विलिहंतो मन्नए सुक्खं ॥३४॥

महिलाण कायसेवी, न लहइ किंचिवि सुहं तहा पुरिसो ।

सो मन्नए वराओ, सयकाय-परिस्समं सुक्खं ॥३५॥

गाथार्थ : जेम मोटा एवा हाडकाने चाटतो कूतरो सुख प्राप्ति नथी करतो पण ताळवामां रहेली लाळने ज चूसतो ए सुख माने छे, ते ज रीते स्त्रीओना शरीरने सेवनारो पुरुष जरा पण सुख प्राप्त करतो नथी, पण ते बिचारो तेना भोगथी पोताना देहने थता परिश्रम रूप दुःखने ज सुख मानी ले छे. ॥३४,३५॥

भाषांतर : जेम श्वान-हाडकुं खानारो - चाटतो महल्लियं एटले मोटा, स्वार्थमां 'इल्ल' प्रत्यय छे. अष्टि एटले कीकस, -हाडकु तेने खातो - चाटतो - सुखने तृप्तिने पामतो नथी कारण के हाडकाने चाटतो तालुना रसने घंटिकामां रहेली लाळने चूसे छे, तेने ज सुखरूपे माने छे, आत्माने सुखी माने छे. 'रस' एज 'रसिक स्वार्थमां ठन् (इक) प्रत्यय लाग्यो छे.

ते ज रीते महिला एटले स्त्रीओनो कायसेवी एटले तेओना शरीरना परिभोगने करतो पुरुष जराक पण एटले के अल्प पण सुखने प्राप्त करतो नथी 'पुरुष' शब्द एटला माटे के पुरुष उपदेशने योग्य छे अने पुरुषोनो ज तेनाथी (कायसेवनथी) पाछा फरवानो संभव होवाथी. अहीं अध्याहारथी ग्रहण करवानो होवाथी अने वळी ते बिचारो (स्त्रीकायसेवी) स्वकायना परिश्रमने एटले के तेना भोगमां पोताना शरीरनो जे खेद तेने ज सुखरूप माने छे. मोहने वश थयेलाने भ्रान्ति ज बधे विलसे छे. ॥३४, ३५॥

सुट्टुवि मग्गिज्जंतो, कत्थवि केलीइ नत्थि जह सारो ।

इंदियविसएसु तहा, नत्थि सुहं सुट्टु वि गविट्ठं ॥३६॥

गाथार्थ : जे रीते केळना झाडमां सारी रीते जोवाया छतां पण तेना कोई पण प्रदेशमां सार नथी (देखातो) ते ज रीते इन्द्रियना विषयोने विषे पण सारी रीते जोवाया छतां पण सुख नथी देखातुं. ॥३६॥

भाषांतर : जे रीते, कदलीने विषे सारी रीते पण एटले अतिशय रीते जोवाया छतां पण क्यांय पण कोई पण प्रदेशने

विषे सार एटले के बळ नथी, ते ज रीते इन्द्रियना विषयोमां पण सारी रीते जोवाया छतां गवेषणा करवा छतां क्यांय पण सुख नथी देखातुं. गवेषण् मार्गणे (हे. धातुपाठ १९१९) सूत्रमां मार्गणा अर्थमां गवेषण् धातु छे तथा कदलीनु प्राकृत कवली तथा केली थाय छे. ॥३६॥

सिंगार-तरंगाए, विलास-वेलाइ जुव्वण-जलाए ।

के के जयंमि पुरिसा, नारी-नईए न बुडुंति

॥३७॥

गाथार्थ : शृंगाररूपी तरंगोवाळी, विलासरूपी वेलावाळी, यौवन रूप जळवाळी एवी नारी रूपी नदीमां जगतमां कया कया पुरुषो नथी डूबता ? ॥३७॥

भाषांतर : आ प्रकारनी नारी रूप नदीमां कया कया पुरुषो जगतमां डूबता नथी ? सर्व पण पुरुषो स्त्रीने वश थनारा होय छे. जे कारणे भर्तृहरि वडे कहेवायुं छे के जो वच्चे दुस्तर एवी स्त्रीओ न होत तो हे संसार ! तारा निस्तारनी पदवी (मोक्ष) ते दूर नथी, ॥१॥ (शृंगारशतक) जेनो विचार हुं करुं छुं ते मारा विषे विरक्त छे, तेणी वळी अन्य जनने ईच्छे छे, ते जन अन्य उपर आसक्त छे. कोईक अन्य स्त्री वळी मारा माटे इच्छा करे छे खरेखर तेने धिक्कार थाओ, ते जनने, ते मदनने, आने (जेनो विचार हुं करुं छुं) अने मने पण धिक्कार थाओ. ॥२॥ (नीतिशतक गाथा) केवा प्रकारनी नारी रूपी नदीओमां डूबे छे ? शृंगार रूपी तरंगोवाळी एटले के शृंगार रूपी तरंगो छे जेणीमां एवी ते पतिपत्नीनुं परस्पर रतिनुं वारंवार वर्णन करवुं ते शृंगार कहेवाय. तथा विलास एटले के स्थिर रहेवानी के गमन करवामां जे विशिष्टता ते रूप जे वेला एटले के जळवृद्धि छे जेमां (जे नारी रूप नदीमां) ते तथा तेवीने विषे. वेला ते समुद्रमां ज होवा छतां वहेणवाळी (आगम सहितनी) नदीमां वेलानो असंभव नथी. तथा यौवन एटले के तारुण्य ते रूप जे जल ते छे जेमां (जे नारीरूपनदीमां ते तथा तेवीने विषे. कोण नथी डूबतो ? ॥३७॥

सोयसरी दुरिअदरी, कवडकुडी महिलिआ किलेसकरी ।

वयरविरोअणअरणी, दुक्खखणी सुक्ख-पडिवक्खा

॥३८॥

गाथार्थ : नारी ते शोकनी नदी, दुरितोनी गुफा, कपटनुं मंदिर, क्लेशने उत्पन्न करनारी, वैर रूपी अग्नि माटे अरणिना लाकडा जेवी, दुःखनी खाण अने सुखनी वैरिणी छे. ॥३८॥

भाषांतर : नारी आ प्रकारनी छे ए अध्याहार करवुं. केवी छे ? शोक एटले के इष्टना वियोगथी उत्पन्न थतुं मननुं दुःख तेनी नदी, एटले के शोक नारीमां हंमेशां प्रवर्त छे. आ दुष्ट शीलवाळी अर्थात् नहीं कहेलुं करनारी अथवा वन्ध्या छे विगेरे ए प्रमाणे जोवाती होवाथी तेने परणनारने पण शोक ज थाय छे. तथा दुरित एटले पाप तेनी दरी एटले कन्दरा (गुफा) छे, तथा कपटनी एटले कूटनी कुटी एटले मंदिर (कपटनुं स्थान) छे. जे कारणथी कह्युं छे के - मंत्र तंत्रमां निपुण एवा जेओ, देवो अने दानवोना मंत्रने मंत्रे छे, तेओना पण मंत्रो स्त्रीचरित्रना विषयमां क्यांय नाशी जाय छे. हवे स्त्रीओनी कपट नाटकनी चतुराई उपर आ कथानक छे. ते आ प्रमाणे - एक युवान पोताना घरेथी नीकळीने वैशिक (वैश्या संबंधी) कामशास्त्रने भणवा माटे पाटलिपुत्र तरफ चाल्यो. वच्चे कोई गाममां रहेली एक स्त्री वडे ते आ प्रमाणे कहेवायो. कोमळ एवा हाथ अने पग वडे सुंदर आकृतिवाळो एवो तुं क्यां जाय छे ? युवान वडे जेवुं हतुं तेवुं तेणीने कहेवायुं. तेणी वडे कहेवायुं 'वैशिक कामशास्त्रने भणीने मारी पासे आववुं. युवान वडे पण स्वीकारायुं. भणीने ते वच्चे पाछो आव्यो. तेणी वडे स्नान भोजनादि वडे सारी रीते सत्कार करायो. विविध हावभावो वडे हरण करायेला हृदयवाळो ते थयो छतो तेणीने हाथ वडे ग्रहण करे छे. तयार बाद तेणी ए मोटा अवाज वडे पोकार करीने लोक आववाना समये मस्तक उपर पाणीनी धार नाखी हांफळी फांफळी थयेली लोकोने कहे छे के आ गळामां लागेला गोदक नामना प्राणीथी जराकमां ते न मर्यो (रहेजमां बची गयो.) हवे झेर आगळ न वधे तेथी में पाणीथी भीजव्यो. लोको विखराया एटले तेणीए पूछ्युं केम भाई तें वैश्या संबंधी कामशास्त्रना मार्गदर्शनथी स्त्रीओना स्वभावने विषे शुं जाण्युं ? ए प्रमाणे स्त्रीनुं चरित्र दुःखे करीने जाणी शकाय एवुं छे. अहीं विश्वास करवा

योग्य नथी. अने कह्युं छे के - “हृदयमां जूदुं, वाणीमां जूदुं, कार्य वडे जूदुं अने वळी आगळ जूदुं पाछळ जूदुं, तने जूदुं अने मने पण जूदुं स्त्रीओनुं सर्व पण जूदुं” तथा क्लेशकरी एटले के क्लेशने उत्पन्न करनारी तथा वैर रूपी विरोचन एटले अग्नि, तेने उत्पन्न करवामां अरणि जेवी जे छे ते वैरविरोचनारणि. ‘अरणि, एटले अग्निने मथन करनारुं काष्ठ’, तथा दुःखोनी खाण एटले आकर. स्त्रीओने विषे आसक्त लोकोने दुःखो सुलभ ज छे. पातालसुंदरी उपर आसक्त थयेला सार्थवाहनी जेम. तथा सुखनी एटले के स्वर्ग-मोक्षसुखनी प्रतिपक्षा छे एटले के वैरिणी छे माटे स्त्रीने सुखप्रतिपक्षा कही छे. ॥३८॥

अमुणि-अमण-परिकम्मो, सम्मं को नाम नासिउं तरइ ।

वम्महसर-पसररोहे, दिट्टिच्छोहे मयच्छीणं

॥३९॥

गाथार्थ : स्त्रीओना मन्मथना बाणोना प्रसरता प्रवाह जेवो दृष्टिनो क्षोभ थये छते, नथी जाण्यो मननो परिकर्म जेणे एवो कोण नाशी जवा समर्थ थाय ? (कोई नहीं) ॥३९॥

भाषांतर : मृगाक्षीओ एटले के स्त्रीओनो दृष्टिक्षोभ, एटले दृष्टिनो अपांगसंचार (अस्वभाविक रीते दृष्टिने नांखवी) थये छते ‘को’ ‘कोण’ ए सर्वव्याप्तिने सूचनारी सामान्य उक्ति छे. ‘नाम’ ए कोमळ आमंत्रण माटेनो शब्द छे, सम्यक् (कुशलतापूर्वक) नाशवा माटे-पलायन थवा माटे शक्यमान छे ? कोईपण नहीं. बधा ज स्त्रीने वश थनारा होय छे ए भाव छे. जे शक्तिमान नथी ते केवो छे ? नथी जाण्यो मननो परिकर्म जेणे एटले के नथी जाण्यो स्त्रीना मननो व्यापार जेणे एवो. मननो व्यापार केवो छे ? मन हंमेशां स्त्रीमां ज प्रसार पामे छे. आवो मननो व्यापार जेणे जाण्यो नथी, ते स्त्रीना दृष्टिना क्षोभथी नाशी जवा माटे समर्थ नथी. कह्युं छे के-पुष्प, फळो, मंदिरा मांस, अने महिलाओना रसने जाणता एवा पण जे विरत छे (तेनाथी अटकेला छे) ते दुष्कर करनारने हुं वंदुं छुं. ए रीते ते जाणतो नथी के आ स्त्रीओनुं दर्शन थये छते मारुं शुं थशे ? जो स्त्रीओना आ प्रकारना मनोव्यापारने ते जाणतो होय, तो ए केवी रीते तेणीनो एवो दृष्टिसंचार थये छते त्यां रहे ? केवा प्रकारनो दृष्टिनो क्षोभ ? - मन्मथ एटले कामदेव, तेना शर एटले बाण, उन्मादन, मोहन, तापन, शोषण अने मारण ए नामना पांच बाणो, तेओना प्रसरनो ओघ एटले प्रवृत्तिनो प्रवाह छे जेमां एवो दृष्टिनो क्षोभ थये छते, त्यां ते केवी रीते रहे ? ॥३९॥

परिहरसु तओ तासिं, दिट्टिं दिट्टिविसस्स व अहिस्स ।

जं रमणी-नयणबाणा, चरित्तपाणा विणासंति

॥४०॥

गाथार्थ : जे कारणथी स्त्रीना नयनबाणो चारित्र रूपी प्राणोनो नाश करे छे. ते कारणथी दृष्टिविषसर्पना जेवी स्त्रीओनी दृष्टिने परिहर - त्याग कर. ॥४०॥

भाषांतर : ते कारणथी तेओनी एटले स्त्रीओनी दृष्टिनो त्याग कर एटले के तेओनी दृष्टिना विषयमां न जा. कोनी जेम ? दृष्टिविष सर्पनी दृष्टिनी जेम, जे रीते दृष्टिविष सर्पनी दृष्टिनुं विषयपणुं त्याग करवा योग्य छे ते ज रीते स्त्रीओनी दृष्टिनुं विषयपणुं पण त्याग करवा योग्य छे. तेमां कारण कहे छे - जे कारणथी नयन रूपी बाणोवाळी स्त्रीओ चारित्र रूपी प्राणोनो नाश करे छे. स्त्रीओ वडे कटाक्ष करायेला एवा कोण चारित्रनो त्याग नथी करता ? (बधा करे छे) ॥४०॥

सिद्धंत-जल-हिपारं-गओ वि विजिंदिओ वि सूरु वि ।

दढचित्तो वि छलिज्जइ, जुवइ-पिसाईहि खुट्टाहिं

॥४१॥

गाथार्थ : क्षुद्र एवी युवति पिशाचीओ वडे सिद्धान्त रूपी समुद्रने पार पामेलो पण, जितेन्द्रिय एवो पण, शूरवीर एवो पण, दृढचित्तवाळो पण (पुरुष) ठगाय छे. ॥४१॥

भाषांतर : आवा प्रकारनो पण पुरुष युवति रूपी पिशाचीओ वडे ठगाय छे. सन्मार्गथी दूर कराय छे. केवी स्त्रीओ वडे ? क्षुद्रा एटले छीछरी बुद्धिवाळी स्त्रीओ वडे. केवो पुरुष ? सिद्धांतरूपी समुद्रने पार पामेलो पण,

गाथामां 'पारंगओ' ए शब्दमां अलाक्षणिक म नो आगम छे. तथा विजित कराई छे एटले के वश कराई छे इन्द्रियो जेना वडे ते विजितेन्द्रिय एवो पण तथा शूर एटले के वीर एवो पण, तथा दृढचित्तवाळो पण पुरुष स्त्रीओ वडे टगाय छे ॥४१॥

मयणनवणीय-विलओ, जह जायइ जलणसं-निहाणंमि ।

तह रमणी-संनिहाणे, विद्वइ मणो मुणीणंमि ॥४२॥

गाथार्थ : जे रीते अग्निना संपर्कमां मीण अने माखण विलीन थई जाय छे, ते ज रीते रमणीना संनिधानमां मुनिनुं पण मन विद्रवे छे. ॥४२॥

भाषांतर : जे रीते अग्निनुं समीपपणुं होते छते, मदन अने नवनीत विलयने पामे छे एटले के मीण अने माखणनुं कठिनपणुं दूर थाय छे, ते ज रीते रमणीसंनिधानमां एटले के स्त्रीना संयोगमां मुनिओनुं पण मन विद्रवे छे, विलीन थाय छे. दृढपणुं छोडीने शिथिल थाय छे. ॥४२॥

नीअंगमाहिं सुपयो-हराहिं उप्पेच्छ-मंथरा-गईहिं ।

महिलाहि निमग्गाहि व, गिरिवर-गुरुआवि भिज्जंति ॥४३॥

गाथार्थ : जेम नीचे जनारी, सारा पाणीने धारण करनारी, मंथर गतिवाळी नदीओ वडे गिरिवर भेदाय छे, ते ज रीते ऊंचा लोकनो त्याग करीने नीच लोकनी साथे संयोग करनारी, पुष्ट पयोधरवाळी, ऊंचा थईने अत्यंत जोवा योग्य मंथरगतिवाळी स्त्रीओ वडे गिरिवर जेवा महान पुरुषो पण भेदाय छे. ॥४३॥

भाषांतर : आ प्रकारनी महिलाओ वडे नदीओनी जेम गिरिवर जेवा महान पण भेदाय छे. केवी महिलाओ वडे ? नीचगामिनी एटले के ऊंचा लोकनो त्याग करीने नीच लोकना संयोगने करती तथा शोभन एटले के पुष्ट पयोधर एटले के स्तन छे जेणीना एवी सुपयोधरवाळी तथा उत्प्रेक्ष्य एटले ऊंचा थईने प्रकर्ष वडे (अत्यंत रीते) अवलोकन करवा योग्य एवी, मंथर एटले के विलासवाळी गति छे जेओनी, एवी स्त्रीओ वडे महान पुरुष पण भेदाय छे. नदीओ पण ए ज रीते नीचे (नीचु वहेण होवाथी) जनारी होय छे, शोभन पयः सारा पाणीने धारण करनारी एटले सुपयोधरा अने मन्थर (धीमीधीमी) गतिवाळी होय छे. अहीं स्त्रीने नदीनी उपमा आपी छे. नीचे जनारी, सुपयोधरवाळी, मंथर गतिवाळी ए त्रणनी साथे अत्रे साम्यता बतावी छे. ॥४३॥

विसयजलं मोहकलं, विलासविज्जो अजलयराइत्रं ।

मयमयरं उत्तित्रा, तारुण्यमहन्नवं धीरा ॥४४॥

गाथार्थ : विषयो रूपी जळवाळा, मोह रूपी कल (मधुर अवाज) वाळा, विलास अने विव्वोक रूपी जळचरो वडे व्याप्त, मद रूप मगरो छे जेमां एवा तारुण्य रूपी महासमुद्रनो धीर पुरुषो पार पामे छे. ॥४४॥

भाषांतर : धीर एटले के मननी दृढताने धारण करनारा पुरुषो, आवा प्रकारना तारुण्य महार्णव एटले के यौवन रूपी समुद्र उत्तीर्ण करे छे एटले के तेना पारगामी (पार पामनारा) थाय छे.

केवा तारुण्य महार्णवने ? विषयो रूपी पाणी छे जेमां, तथा मोह रूप कल एटले के अव्यक्त मधुर अवाज छे जेमां, तथा विलास - स्थिर रहेवुं के गमन करवा आदिमां विशिष्टपणुं, विव्वोक एटले सौभाग्यना गर्वथी इष्टने विषे पण अवज्ञा अने विलास अने विवेक रूपी जलचरो माछला विगेरे तेओ वडे आकीर्ण एटले व्याप्त तथा मद जाति आदि आठ प्रकारनो ते मद रूपी मगरो जलचरविशेष छे जेमां एवा यौवनपणामां आ विषय, मोह, विलास, विव्वोक, मद नामना भावो होय छे. समुद्रमां पण जळ, कल (मधुर अवाज), जलचर, मगरो होय छे माटे तारुण्यमां समुद्रनुं साम्य प्राप्त करावायुं छे. कल शब्द जीण, रेतस् अने अव्यक्त मधुर अवाज ए प्रमाणे अनेक अर्थमां छे.

अहीं युवानीने समुद्र साथे सरखावी छे. युवानीमां विषय, मोह, विलास विव्कोक, मदना भावोने जल, कल, जलचर अने मगर साथे सरखाव्या छे. ॥४४॥

जइ वि परिचत्तसंगो, तवतणुअंगो तहावि परिवडई ।

महिलासंसर्गीए, कोसा-भवणोसियमुणि व्व ॥४५॥

गाथार्थ : जो के त्याग करायेला संगवाळो अने तप वडे कृश थई गयेला अंगवाळो होय तो पण कोशाना भवनमां रहेला मुनिनी जेम महिलाना संसर्गथी पडे छे. ॥४५॥

भाषांतर : जो के त्याग करायो छे स्त्रीओनो संग एटले के नजीक रहेवापणुं जेना वडे एवो, तथा तप वडे एटले के छट्ट, अट्टमादि करवा वडे जेनुं शरीर कृश-दुबळुं थई गयुं छे तेवो पण महिलाना संसर्गथी पडे छे एटले संयमथी भ्रष्ट थाय छे. ॥४५॥

सव्वगंगथ-विमुक्को, सीईभूओ पसंतचित्तो य ।

जं पावइ मुत्तिसुहं, न चक्कवट्टी वि तं लहइ ॥४६॥

गाथार्थ : सर्व ग्रन्थथी मुक्त थयेलो, शीतळ थयेलो, प्रशान्त चित्तवाळो एवो (साधु) जे मुक्तिसुखने पामे छे ते सुख चक्रवर्ती पण नथी पामतो. ॥४६॥

भाषांतर : आ प्रकारनो साधु जे मुक्तिसुख प्राप्त करे छे. मुक्ति एटले निर्लोभता अने तेनुं ज सुख ते मुक्तिसुख. ते (सुख) चक्रवर्ती पण चोसठ हजार स्त्रीओना परिभोगमां आसक्त एवो पण नथी पामतो. केवो साधु ? सर्व ग्रन्थथी-बाह्य-अभ्यंतर परिग्रहथी मुक्त एटले तेनाथी रहित, बंधाय छे आत्मा जेना वडे ते ग्रन्थ, बाह्य परिग्रह ते धन, धान्य, हिरण्य, द्विपद, चतुष्पदादि अने अभ्यंतर वळी मिथ्यात्व, स्त्री, पुरुष, नपुंसक ए त्रणे वेद, हास्य, रति, अरति, भय, शोक अने जुगुप्सा ए छ, कोध, मान, माया अने लोभ ए चार एम चौद अभ्यंतर ग्रन्थि जाणवी (अने वळी केवो ?) तथा शीतीभूत एटले के रागादिनी उत्पत्तिथी रहित जे शीतळता तेने प्राप्त थयेलो, प्रशान्तचित्त ते उदय पामेला कषायोने निष्कळ करवा वडे (उपाशान्त थयेलो एवो साधु) मुक्तिसुखने प्राप्त करे छे. ॥४६॥

खेलंमि पडिअमप्यं, जह न तरइ मच्छिआ विमोएउं ।

तह विसयखेल-पडिअं न तरइ अप्यंपि कामंधो ॥४७॥

गाथार्थ : जेम श्लेष्म (कफ)मां पडेली माखी पोताने एमांथी छूटी करवा समर्थ नथी थती ते ज रीते कामांध पुरुष विषय रूपी श्लेष्ममां पडेलो पोताना आत्माने तेमांथी उद्धरवा समर्थ थतो नथी. ॥४७॥

भाषांतर : जे रीते मक्षिका (माखी) श्लेष्म एटले खट (कफ)मां पडेला पोताना शरीरने श्लेष्ममांथी छूटुं करवा समर्थ नथी थती, ते ज रीते कामांध पुरुष विषय रूपी श्लेष्ममां पडेला पोताना आत्माने तेमांथी विमोचन करवा एटले के उद्धार करवा माटे समर्थ थतो नथी. एटले के विषयनो राग होवाथी आत्माने तेनो त्याग कराववा माटे (विषयोने जीतवा माटे) समर्थ थतो नथी. ॥४७॥

जं लहइ वीअराओ, सुक्खं तं मुणइ सुच्चिय न अत्रो ।

न हि गत्ता-सूअरओ, जाणइ सुरलोइअं सुक्खं ॥ ४८॥

गाथार्थ : जे सुख वीतराग प्राप्त करे छे ते सुखने ते ज (वीतराग) जाणे पण अन्य नहि. खाबोचियामां रहेलुं भूंड-डुक्कर ते देवलोकना सुखने निश्चे नथी जाणतुं. ॥४८॥

भाषांतर : वीतराग एटले के चाली गई छे विषयो उपरनी रागनी बुद्धि जेनी एवो जे, सुखने एटले के आह्लादने प्राप्त करे छे ते सुख ते ज, एटले वीतराग ज प्राप्त करे छे (जाणे छे) पण बीजो नहीं एटले वीतराग सिवायनो

बीजो नथी जाणतो. खाडामां रहेलो डुक्कर सुरलोकमां थतुं ते सौरलौकिक 'अनुशक्तिकादि गणपाठनो होवाथी उभयपदवृद्धि' थई छे. - सौख्य एटले स्वर्ग संबंधी सुखने जाणतो नथी. ॥४८॥

जं अज्जवि जीवाणं, विसएसु दुहासवेसु पडिबंधो ।

तं नज्जइ गुरुआण वि, अलंघणिज्जो महामोहो ॥४९॥

गाथार्थ : जे कारणथी हजी पण दुःखोना आश्रव रूप एवा विषयोने विषे जीवोने जे प्रतिबंध (प्रवृत्तिनुं सातत्यपणुं) छे, ते कारणथी जणाय छे के मोटाओने पण महामोह ते अलंघनीय छे. ॥४९॥

भाषांतर : जे कारणथी आजे पण एटले के विषयथी विरक्तताने उत्पन्न करनारा श्री जिनागमना श्रवण वडे वासित थयेलुं अंतःकरणपणुं होते छते पण, जीवोना दुःखाश्रव रूप एटले के दुःखो आश्रवे छे, प्रवेश करे छे जेनाथी ते दुःखाश्रवो अर्थात् दुःखोना उपादान (मुख्य) कारणभूत एवा प्रकारना विषयोने विषे जे प्रतिबंध एटले के सातत्य वडे (निरंतर) प्रवृत्ति छे, ते कारणथी जणाय छे के मोटाओने एटले के महाशयोने पण महामोह ते अलंघनीय एटले के दुःखे करीने उलंघन कराय (जीती शकाय) एवो छे. महामोहनुं बळवत्तरपणुं होवाथी मोटाओने पण विषयोथी विरति थती नथी. जे कारणथी कह्युं छे के इन्द्रियोमां रसना, कर्मांमां मोहनीय कर्म, तथा व्रतोमां ब्रह्मव्रत गुप्तिओमां मनोगुप्ति ते चारे य दुःखे करीने जीताय छे.

जेम मस्तकने विषे रहेली सोय (वृक्षनो अग्र भाग) हणाय छते तालवृक्ष हणाय जाय छे तेम मोहनीय क्षय पामे छते बधा कर्मां हणाय छे. ॥४९॥

जे कामंधा जीवा, रमंति विसएसु ते विगयसंका ।

जे पुण जिणवयणरया, ते भीरु तेसु विरमंति ॥५०॥

गाथार्थ : जे कामान्ध जीवो छे तेओ शंका रहित थता विषयोमां रमे छे. जे वळी जिनवचनमां रत छे तेओ भीरु थयेला विषयोथी विराम पामे छे. ॥५०॥

भाषांतर : जे कामान्ध जीवो एटले के जन्तुओ विगत शंकावाळा अर्थात् शंका रहित थयेला छे तेओ निःसंशयपणे विषयोमां रमे छे एटले के राग करे छे. जेओ वळी जिनवचनमां रत एटले के तीर्थकर वडे उपदेश करायेला आगमने सेवनारा छे तेओ, भीरुं एटले के संसार सागरथी गभरायेला छे तेओ, तेथी एटले ते विषयोथी विराम पामे छे, पाछा फरे छे. 'तेसु' ते पंचमीना अर्थमां सप्तमी करी छे. ॥५०॥

असुइ-मुत्त-मल-पवाह-रुवयं, वंत-पित्त-वस-मज्ज-फोफसं ।

मेय-मंस-बहुहड्ड-करंडयं, चम्म-मित्तपच्छाइयं-जुवइ अंगयं ॥५१॥

मंसं इमं मुत्त-पुरीस-मीसं, सिंघाण-खेलाईय-निज्जरंतं ।

एअं अणिच्चं किमिआण वासं, पासं नराणं मइबाहिराणं ॥५२॥

गाथार्थ : मतिबाह्य एवा पुरुषोने अशुचि मूत्रमळना प्रवाहरूप, वमन, पित्त, मांस, चरबी, फेफसावाळुं, मेद, मांस अने घणा हाडकाना करंडिया रूप, चामडी मात्र वडे ढंकायेलुं, साक्षात् मांसना पिंड जेवुं, मूत्र अने पुरीषथी मिश्रित थयेलुं, श्लेष्मकफादि अशुचिने झरतुं, अनित्य, कृमीओनुं रहेठाण, एवुं युवतिनुं अंग ते पाश (बन्धन) छे. ॥५१-५२॥

भाषांतर : मतिबाह्य अर्थात् तत्त्वबुद्धिथी रहित एवा पुरुषोने आ युवतिनुं अंग-शरीर ते पाश छे एटले पगने बांधनारी ग्रन्थि जेवुं छे. जे कारणथी कह्युं छे के हाथीओने पाणी, माछलाने जाळ, हरणने वग्गुरा, पक्षीओने पाश अने पुरुषोने स्त्रीओ अहीं बंधन छे.

केवुं युवतिनुं अंग पाश छे ? अशुचि मूत्रमळना प्रवाहरूप - अशुचि-अपवित्र मूत्र एटले प्रस्राव, मल ते

વિષ્ટા એનો જે પ્રવાહ અર્થાત્ નિરંતર પ્રવૃત્તિ તે રૂપ અંગ છે. મલ શબ્દ વહી અઘ, કિટ્ટ, કદર્ય, વિષ્ટા એમ અનેક અર્થમાં છે. (૨-૫૧૭) તથા 'વાન્તપિત્તવસામજ્જા પુષ્પમ્' વાન્ત એટલે વનમ પિત્ત એટલે માયુ અથવા પીવાય છે જલ્લ આના વહે તે પિત્ત અથવા પહે છે તે પિત્ત, વસા એટલે માંસથી ઉત્પન્ન થયેલ ચરબી, મજ્જા એટલે હાડકાની ચિકાશ, પુષ્પસ તે હૃદયના ડાબા પહચે લોહીના ફેનથી થયેલો માંસનો ઁંડ તે બધાનો દ્વન્દ્વ સમાસ તે વાન્તપિત્તવસામજ્જાપુષ્પસ, તે છે જેમાં એવું (અંગ) તથા મેદ તે માંસ અને મેદસ્નો અવસ્થા વહે કરાયેલો મેદ. માંસ તે પલલ અને ઘળા હાડકા એટલે કીકસ, તેઓનો કરંડક એટલે કે આધાર છે. કરંડક એટલે પુષ્પાદિનો આધાર એવો અર્થ લિંગાનુશાસનની ટીકામાં કરેલ છે. તથા ચર્મમાત્ર વહે ચામડી વહે જ આચ્છાદિત એટલે કે વીંટલાયેલું છે. તથા યુવતિનું અંગ માંસનો જથ્થો હોવાથી સાક્ષાત્ માંસપિંડ જ છે. તથા 'મૂત્ર પુરીષ મિશ્ર' એટલે મૂત્ર અને વિષ્ટાથી યુક્ત અહીં મૂત્ર વિષ્ટાનું ફરીથી કથન કર્યું તે અતિ જુગુપ્સાને દેખાડવા માટે છે. તથા સિંઘાળ - શ્લેષ્માદિ તેને નિજ્ઞરતું તે અતિશય ઝરતું, ગલ્લતું. ધાતુના છ આદેશો થાય છે. (સિ. ૮-૮-૧૭૩) સૂત્રથી - ઁરરઙ્, ઝરરઙ્, પજ્ઞરરઙ્, પચ્ચસઙ્, નિચ્ચલઙ્, નિટ્તુઅઙ્ એ પ્રમાણે સિંઘાળ તે નાકમાં થતો મલ તથા અનિત્ય અર્થાત્ અશાશ્વત તથા કૃમી તે ક્ષુદ્ર (નાના) જન્તૂઓનો વાસ, રહેઠાળ છે. ॥૫૧-૫૨॥

પાસેળ પંજરેળ ય, બજ્ઞંતિ ચરુપ્પયા ય પક્ષી ય ।

ઇય જુવઙ્-પંજરેળં, બઙ્ઘા પુરિસા કિલિસ્સંતિ ॥૫૩॥

ગાથાર્થ : પાશ વહે ચતુષ્પદ અને પાંજરા વહે પક્ષી બંધાય છે. એ રીતે યુવતિ રૂપી પાંજરા વહે બંધાયેલા પુરુષો ક્લેશને અનુભવે છે. ॥૫૩॥

ભાષાંતર : પાશ વહે અર્થાત્ બન્ધનગ્રન્થિ વહે, પંજર એટલે કે લીતંસ વહે અનુક્રમે ચતુષ્પદ મૃગાદિ અને પક્ષીઓ-વિહગો બંધાય છે એટલે કે નિયંત્રિત કરાય છે. એ જ રીતે યુવતિ રૂપી પાંજરા વહે બંધાયેલા વશીકૃત થયેલા પુરુષો ક્લેશને અનુભવે છે. સ્ત્રીઓથી છૂટતા નથી. ॥૫૩॥

અહો ! મોહો મહામલ્લો, જેળ અમ્હારિસા વિ હુ ।

જાળંતા વિ અણિચ્ચત્તં, વિરમંતિ ન ઁળં પિ હુ ॥૫૪॥

ગાથાર્થ : ઁરેઁર (આશ્ચર્ય છે કે) મોહ તે મહામલ્લ છે, જે કારણથી અનિત્યત્વને જાળતા એવા અમારા જેવાઓ પળ નિશ્ચે ક્ષળ માટે પળ (સ્ત્રીઆદિના સંગથી) વિરામ નથી પામતા.

ભાષાંતર : 'અહો' શબ્દ આશ્ચર્ય અર્થમાં છે. મોહ એટલે મોહનીય કર્મ, મહામલ્લ અર્થાત્ મહાબલી છે. મલ્લ શબ્દ કપાલ, બલી, મત્સ્ય, પાત્ર (૨-૫૧૭) એમ અનેક અર્થમાં છે. (અભિધાન ચિંતામણિ) જે કારણથી અમારા જેવા પળ અર્થાત્ સકલ શાસ્ત્રના અવબોધ વહે શરીરાદિના અનિત્યપણાને જાળતા એવા પળ ક્ષળ માટે પળ સ્ત્રી આદિના સંગથી વિરામ નથી પામતા, પાછા નથી ફરતા. 'હું' શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં છે. મોહ તે દુઁઁ કરીને ત્યાગ કરી શકાય એવો છે. જે કારણે કહ્યું છે કે મસ્તક મુંડ છે, આ મુઁ અનિષ્ટ ગંધવાલું છે, વરાક એવા આ પેટનું ભરણ ભિક્ષા માટે ફરવા વહે થાય છે, મેલ વહે મલિન અને ચાલી ગયેલી સર્વ શોભાવાલું આઁ શરીર છે તો પળ આશ્ચર્ય છે કે મનને હજી કામની ઁચ્છા છે. ॥૫૪॥

જુવઙ્હિ સહ કુળંતો, સંસર્ગિં કુળઙ્ સયલદુઁઁહિં ।

નહિ મુસગાળં સંગો, હોઙ્ સુહો સહ બિડાલીહિં ॥૫૫॥

ગાથાર્થ : યુવતીઓની સાથે સંસર્ગને કરતો (પુરુષ) સકલ દુઁઁઓની સાથે સંસર્ગ કરે છે, જે કારણથી બિલાડીઓનો સંસર્ગ ઁંદરોને ક્યારેય સુઁકર નથી હોતો. ॥૫૫॥

ભાષાંતર : યુવતીઓની સાથે સંસર્ગ એટલે કે સંબંધને કરતો સકલ દુઁઁઓની સાથે સંસર્ગ કરે છે. યુવતિના સંબંધમાં તપ; શીલ વ્રતાદિના ભંગથી બધા દુઁઁઓ થાય છે. જે કારણે કહ્યું છે કે શયન ઘરમાં પ્રસરતો એવો યુવતિજનને વિષે

सद्भाव, विश्वास, स्नेह, रतिनो व्यतिकर, ते तप, शील अने व्रतादिने फोडे (भांगे) छे. जे कारणथी बिलाडीओनी साथे मूषक एटले आखुओनो संग एटले के संयोग निश्चे सुखकर नथी होतो. ॥५५॥

हरिहर-चउराणण-चंद-सूर-खंदाइणोवि जे देवा ।

नारीण किंकरत्तं, कुणंति धिद्धि विसयतन्हा

॥५६॥

गाथार्थ : जे कारणथी हरि, हर, चतुरानन, चन्द्र, सूर्य, स्कंदादि जे देवो पण, नारीनुं किंकरपणुं (दासत्व) करे छे. ए विषतृष्णाने धिक्कार थाओ. ॥५६॥

भाषांतर : हरि, हर, चतुरानन चंद्र, सूर्य, स्कंदादि देवो पण स्त्रीओनुं किंकरत्व एटले दासत्व करे छे. धिक्कार छे एवी विषयनी तृष्णाने अर्थात् इन्द्रियोनी अर्थलोलताने लौकिक मते ज आ बधा देवो छे अने तेओ स्त्रीओ वडे जुदा जुदा प्रकारे नचावाया छे. तमां हरि एटले नारायण (कृष्ण) तेनुं वळी स्त्रीनुं परवशपणुं रुक्मिणीना पाणिग्रहणना अवसरे जाणवा योग्य छे अने क्रीडानी लोलता वडे गोपीओने विषे तेना ते ते छेडतीना प्रकारो लौकिक प्रसिद्धपणा वडे अनेक प्रकारे जाणवा. ॥५६॥

सिअं च उण्हं च सहंति मूढा, इत्थीसु सत्ता अविवेअवंता ।

इलाइपुत्त व्व चयंति जाइं, जिअं च नासंति य रावणु व्व ॥५७॥

गाथार्थ : स्त्रीओमां आसक्त एवा अविवेकी मूढ पुरुषो टंडी अने गरमीने सहन करे छे, इलाती पुत्रनी जेम जातिनो त्याग करे छे अने रावणनी जेम जीवनो पण नाश करे छे. ॥५७॥

भाषांतर : स्त्रीओने विषे आसक्त - अभिष्वंगवाळा (रागवाळा) मूढ अर्थात् मूर्ख पुरुषो शीत वेदना अने उष्णवेदनाने सहन करे छे. तेओ केवा छे ? - अविवेकवंत - विवेकथी विकल अने स्त्रीमां आसक्त एवा इलातीपुत्रनी जेम जाति अर्थात् पोतानी सुकुलमां उत्पत्ति रूप जे जाति तेनो त्याग करे छे. जे रीते इलातीपुत्र वडे पोतानुं कुल त्याग करीने, नाटक करीने, आजीविका चलावनारा नटोनुं सेवकपणुं आदर करायुं ते प्रमाणे अन्य पुरुषो पण जाति आदिनो त्याग करे छे. त्यां इलातिपुत्रनुं दृष्टांत आ प्रमाणे-

एक धिक्जातीये (ब्राह्मण) स्थिर थयेला स्थविरोनी पासे धर्मने सांभळीने पत्नी सहित दीक्षा ग्रहण करी. बंने उग्रमां उग्र प्रव्रज्याने करे छे पण परस्पर प्रीति ओछी थती नथी. पत्नी ते ब्राह्मणपत्नी छुं ए प्रमाणे जराक गर्वने पण वहन करती हती. मरीने देवलोकमां गया. आयुष्य अनुसार भोग भोगव्या. आ बाजु ईलावर्धन नगरमां ईलादेवी हती. पुत्रने इच्छती एवी एक सार्थवाहपत्नी ते देवताने सेवे छे. ते ब्राह्मण च्यवीने तेणीनो पुत्र थयो. तेणीए 'इलातीपुत्र' ए प्रमाणे नाम कर्युं. ब्राह्मणनी पत्नी पण जातिगर्वना दोष वडे त्यांथी च्यवेली लंखगकुलमां (नटकुल) उत्पन्न थई. बंनेए यौवन प्राप्त कर्युं. एक वखत इलापुत्र वडे ते लंखपुत्री जोवाई. पूर्वभवना राग वडे ते रागवाळो थयो. सुवर्ण वडे तोलीने मांगी तो पण ते मळी नहि. तेओ बोल्या आ लंखपुत्री अक्षयनिधि छे. जो तुं शिल्पने शीखे अने अमारी साथे फरे तो तने मळे. ते तेओनी साथे फर्यो अने शीख्यो. त्यारे "विवाहना निमित्ते राजाना प्रेक्षणक (नाटक)ने कर" ए प्रमाणे कहेवाये छते बेन्नातट नगरमां गया. त्यां अन्तःपुर सहित राजा जुए छे. ईलापुत्र क्रीडा करे छे. राजानी दृष्टि लंखपुत्री (नटी) उपर पडी. राजा धन नहीं आपते छते अन्य लोक पण आपता नथी. वाह, वाह एवो अवाज वर्ते छे. ते कहेवायो हे लंख! पतनने कर. हवे पतन एटले आ प्रमाणे - वंशना शिखरे तीर्छुं लाकडुं स्थापन कराय. ते लाकडानी बंने बाजु बे बे खीलीओ स्थपाय ते स्थापना आ रीते. ते इलापुत्र पगमां पादुका पहेरे. ते बंने पादुकाओ तलियाना मध्यभागमां एक एक छिद्रथी युक्त छे. त्यार बाद आ इलापुत्रे तलवारनी मुट्ठी वडे व्यग्र हाथवाळा एवा तीर्छा लाकडाना मध्यभागमां रहीने आकाशमां ऊडी छलांग मारीने पादुकानी नलिकामां ते कीलिका प्रवेश करावानी, ए रीते सात वार आगळ तरफ अने सात वार पाछळ पगने मूकीने आ रीते पादुकाना छिद्रमां कीलिकाने प्रवेश करावाय त्यारे पतन नामनी क्रीडा पूरी थाय. जो ए चूके तो त्यांथी पडेला तेना सेंकडो खंड थई जाय. इलापुत्र वडे ते करायुं. राजा नटीने जुए छे. लोको वडे कलकल अवाज करायो. राजा

आपतो नथी. राजा विचारे छे के जो मरी जाय, तो हुं आ नटीने परणुं. अने कहे छे के नथी जोवायुं. वळी पाछुं करायुं त्यारे पण 'नथी जोवायुं', त्रीजी वार करायुं त्यारे पण 'नथी जोवायुं', चौथी वारमां कहेवायो के 'फरीथी कर'. इलापुत्र विरक्त थयो, त्यारे ते इलापुत्र वंशना अग्रभाग उपर रहेलो विचारे छे. "भोगोने धिक्कार थाओ. आ राजा आटली राणीओ वडे तृप्त नथी. आ लंखपुत्रीनी साथे लागवानी इच्छा करे छे. आ स्त्रीना कारणे मने मराववाने इच्छे छे. अने ते त्यां रहेलो एक श्रेष्ठीना घरमां सर्व अलंकारवाळी स्त्रीओ वडे प्रतिलाभ करता (वहोरावाता) साधुने जुए छे. साधुने विरक्तपणा वडे जुए छे. त्यारे विचारे छे के अहो ! विषयोने विषे निःस्पृह लोकोने धन्य छे. हुं श्रेष्ठीपुत्र छुं. तो पण आ अवस्था छे. त्यां ज वैराग्यने पामेला एने केवलज्ञान उत्पन्न थयुं. ते नटीने पण वैराग्य, केवलज्ञान उत्पन्न थयुं, राजानी अग्रमहिषी (पटराणी)ने पण अने राजाने पण ते ज रीते वैराग्य अने केवलज्ञान उत्पन्न थयुं. ए रीते ते चारे पण केवली थया अने सिद्ध पण थया. आ प्रमाणे 'असक्कारेण सामाइयं लब्धइ' ए अधिकारमां स्त्रीने वश गयेला इलापुत्र वडे पोतानुं कुल पण त्याग करायुं. अने वळी स्त्रीने वश पामेला रावणनी जेम जीवितव्यनो नाश करे छे. जे कारणे कहुं छे के देव, मानव, दानव जेवा पराक्रमवाळो पण परस्त्रीनो रसियो एवो लंकाधिपति रंकनी जेम विषमदशाने प्राप्त थयो. ते आ प्रमाणे श्री रावण सीताना अपहरण वडे रावण-लक्ष्मणना संग्राममां विभीषणादि बन्धु वर्गथी वियोग काराईने ते प्रकारना जगतने जय करवा वडे प्राप्त थयेली उर्जस्वि साम्राज्य रूपी लक्ष्मीथी परिभ्रष्ट थयेलो रंकनी जेम यमराजाना अतिथिपणाने प्राप्त थयो. जे कारणे कहुं छे के - जो तमने जीवित व्हालुं छे तो परस्त्री संगनो त्याग करो आश्चर्यनी वात छे के वानर सेनाना इन्द्र एवा रामनी पत्नी सीताने माटे रावणना दश मस्तको आळोटे छे. ॥५७॥

वुत्तूण वि जीवाणं, सुदुक्करायंति पावचरियाइं ।

भयवं जासा सासा, पच्चाएसो हु इणमो ते

॥५८॥

गाथार्थ : जीवोना पापचरित्रो कहेवा माटे पण अतिदुष्कर छे. 'भयवं जा सा सा सा ए अहीं दृष्टांत छे. ॥५८॥

भाषांतर : जीवोना पापचरित्रो दुष्चेष्टितो कहेवा माटे पण सुदुष्कर अर्थात् सारी रीते दुःशक्य छे. 'भगवान् जेणी ते छे तेणी ते छे ? एना वडे दृष्टान्तने सूचवता शिष्यने कहे छे. प्रत्यादेश एटले दृष्टान्त - वसंतपुरमां अनंगसेन नामनो सुवर्णकारनुं दृष्टान्त छे. ॥५८॥

जलल-वतरलं जीअं, अथिरा लच्छी वि भंगुरो देहो ।

तुच्छा य कामभोगा, निबंधणं दुक्ख-लक्खाणं

॥५९॥

गाथार्थ : जळना बिन्दु जेवुं चंचळ जीवन छे, लक्ष्मी पण अस्थिर छे, देह भंगुर (नाशवंत) छे, कामभोगो पण तुच्छ छे अने लाखो दुःखोनुं कारण छे. ॥५९॥

भाषांतर : जळना लवनी जेम अर्थात् तृणना अग्र भाग उपर रहेला झाकळना बिन्दु जेवुं तरल एटले के चपळ जीवितव्य छे. लक्ष्मी पण अस्थिर छे तथा देह-शरीर भंगुर छे. स्वयं ज भांगी जाय ए प्रमाणेनो स्वभाव छे जेनो ते भंगुर, स्वयं ज विनाश पामवाना स्वभाववाळुं. । भज्जभासमिदोधुरच् कम्मकर्त्तरि शीलार्थे ए सूत्रथी भज्ज धातुने घुरुच प्रत्यय शील अर्थमां छे वळी कामभोगो तुच्छ एटले के असार छे, अल्प काळ माटे ज रहेता होवाथी असार कह्या अने लाख दुःखोनुं कारण छे. जे कारणे कहुं छे के महर्षिओ वडे शास्त्रमां कामभोगो नालिकातप्तकणक प्रवेशना दृष्टान्तथी जीवना बाधक कहेवायेला छे. आ अधर्मनुं मूल छे, भवभावने वधारनारा छे, तेथी पापने नहि इच्छता एवा वडे विष मिश्रित अन्ननी जेम कामभोग त्याग करवा योग्य छे. ॥५९॥

नागो जहा पंक-जलावसन्नो, दट्टुं थलं नाभिसमेइ तीरं ।

एवं जिआ कामगुणोसु गिद्धा, सुधम्म-मग्गे न रया हवंति ॥६०॥

गाथार्थ : जेम कादववाळा पाणीमां खूपेलो हाथी स्थळने जोतो छतो किनाराने पण प्राप्त नथी करी शकतो ते ज रीते कामभोगने विषे आसक्त (गृद्ध) एवा जीवो सुंदर धर्मना मार्गने विषे रत (आसक्त) नथी थता. ॥६०॥

भाषांतर : नाग एटले के हाथी, जे रीते, पंक-कादव छे मुख्यताए जेमां एवुं पाणी ते पंकजल, तेमां अवसन्न अर्थात् निमग्न थयेलो स्थळने जोतो छतो तीर एटले के किनाराने प्राप्त करतो नथी. 'अपि' नो अर्थ अध्याहारथी ग्रहण करवानो होवाथी स्थळ तो दूर रहो पण तीर-किनाराने पण प्राप्त करतो नथी. ए प्रमाणे कामभोगने विषे गृद्ध अर्थात् आसक्त जीवो सुधर्ममार्ग-सुंदर, सारा एवा धर्म मार्गने विषे रत एटले के आसक्त थता नथी. ॥६०॥

**जह विट्टु-पुंज-खुत्तो, किमी सुहं मन्नए सयाकालं ।
तह विसयासु-इरत्तो, जीवो वि मुणइ सुहं मूढो ॥६१॥**

गाथार्थ : जेम विष्टाना ढगलामां खूपेलो कृमि हंमेशां सुख माने छे तेम विषय रूपी अशुचिमां खूपेलो मूर्ख जीव सुख माने छे. ॥६१॥

भाषांतर : जेम विष्टाना पुंजमां खूपेलो कृमि हंमेशां सुख माने छे - आ मारुं रहेटाण सुखकारी छे ए प्रमाणे ते विचारे छे अहीं 'खुत्तो' एटले खूपेलो, 'चहुट्ट खुत' (२-७४)थी देश्य शब्द बनेल छे. ते ज रीते विषय रूपी अशुचि - विषयो अपवित्र होवाथी तेने अशुचि कह्या. तेमां रक्त एवो मूढ जीव पण विषयोने सुखरूपे माने छे. ॥६१॥

**मयरहरोव जलेहिं, तह वि हु दुप्पूरओ इमो आया ।
विसया-मिसंमि गिद्धो, भवे भवे वच्चइ न तत्ति ॥६२॥**

गाथार्थ : मकरधर (समुद्र) जेम जल वडे दूष्पूर छे एटले के पूरवा माटे अशक्य छे ते ज रीते विषय रूप आमिष (भोग्य वस्तु)ने विषे आसक्त एवो आत्मा भवे भवे दरेक भवमां तृप्ति नथी पामतो. ॥६२॥

भाषांतर : जेम मकरधर-मकराकर अर्थात् समुद्र पाणी वडे दुष्पूर अर्थात् पूरवा माटे अशक्य छे. 'अपि' ए व अर्थमां छे, ते ज रीते 'हुं' निश्चय अर्थमां, आ आत्मा घणा विषयसुखो वडे दूष्पूर छे, जे कारणथी विषयामिषमां-विषय रूप भोग्यवस्तुमां आसक्त एवो ते दरेक भवमां तृप्ति नथी पामतो. आमिष शब्द मांस (२-७७०) सुंदर आकारवाळा रूपादि, संभोग, लोभ, लांच एवा अनेक अर्थमां छे. ॥६२॥

**विसय-वसट्टा जीवा, उब्भड-रुवाइएसु विविहेसु ।
भवसयसहस्सदुलहं, न मुणंति गयंपि नियजम्मं ॥६३॥**

गाथार्थ : विविध उद्भटरूपोने विषे गृद्ध विषयना पारतन्त्र्य वडे पीडाता जीवो लाखो भवमां दुर्लभ एवा गयेला एवा पोताना जन्मने जाणता नथी. ॥६३॥

भाषांतर : विषयने वश अर्थात् पारतन्त्र्य, तेना वडे पीडाता ते विषयवशार्त, एवा जीवो विविध-जुदा जुदा प्रकारना उद्भट अर्थात् उदार रूपोने विषे गृद्ध थया छता, गयेला एवा पण पोताना जन्मने जाणता नथी. केवा पोताना जन्मने ? लाख भवोमां दुर्लभ - लाख जन्म वडे पण दुःखेथी प्राप्त करायेला एवा पोताना जन्मने जाणता नथी. ॥६३॥

**चिडुंति विसयविवसा, मुत्तुण लज्जंपि के वि गयसंका ।
न गणंति के वि मरणं, विसयंकुस-सल्लिया जीवा ॥६४॥**

गाथार्थ : चाली गयेली शंकावाळा एवा केटलाक जीवो लज्जाने मूकीने पण विषयने विवश रहे छे. विषय रूपी अंकुश वडे शल्यित (कांटो वींधायेलो होय एवा) केटलाक जीवो मरणने पण गणता नथी. ॥६४॥

भाषांतर : केटलाक चाली गयेली शंकावाळा - निःसंशय लज्जाने मूकीने पण विषयोने विषे विवश अर्थात् पराधीन रहे छे, तथा केटलाक जीवो विषय रूपी अंकुश वडे शल्यित-अर्थात् रोपायेला शल्यवाळा 'अपि'नो अर्थ जणातो होवाथी, मरणने पण गणता नथी (परवा नथी करता) विषयासक्त लोकोनुं मरण पण थाय छे. जे कारणथी कह्युं छे के कम्पन, स्वेद, थाक, मूर्च्छा, चक्कर, ग्लानि, बळनो क्षय, राजयक्ष्म (क्षय) विगेरे रोगो मैथुन सेववाथी थाय छे. (योगशास्त्र द्वि.प्र.गा-७८) अने वळी कह्युं छे के -

कृश, काणो, लंगडो, बहेरो, कपाई गयेली पूछडीवाळो, घामांथी नीकळती अशुचि वडे भीजायेलो, भूख वडे क्षाम थयेलो, घरडो, जूना एवा पिठरना कपाल उपर गळुं टेकवीने रहेलो एवो पण कूतरो कूतरीने अनुसरे छे. खरेखर मदन (काम) ते हणेलाने पण हणे छे. ॥६४॥

विसय-विसेणं जीवा, जिण-धम्मं हारिउण हा नरयं ।

वच्चंति जहा चित्तय-निवारिओ बंभदत्तनिवो ॥६५॥

गाथार्थ : खेदनी वात छे के विषयने वश जीवो जिनधर्मने हारीने नरकमां जाय छे. जेम चित्र वडे निवारण करायेलो ब्रह्मदत्त राजा नरकमां गयो तेम.

भाषांतर : विषयने वश अर्थात् विषयनी पराधीनताने कारणे जीवो जिनधर्मने हारीने नरकमां जाय छे. 'हा' शब्द खेद अर्थमां छे. ज्यां असह्य एवा करवत वडे चीरावुं, कुम्भीमां पकाववुं विगेरे, परमाधामीओ वडे अपायेलुं, परस्पर उदीरणा करायेलुं, अने स्वाभाविक दुःख होय छे.

धिद्धी ताण नराणं, जे जिणवयणा-मयंपि मोत्तुणं ।

चउगइ-विडंबणकरं, पियंति विसयासवं घोरं ॥६६॥

गाथार्थ : ते पुरुषोने धिक्कार थाओ के जेओ जिनवचन रूपी अमृतने मूकीने चार गतिमां विडंबनाने करावनारी घोर एवी विषय रूपी मदिराने पीए छे. ॥६६॥

भाषांतर : ते नरोने धिक्कार छे द्वितीयाना अर्थमां अहीं षष्ठी करी छे. के जेओ जिनवचन रूपी अमृतने पण मूकीने चार गति-नरकादिने विषे अर्थात् विगोपन (कदर्थना)ने करतो घोर-रौद्र (भयंकर) एवी नरकगतिनुं कारण होवाथी घोर एवो विषय रूप आसव मैरेय-मदिराने पीए छे. अमृत त्यजीने कोना वडे मद्य आस्वाद कराय ? ॥६६॥

मरणे वि दीणवयणं, माणधरा जे नरा न जंपंति ।

तेवि हु कुणंति लल्लिं बालाणं नेहगह-गहिला ॥६७॥

गाथार्थ : जे मानने धरनारा (उत्तम) पुरुषो मरण आवे तो पण दीनवचनो नथी बोलता एवा पण तेओ स्नेहना कदाग्रह वडे ग्रहण करायेला बाळाओने (स्त्रीओने) लल्लि-रंकनी जेम प्रार्थनाने करे छे. ॥६७॥

भाषांतर : जे मानने धरता एवा अर्थात् उत्तम पुरुषो मरणमां पण एटले के प्राणने त्याग करवानो अवसर आवे तो पण दीनवचन अर्थात् हीन वाक्य बोलता नथी ॥६७॥

सक्कोवि नेव खंडइ, माहप्पम-डुप्फुरं जए जेसिं ।

ते वि नरा नारिहिं, कराविआ नियय-दासत्तं ॥६८॥

गाथार्थ : जे पुरुषोना माहात्म्यना गर्वने जगतमां इन्द्र पण खंडित नथी करी शकतो एवा पण पुरुषो नारीओ वडे पोतानुं दासपणुं करावाया छे. ॥६८॥

भाषांतर : जेओना - जे पुरुषोना माहात्म्यना मडफ्फुरने अर्थात् शक्तिना गर्वने जगतमां अर्थात् संसारमां शक्र पण खंडित नथी करतो एटले के मनुष्यो तो दूर रहो पण देवेन्द्र पण जेओना अहंकारने जीतवा माटे समर्थ नथी

ते पुरुषो पण स्त्रीओ वडे पोतानुं दासपणुं करावाय छे. स्ववीर्य वडे अभिमानवाळा समर्थ एवानी पण गणना नथी. तेओ पण शरीरनी विविध रचनाओ वडे स्त्रीओ वडे विडंबना करावाया छे. ॥६८॥

जउनंदणो महप्पा, जिणभाया वयधरो चरमदेहो ।

रहनेमी राइमई-रायमइं कासी ही विसया

॥६९॥

गाथार्थ : यदुनंदन, महात्मा, श्रीनेमिजिननो लघुभ्राता, व्रतने धारण करनारा चरम शरीरी एवा रथनेमिए राजीमतीने विषे रागबुद्धिने करी. खरेखर विषयो दुर्लघ्य छे. ॥६९॥

भाषांतर : यदुनंदन श्री समुद्रविजयराजाना पुत्र, महात्मा-उपशान्त चित्तवाळा जिनभ्राता-श्रीनेमिजिनना लघुबन्धु, व्रतधर-ग्रहण करेली दीक्षा छे जेमणे एवा, चरम शरीरी-ते ज भवमां मोक्षमां जनारा एवा पण रथनेमिए राजीमतीने विषे रागनी मति करी. अर्थात् श्रीमद् उग्रसेननी पुत्री राजीमतीने विषे राग एटले के अनुराग वडे चित्तनो क्षोभ तेने विषे मति अर्थात् बुद्धिने करी. 'ही' एटले खरेखर विषयो एटले इन्द्रियना विकारो खेदने प्राप्त करावनारा छे, दुर्लघ्य छे. भाव ए के जे विषयो वडे आवा पण रथनेमि विकारना आकारने प्राप्त करावाया ते विषयो कोना वडे जीतवा माटे शक्य छे.१

मयण-पवणेण जइ तारिसावि सुरसेल-निच्चला चलिया ।

ता पक्क-पत्त-सत्ताणं, इयर-सत्ताण का वत्ता ?

॥७०॥

गाथार्थ : मदन रूपी पवन वडे जो मेरुगिरि जेवा निश्चल (धीर) एवा पण चलित कराया, तो पाकेला पांदडा जेवा (हीन) सत्त्ववाळा बीजा सामान्य प्राणीओनी तो शुं वात ? ॥७०॥

भाषांतर : मदन पवन अर्थात् कंदर्प रूपी वंटोळिया वडे जो सुरशैल निश्चल अर्थात् मेरु जेवा धीर एवा पण श्री आर्द्रक, नन्दिषेण, रथनेमि वगरे महामुनिओ पण चलित एटले चलचित्तवाळा थया. त्यारे पाकेला पांदडा जेवा अर्थात् हीन सत्त्ववाळा सामान्य प्राणीओनी तो शुं वात? कोई ज वात न थाय. अर्थात् तेओ तो चोक्कस चलित थाय. ॥७०॥

जिप्पंति सुहेणं चिय, हरिकरि-सप्पाइणो महाकूरा ।

इक्कुच्चिय दुज्जेओ, कामो कय-सिवसुह-विरामो

॥७१॥

गाथार्थ : महाकूर एवा सिंह, हाथी, सर्प आदि जीवो सुखपूर्वक ज जीताय छे. शिवसुखमां बाधा जेणे करी छे एवो एक काम ज दुर्जेय छे. ॥७१॥

भाषांतर : महाकूर, दुष्ट अध्यवसायवाळा एवा हरि करि सर्पादि अर्थात् सिंह, हाथी अने भुजंगमादि जीवो सुखपूर्वक ज जीताय छे. अर्थात् ते ते उपाय वडे पुरुषो वडे वशीकृत करीने दमन कराय छे. पण करायो छे शिवसुखनो विराम जेना वडे अर्थात् दळी नाख्यो छे मोक्ष जेणे एवो काम-मन्मथ ते दुर्जेय अर्थात् जीतवा माटे अशक्य छे. कह्युं छे के -

भूमि उपर मत्त हाथीना कुंभने दळी नाखवामां घणा शूरवीर होय, कोई वळी प्रचंड एवा सिंहनो वध करवामां हौशियार होय परंतु बळात्कार वडे पंडितोनी आगळ हुं कहुं छुं के कंदर्पना दर्पनुं दलन करनार विरल मनुष्यो ज होय छे. ॥७१॥

'परम्' शब्द अध्याहारथी लेवानो छे. एटले परंतु एक काम ज दुर्जेय छे.

विसमा विसय-पिवासा, अणाइभव-भावणाइ जीवाणं ।

अइदुज्जेयाणि य इंदि-याइं तह चंचलं चित्तं

॥७२॥

गाथार्थ : जीवोने अनादि भवभावना वडे (अभ्यास होवाथी) विषय पिपासा विषम (भोगतृष्णा दुस्तर) छे तथा ईन्द्रियो

अति दुर्जय छे, चित्त चंचळ छे. (खरेखर सत्त्वथी तृष्णा दूर कराती होवाथी आगळ कहे छे) - सत्त्व अल्प, असार छे. स्त्रीओ मोहनवेली छे. (मोहने उत्पन्न करनारी छे) ए प्रमाणे (होते छते) चलित चित्तवाळो पुरुष आत्माने केम करीने स्थापन करे. अर्थात् शीलभंगने प्राप्त न करे. ॥७२॥

अहीं ग्रंथमां आ आगळनी गाथा नथी, पण संबंध बेसतो होवाथी वृत्तिकार भगवंते लखी छे. ॥७२॥

भाषांतर : जीवोने - प्राणीओने अनादि भवभावना वडे अर्थात् अभ्यस्तपणा वडे विषम एवी विषयपिपासा अर्थात् दुस्तर - दुःखे करीने निवारी शकाय एवी भोगतृष्णा अने अति दुर्जेय एवी ईन्द्रियो तथा चंचल चित्त एटले के चपळ एवुं मन छे. खरेखर सत्त्व वडे ज तृष्णाने निवारी शकाय माटे कहे छे - 'येवम...' अति थोडुं, अति अल्प, असार, क्षणभंगुर एवुं सत्त्व छे. अर्थात् चित्तनी दृढता, स्थिरता छे. महिला स्त्रीओ ते मोहनवेलीओ छे. स्वभावथी ज मोह उत्पादिका छे. आवा प्रकारो वडे चलित चित्तवाळो जीव केमे करीने आ प्रमाणे पहला कहेवायेला स्त्री संसर्ग वर्जनरूपे आत्माने स्थापन करे ? अर्थात् शीलभंगथी बचेलो रहे ? ॥७२॥

कलमल-अरइ-अभुक्खा, वाहीदाहाइ विविहदुक्खाइं ।

मरणं पिहू विरहाइसु, संपज्जइ कामतविआणं ॥७३॥

गाथार्थ : कलमल, अरति, खोराकनी अरुचि व्याधि, दाह आदि विविध दुःखो ज नहीं, परंतु काम वडे संतप्त जीवोने निश्चे (स्त्रीथी) विरहादि होते छते मरण पण प्राप्त थाय छे. ॥७३॥

भाषांतर : कलमल अर्थात् लांपट्य-आसक्ति होवाथी ते विषय जो प्राप्त न थाय तो चित्तनो क्षोभ, अरति एटले गाढ चित्तनो क्षोभ, अबुभुक्षा ते ते विषयोनी चिंता वडे व्याकुळ मन होवाथी अरुचिपणुं, व्याधि ते ज्वर आदिथी संभवतु दुःख, दाह एटले अतिशय ताप, आदि शब्दथी मूर्च्छा आदि असुखने ग्रहण करवा. फक्त आ ज (दुःखो) नथी थता पण मरण एटले के प्राणत्याग पण थाय छे. 'हुं' अवश्य अर्थमां छे, काममां संतप्त जीवोने विरहादि अर्थात् स्त्रीना वियोगादि होते छते मरण छे. अंतमां एवी दशा-अवस्था प्राप्त करे छे अने ते स्मरनी आतुरता वडे जीवो अनुभवे छे. जे कारणे कह्युं छे के -

(काममां आसक्त जीवने) पहला अभिलाष थाय छे. बीजे नंबरे पदार्थनुं चिंतन, त्रीजे ए पदार्थनी वारंवार स्मृति, चोथे एना गुणोनी प्रशंसा थाय, पांचमे उद्वेग जाणवो, छठ्ठे विलाप कहेवाय छे, सातमे नंबरे उन्माद जाणवो अने व्याधि आठमे थाय, नवमे जडता कहेवायेली छे अने दशमे मरण थाय छे अने वळी कह्युं छे के -

व्याधिग्रस्त माणस दुबळो होय, छेदायुं होय-घा पड्यो होय तो लोही नीकळे, (साप) डंसेला माणसने मोढामांथी लाळ झरे, अहीं (आ माणसमां) आ बधुं नथी, तो आ बिचारो मुसाफर शी रीते मर्यो ? हा ! जणायुं. मधमां लंपट बनेला भमराओए मचावेला कोलाहलवाळी आंबानी मंझरी उपर दृष्टि स्थापन करी. (तेथी भमराओने एम लाग्युं के आ मुसाफर मंझरी लई लेशे, तेने करड्या, झेर चढ्युं माटे मरी गयो.) ॥७३॥

**पंचिंदिअ-विसय-पसंगरेसि,
मण-वयण-काय नवि संवरेसि ।
तं वाहिसि कत्तिअ गलपएसि,
जं अट्टकम्म (म्मं) नवि निज्जरेसि**

॥७४॥

गाथार्थ : (हे जीव !) (जे तुं) पंचेन्द्रियना विषयोमां आसक्तिने करे छे. मन, वचन अने कायाने संवरतो नथी (अने वळी) जे आठ कर्मोनी निर्जरा पण नथी करतो, ते तुं स्वयं ज तारा गळा उपर छरीने (धारण करे छे) मूके छे. ॥७४॥

भाषांतर : हवे ग्रन्थकार आत्माने शिखामण आपे छे. रे जीव ! 'पंचिंदिय विसय-पसंगरेसि' अहीं एक अक्षरथी विकल

एवुं पद छे, माटे करेसि ए प्रमाणे लेवुं. जेम के जे नळ राजानी कथा सांभळीने पंडितजनो पृथ्वीनो पण तेटलो आदर करता नथी. अहीं सुधा अर्थात् वसुधा अर्थ करवानो छे. पंचेन्द्रियो अने (तेना) जे विषयो तेने विषे प्रसंग अर्थात् आसक्तिन जे तुं करे छे अने मन, वचन अने कायाने जे संवरतो नथी. अर्थात् मन-वचन-कायाने असंयम मार्गे प्रवर्तावे छे अथवा पंचेन्द्रियना विषय उपर आसक्ति होवाथी मन, वचन अने कायाने संवरतो नथी एम जोडवुं. अपभ्रंश, तार्दथ्य अने द्योतित करवुं ए अर्थमां 'ईसी' ए शब्द निपात थयो छे. जे कारणे प्राकृत शब्दानुशासनमां कहुं - 'तादर्थ्ये केहिते हितेसि रेसिताणेणा' (सि. ८-४-४२५)

तथा जे ज्ञानावरणीय वगरे आठ कर्मोने, 'अपि' शब्द अवधारण अर्थवाळो छे. अर्थात् अवश्य निर्जरतो नथी अर्थात् मूळथी तेओनुं उन्मूलन नथी करतो, ते बधुं गलपदे अर्थात् पोताना गळाना भाग उपर, कर्तरी एटले (छरीने वहन करावे छे. अर्थात् केळनी उपमावाळा (कोमळ) गळा उपर छेदवा माटे छरीने मूके छे. ॥७४॥

**किं तुमंधो सि किं वा सि धत्तुरिओ,
अहव किं सन्निवाएण आऊरिओ ।
अमयसमधम्मु जं विसं व अवमन्नसे,
विसयविस-विसमं अमयं व बहु मन्नसे**

॥७५॥

गाथार्थ : रे आत्मा ! तुं शुं आंधळो छे ? अथवा शुं धत्तूराने तुं खाई गयो छे? अथवा शुं सन्निपात वडे तुं व्याप्त छे ? के जे कारणे अमृत जेवा धर्मने विषनी जेम अवगणे छे अने विषम एवा विषय रूपी विषने अमृतनी जेम बहुमाने छे. (बहुमान करे छे.) ॥७५॥

भाषांतर : रे आत्मा ! ते शुं तुं आंधळो छे - चाली गयेली आंखवाळो छे ? अथवा शुं तुं धत्तूरित छे ? अर्थात् खाधेलुं छे मातुल पुत्रक बीज जेणे एवो छे ? अथवा सन्निपात वडे अर्थात् वात, पित्त, श्लेष्म ए त्रणेनुं एक साथे रहेवुं ते सन्निपात, तेना वडे आपूरित अर्थात् व्याप्त छे. एटले तने शुं सन्निपात थयो छे के जे अमृत जेवुं, पीयूषना पान (पीवा)नी उपमावाळा धर्मने अर्थात् विषयथी निवृत्तिरूप जे धर्म तेने विषनी जेम अपमाने छे, अवगणना करे छे. जेम विषनी अवगणना कराय ए रीते अमृत जेवा धर्मनी अवगणना करे छे, तथा विषम एटले दुःसह, संयम जीवननो नाश करता होवाथी विषम एवा विषय रूपी विषने अमृतनी जेम बहुमाने छे. अहीं तारी अतत्त्व बुद्धिनुं ज चेष्टित (कार्य) मूळमां छे. भ्रमवाळो ज असत्ने सत् अने सत्ने असत् अर्थात् साराने खराब अने खराब वस्तुने सारी जाणे. ॥७५॥

**तुज्ज तह नाण-वित्राण-गुणडंबरो,
जलण-जालासु निवडंतु जिय निब्भरो ।
पयइ-वामेसु कामेसु जं रज्जसे,
जेहि पुणपुण वि नरयानले पच्चसे**

॥७६॥

गाथार्थ : हे जीव ! तारा तप, ज्ञान, विज्ञान अने गुणोनो विस्तार अतिशय वडे अत्यंत रीते अग्निनी ज्वाळामां पडो. जे कारणे (तुं) वाम एवा (मोक्षमार्ग माटे प्रतिकूल एवा) कामोने विषे स्वभावथी ज रंजित थाय छे अने जेओ वडे (जे विषयो वडे) फरी फरी नरकरूपी अग्निमां पकावाय छे. ॥७६॥

भाषांतर : हे जीव ! हे आत्मा ! तारा तप, ज्ञान, विज्ञान अने गुणोनो, तप - चोथभक्त, छट्ट, अट्टम वगरे तप, ज्ञान ते शास्त्रनो अवबोध, विज्ञान ते क्रियाओमां कौशल, गुणो, धैर्य, औदार्य, दाक्षिण्य आदि गुणो, तेओनो डम्बर अर्थात् आडम्बर, आटोप विस्तार ते 'निब्भर' ए तृतीयाना अर्थमां प्रथमा छे. माटे 'निब्भरेण' अतिशय वडे (अत्यंत रीते), ज्वलन ज्वाला एटले अग्नि शिखाओने विषे पडो, प्रवेश करो. तारो सर्व पण गुणोनो समूह भस्मसात् थाओ. 'निवडंतु' ए प्रमाणे अहीं प्राकृत होवाथी बिन्दुनो लोप शक्य छे, पण थयो नथी. जे तुं प्रकृतिथी ज अर्थात् स्वभावथी ज वाम एटले के मोक्षमार्ग माटे प्रतिकूल एवा काम अर्थात् शब्दादि विषयो

तेने विषे राग करे छे.

‘रज्ज रागे’ कर्मकर्तरि अर्थमां यक् प्रत्यय माटे स्वयं ज रागवाळो थाय छे. ए प्रमाणे अर्थ छे. विषयो नो त्याग करवा माटे शक्यमान नथी. जे कामो वडे तुं फरी फरी नरक रूपी अग्निमां पकावाय छे. कामो वडे ज घणी वार नरकनी प्राप्ति थये छते अग्निकुम्भीओमां पकाववुं ते सुलभ ज छे. ॥७६॥

**दहइ गोसीससिक्खंड छारक्कए,
छगल-ग्रहणट्ट-मेरावणं विक्कए ।
कप्पतरु तोडि एरंड सो वावए,
जु जि विसएहि मणुअत्तणं हारए**

॥७७॥

गाथार्थ : जे जे विषयो वडे मनुष्यत्वने हारे छे, ते भस्मने माटे गोशीर्ष (चंदन) अने श्रीखंडने बाळवानुं करे छे, ऐरावण हाथीने वेचीने बोकडाने खरीदवा जेवुं करे छे. कल्पवृक्षने उखेडीने त्यां एरंडने वाववानुं करे छे. ॥७७॥

भाषांतर : जुज्जि जे जे विषयो वडे मनुष्यत्वने हारे छे अर्थात् विषयमां आसक्तपणा वडे मनुष्यनो भव निष्कळ करे छे - स्वर्ग-मोक्षरूप फळनी प्राप्तिरूप जे फळ तेने हारी जवाथी निष्कळ करे छे, ते (पुरुष) आवा प्रकारनो जाणवो. ते बतावता कहे छे - गोशीर्ष एटले हरिचंदन अने श्रीखंड ए मलयगिरिमां थतु उत्तम चंदन ते बनेनो खंड एटले टूकडाने, ते क्षार एटले भस्मने मेळववा माटे बाळे छे. एटले के भस्म जेवी असार वस्तुने माटे गोशीर्ष श्रीखंडने अग्निमां नाखे छे तथा छगल एटले छाग (बोकडो) तेने ग्रहण करवा माटे ऐरावण ते ईन्द्रनो हाथी - तेने वेचे छे. ईन्द्रना हाथीने (उत्तम प्राणी) वेचीने छागने (तुच्छ प्राणीने) खरीदे छे तथा कल्पतरुने एटले कल्पवृक्षने तोडीने लणीने एरंड एटले पंचांगुलने (तुच्छ वनस्पति) वावे छे. अर्थात् तेना स्थाने आरोपे छे. अहीं आर्षप्रयोग होवाथी विभक्तिनो लोप थयेल छे. ॥७७॥

**अधुवं जीविअं नच्चा, सिद्धिमगं विआणिआ ।
विणिअट्टिज्ज भोगेसु, आउं परिमिअ-मप्पणो**

॥७८॥

गाथार्थ : हे आत्मा ! जीवितने अधुव जाणीने, मुक्तिना मार्गने जाणीने, पोताना परिमित आयुष्यने जाणीने भोगोथी विराम पाम. ॥७८॥

भाषांतर : हे आत्मा ! जीवितने अर्थात् प्राणोने, अधुव - अशाश्वत छे, एम जाणीने -अने वळी हारिलवाचके कह्युं छे के -

राज्य, ऐश्वर्य, धन, कनक अने सारभूत बधुं, परिजन, राजानी महेरबानी बधुं अनित्य छे. विपुल एवुं देवनुं सुख पण अनित्य छे, रूप अने आरोग्य पण चल छे. श्रेष्ठ एवुं आ जीवित पण चल छे. जे आ देखातो लोक सुखने करे छे, ते लोक पण चपळ छे.’ ॥७८॥

**सिवमग-संठिआण वि, जह दुज्जेआ जिआण पुणविसया ।
तह अन्नं किंपि जए, दुज्जेअं नत्थि सयले वि**

॥७९॥

गाथार्थ : जे कारणे शिवमार्गमां सारी रीते स्थितिने करेला जीवोने पण विशेष करीने विषयो दुर्जेय छे, ते कारणथी आखा जगतमां दुर्जेय बीजुं कई पण नथी. ॥७९॥

भाषांतर : जे कारणे शिवमार्गमां संस्थित अर्थात् सारी रीते स्थिति करेला एवा जीवोने पण विशेषे करीने विषयो दुर्जेय छे, ते कारणे आखा पण जगतमां अन्य कई पण ॥दुर्जेय नथी. करोड सुभटो पण सुजेय अर्थात् सारी रीते जीती शकाय, पण विषयोने जीतवा अति दुष्कर छे. ॥७९॥

सविडं कुब्भडरूवा, दिट्ठा मोहेइ जा मणं इत्थी ।

गाथार्थ : विटंक सहित अने उद्भट रूपवाळी जोवायेली स्त्री मनने मोहे छे. आत्महितने विचारता (साधुओ तेने) अति दूरथी ज त्याग करे छे. ॥८०॥

भाषांतर : सविटङ्कोद्भटरूपा - अहीं विटंक एटले विबन्ध-विशिष्ट बन्ध अर्थात् शुभ अध्यवसायना स्खलन रूप (बाधारूप) कारण के, 'टक्' धातु बन्धन अर्थमां छे अने विटंकनी सहित वर्ते ते सविटंक. उद्भट एटले उदार, विशाल अने सविटंक उद्भट एवं रूप छे, जेणीनुं एवी जोवायेली जे कोईपण स्त्री, मन एटले अंतःकरणने मोहे छे अर्थात् विचित्तपणाने पमाडे छे. तेणीने आत्महित एटले पोताना पथ्यनो विचार करता एवा साधुओ (सज्जन पुरुषो) दूरतरथी अति दूरथी ज परिहरे छे, वर्जे छे. जे कारणे -

पवनथी फुंकायेलो अग्नि केटलाक पुरुषोना शरीरने बाळे छे. मत्त थयेलो हाथी अने क्रोध पामेलो सर्प पण केटलाकना शरीरने हणे छे, पण स्त्री तो आलोक अने परलोक संबंधी ज्ञान, शील, विनय, वैभव, औदार्य, विज्ञानरूप सर्व सारभूत देहोने बाळे छे. ॥८०॥

सच्चं सुअं पि सीलं, वित्राणं तह तवं पि वेरुगं ।

वज्जइ खणेण सच्चं, विसयविसेणं जईणं वि

॥८१॥

गाथार्थ : सत्य, श्रुत, शील, विज्ञान, तप अने वैराग्य - आ बधुं विषयना वश थवा वडे यतिओनुं पण क्षणमां ज चाल्युं जाय छे. ॥८१॥

भाषांतर : सत्य अर्थात् अवितथ वाक्य, श्रुत ते आगम, शील ते अढारहजार शीलांगना भेदवाळुं, ब्रह्म अने विज्ञान एटले क्रियानुं कौशल अथवा विशिष्ट ज्ञान अने तप - उपवास, छठ्ठ, अठ्ठमादि अने वैराग्य एटले भव विरक्तपणुं - आ बधुं यतिओनुं पण, बीजानुं तो दूर रहो पण विषयने वश थवा वडे यतिओनुं पण आ बधुं क्षणमां ज जाय छे, दूर थई जाय छे. विषयासक्त जीवोनुं आ बधुं विलीन (नाश) थाय छे. ॥८१॥

रे जीव स! भइकप्पिय-निमेषसुहलालसो कहं मूढ ! ।

सासयसुहम-समतमं, हारिसि ससिसोयरं च जसं

॥८२॥

गाथार्थ : रे जीव ! मतिथी कल्पना करायेला, आंखना पलकारा जेटला सुखमां लंपट थयो छतो मूढ एवो जेनी समान बीजुं कोई सुख नथी, तेवा शाश्वत सुखने अने चन्द्र जेवा निर्मळ यशने शा माटे हारे छे ? ॥८२॥

भाषांतर : रे जीव ! हे मारा आत्मा ! मतिकल्पित अर्थात् पोतानी बुद्धि वडे स्थापन करायेलुं (सुख तरीके मनायेलुं) एवं जे निमेष सुख एटले आंखना पलकारा जेटलुं वैषयिक सुखना लेशमां लंपट थयो छतो मूढ एटले के मूर्ख एवो (तुं) असमतम एटले जेनी समान बीजुं नथी एवं शाश्वत सुख - शीलने सेववाथी प्राप्त थयेला अनंत एवा मोक्षसुखने अने शशिसोदर एटले चन्द्र जेवा निर्मळ यशने केम हारी जाय छे ! केम दूर हडसेले छे ? जे कारणे कह्युं छे के कामार्त्त एवो जे स्वस्त्रीने त्याग करे छे अथवा परस्त्रीने प्रबोधतो नथी. तेना वडे जगतमां अकीर्तिनो पडह अपाय छे. गोत्रने विषे मषीनो कूचडो अपायो छे, चारित्रने ज्लांजलि अपाई छे, गुणोना समूह रूपी बागने दावानळ अपायो छे, सकल आपत्तिओने संकेत (आवकार) अपायो छे, शिवपुरना द्वारने विषे दूढ कपाट अपायो छे. ॥८२॥

पज्जलिओ विसयअग्गी, चरित्तसारं डहिज्ज कसिणंपि ।

सम्मत्तं पि विराहि, अणंत-संसारिअं कुज्जा

॥८३॥

गाथार्थ : प्रज्वलित थयेली विषय रूपी अग्नि सकळ पण चारित्र रूपी सारने बाळी नाखे छे. सम्यक्त्वने पण विराधीने अनंत संसारने करे छे. ॥८३॥

भाषांतर : प्रकर्ष वडे बळायेलो, दीप्त थयेलो विषयाग्नि अर्थात् विषय रूपी अनल कृत्स्न एटले सकल पण चारित्रसारने अर्थात् चारित्र रूप सारभूत द्रव्यने बाळे छे. भस्मीभूत करे छे. चारित्रने बाळवानुं तो दूर रहो, सम्यक्त्वने पण विराधीने - तेना दोषना उत्पादन करवा वडे मलिन करीने अर्थात् मिथ्यात्वने प्राप्त करीने अनंत संसारीपणाने करे छे अर्थात् अनंत भवभ्रमणने पण प्राप्त करे छे. ॥८३॥

भीषणभव-कंतारे, विसमा जीवाण विसय-तिन्हाओ ।

जाए नडिया चउदस-पुव्वीवि रुलंति हु निगोए ॥८४॥

गाथार्थ : भीषण एवा भव रूपी अटवीमां जीवोनी विषय तृष्णाओ विषम छे. जेना वडे नचावायेला चौद पूर्वधर पण निश्चे निगोदमां भमे छे. ॥८४॥

भाषांतर : भीषण एवा भवरूपी कान्तारमां अर्थात् रौद्र एवी संसार रूपी अटवीमां जीवोनी एटले के भवाभिनन्दी प्राणीओनी विषय तृष्णा एटले के विषयवांछा ते विषम छे. अर्थात् दुःसह छे. जे कारणे कह्युं छे के -

आशाना आराधनमां तत्पर एवाओ वडे अंदरनी वराळ अने हसवानुं पण रोकनीने शून्य मन वडे दुर्जन पुरुषोना उल्लापो केमे करीने सहन कराया, चित्तनो स्तंभ करायो, हणायेली बुद्धिवाळाओने पण अंजलि (प्रणाम) कराई तो हे आशा ! निष्कळ आशा ! तुं आनाथी वधारे हजी शुं नचावे छे ?

जे विषय तृष्णा वडे नचावायेला अर्थात् विगोपन करायेला एवा चौदपूर्वीओ पण, बीजानी वात तो दूर रहो, - सूक्ष्म अने बादर ए बे भेदवाळी निगोदमां - अनंत जीवोवाळी श्री जिनागममां प्रसिद्ध एवी निगोदमां, 'हुं' शब्द निश्चय अर्थमां छे निश्चे रोळाय छे अर्थात् गबडे छे. जीवो विषयना आसक्तपणा वडे पठन-पाठन आदिनी आसक्तिना अभावथी चौदपूर्वनुं पण विस्मरण करे छे अने त्यांथी निगोदमां भमे छे. जे कारणे जीवानुशासन वृत्तिमां कह्युं छे के - पूर्वना सूत्रना अभावमां मरीने चौदपूर्वी एवा श्रुतकेवली पण प्रसिद्ध एवा अनंतकायमां वसे छे, रहे छे. वळी पूर्वना सूत्र होते छते नहीं. ॥८४॥

हा विसमा हा विसमा, विसया जीवाण जेहिं पडिबद्धा ।

हिंडंति भवसमुद्दे, अणंतदुक्खाइ पावंता ॥८५॥

गाथार्थ : (हा खेद अर्थमां) खेदनी वात छे के, जीवोने विषयो अत्यंत विषम छे, के जे विषयोने विषे आसक्त थयेला अनंत दुःखोने पामता भव समुद्रमां भमे छे. ॥८५॥

भाषांतर : हा ए शब्द विषाद अर्थमां छे. खेदनी वात छे के, जीवोने विषयो अत्यंत विषम छे. अत्यंत वैषम्यने बताववा माटे 'हा विसमा'नी द्विरुक्ति करी छे. ('जेही' शब्द सप्तमीना अर्थमां तृतीयावाळो छे. जे विषयोने विषे प्रतिबद्ध - आश्रय करेला (जीवो) भव समुद्रमां अर्थात् संसार रूपी अम्भोधिमां हिण्डे छे, जाय छे, भमे छे. 'हिडिङ् गतौ' हिङ् हट्ठह्य धातु गति अर्थवाळो छे. शुं करता एवा जीवो ? अनंत दुःखोने प्राप्त करता भव समुद्रमां भमे छे. ॥८५॥

माइंदजाल-चवला, विसया जीवाण विज्जु-तेअसमा ।

खण-दिट्ठा खण-नट्ठा, ता तेसिं को हु पडिबंधो ॥८६॥

गाथार्थ : जीवोने विषयो माया वडे रचायेली ईन्द्रजाल जेवा चपळ छे, विद्युतना तेज जेवा क्षणमां जोवायेला क्षणमां नाश पामता छे, ते कारणथी ते विषयोने विषे निश्चे प्रतिबंध (आसक्ति) केवो ? ॥८६॥

भाषांतर : जीवोने विषयो माया-ईन्द्रजाल जेवा छे. अर्थात् माया वडे - शठपणा वडे बीजाने छेतरवा माटे जे ईन्द्रजाल - जादु - अवास्तवने, ते ते वस्तुना उद्भवनेने देखाडवुं ते जेवा चपळ छे अने विद्युतना तेज जेवा अचिरप्रभा जेवा प्रथम तेजना क्षणमां जोवायेला बीजी क्षणमां नाश पामता, आथी जे विषयो विद्युत्ना तेजनी साथे सरखाव्या छे. 'ता' अर्थात् तेथी 'तेसिं' ते विषयोमां (अहीं सप्तमी अर्थमां षष्ठी थई छे.) 'हुं' शब्द निश्चे

अर्थमां छे. माटे निश्चे केवो प्रतिबंध ? एटले के मननो उपष्टंभ अर्थात् राग शेनो ? ॥८६॥

सत्तू विसं पिसाओ, वेआलो हुअवहो वि पज्जलिओ ।

तं न कुणइ जं कुविआ, कुणंति रागाइणो देहे ॥८७॥

गाथार्थ : शत्रु, विष, पिशाच, वेताळ अने प्रज्वलित थयेलो अग्नि ए बधा पण देहने विषे ते विकारने नथी करता, जे कुपित थयेला रागादि करे छे. ॥८७॥

भाषांतर : शत्रु एटले वैरी. विष एटले गर, पिशाच ते व्यंतर विशेष, वेताळ ते भूत वडे अधिष्ठित थयेलुं शब अथवा रजनीचर, विशेष प्रज्वलित एटले के घी, मधुना सिंचन वडे उद्दीपन थयेलो अग्नि पण देहने विषे ते विकारने नथी करता, जे विकार कुपित थयेला एटले के - उग्रताने प्राप्त करेला रागादि कषायो करे छे. विष आदि एक ज वार मृत्युने आपे, ज्यारे रागादि तो अनंतवार मरणो आपे छे. ॥८७॥

जो रागाईण वसे, वसंमि सो सयलदुक्ख-लक्खाणं ।

जस्स वसे रागाई, तस्स वसे सयलसुक्खाइं ॥८८॥

गाथार्थ : जे पुरुष रागादिने वश छे, ते सकल लाखो दुःखोना वशमां छे अने रागादि जेना वशमां छे, तेना वशमां सकल सुखो छे. ॥८८॥

भाषांतर : जे रागादिने वश छे अर्थात् तेने आधीन छे, ते सर्व लाखो दुःखोने वश थाय छे. अर्थात् रागादिने परवश खरेखर लाखो दुःखोने प्राप्त करे छे.

जेना वशमां आ रागादि छे अर्थात् जेना वडे रागादि जीताई गया छे, तेना वशमां सकल सुखो छे. एटले के ए समस्त सुखोने प्राप्त करे छे. जे कारणे कह्युं छे के -

लांबा काळ सुधी रहीने पण विषयो अवश्य जनारा छे. (तेओना) वियोगमां एवो कयो भेद छे के, जेथी लोक स्वयं एने त्याग नथी करतो ? स्वतंत्र रीते जता एवा आ विषयो मनने अतुल संताप माटे थाय छे. ज्यारे स्वयं त्याग करायेला आ विषयो अनंत शमसुखने करे छे. ॥८८॥

केवलदुह-निम्मविए, पडिओ संसारसायरे जीवो ।

जं अणुहवइ किलेसं, तं आसव-हेउअं सव्वं ॥८९॥

गाथार्थ : फक्त दुःख वडे ज निर्माण करायेला संसारसागरमां पडेलो जीव जे क्लेशने अनुभवे छे ते सर्व आश्रव (विषयो)ना हेतुवाळो छे अर्थात् आश्रवने लीधे ज उत्पन्न थयेलो छे (एम तुं जाण) ॥८९॥

भाषांतर : आ प्रकारना अर्थात् दुःख वडे ज निर्माण करायेला संसार सागरमां पडेलो जीव जे क्लेश एटले के अशाता वडे वेदवा योग्य एवा दुःखने अनुभवे छे ते सर्व क्लेश आश्रवहेतुक छे. कर्म रूपी जलने आश्रवे अर्थात् गळे ते आश्रव एटले के पांच विषयो ते ज छे हेतु अर्थात् निमित्त जेना एवा क्लेश छे. तेने तुं जाण. विषयोथी ज क्लेशनी उत्पत्ति छे. अने विषयो खरेखर दुःखे करीने त्याग करी शकाय एवा छे. जे कारणे कह्युं छे के भिक्षा वडे प्राप्त थयेलुं भोजन अने ते पण नीरस अने एक ज वार मळतुं, भूमि ज शय्या छे, स्वजन ते पोतानो देह मात्र ज छे, जीण अने सेंकडो थीगडावाळुं वस्त्र छे अने (बेसवा माटे) कोथळो छे. खरेखर खेद छे के तो पण विषयोने त्याग करता नथी. ॥८९॥

ही संसारे विहिणा, महिला-रुवेण मंडिअं जालं ।

बज्झंति जत्थ मूढा, मणुआ तिरिया सुरा असुरा ॥९०॥

गाथार्थ : खरेखर खेदनी वात छे के महिलानुं रूप लीधेला ब्रह्मा वडे जाळ रचाई छे, ज्यां मूढ एवा मनुष्यो, तिर्यचो, सुर अने असुरो बंधाय छे. ॥९०॥

भाषांतर : 'ही' शब्द खेद अथवा विस्मय (आश्चर्य) अर्थमां छे जेम के सो वार भणेला एवा पण खेद छे के जड एवा अमे जाणता नथी. 'हतविधिललिताना की विचित्रो विपाकः दुराशय एवी विधि (भाग्य) वडे पोषायेलाओने आश्चर्य छे के आवो विचित्र विपाक छे. ए प्रमाणे ही शब्द खेद अने आश्चर्य एम बंने अर्थवाळो जोवा मळे छे.

विधि अर्थात् ब्रह्मा, महिला एटले के वनिताना रूपने धारण करेला एवा ब्रह्मा वडे संसारमां जाळने एटले आनाय-मत्स्यबंधन मंडल कराई छे, रचाई छे जे रीते जाळ वडे माछलीओ बंधाय छे ते रीते स्त्रीओ वडे पुरुषो बंधाय छे. 'रूप' शब्द श्लोक, शब्द, पशु अने आकार एवा अनेक अर्थमां छे. जेम के मनुष्यरूप वडे मृगो चरे छे. (फरे छे) जे स्त्रीरूप जाळमां मनुष्यो, तिर्यचो, सुर अने असुरो बंधाय छे नियंत्रित कराय छे. ॥९०॥

विसमा विसय-भुअंगा, जे हिं डसिया जिआ भववर्णमि ।

कीसंति दुहग्गीहिं, चुलसीई जोणिलक्खेसु

॥९१॥

गाथार्थ : विषय रूपी भुजंगो (सर्पो) विषम छे जेओ वडे डसायेला जीवो चोराशीलाख योनिरूप भववनमां दुःखरूपी अग्नि वडे क्लेश पामे छे. ॥९१॥

भाषांतर : विषयरूपी भुजंगो विषम छे. जे विषयरूपी भुजंगो वडे डसायेला जीवो भववनमां दुःखरूपी अग्नि वडे क्लेश पामे छे दुःखी मनवाळा थाय छे. क्यां रहेला ? चोराशीलाख योनिमां रहेला. ते योनिओ आ प्रमाणे पृथ्वी, अप, तेउ अने वायु काय प्रत्येकनी सात सात लाख योनि, प्रत्येक वनस्पतिकायनी दशलाख, अनन्तवनस्पतिकायनी चौद लाख, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय अने चौरिन्द्रिय प्रत्येकनी बे बे लाख, देवो, नारक अने पंचेन्द्रिय तिर्यच प्रत्येकनी चार चार लाख योनिओ, मनुष्योनी चौद लाख योनीओ ए प्रमाणे चोराशी लाख योनिओ छे. ॥९१॥

संसार-चार-गिम्हे, विसय-कुवाएहि लुक्किया जीवा ।

हिअ-महिअं अमुणंता, ऽणुहवंति अणंतदुक्खाई

॥९२॥

गाथार्थ : संसारकारागृहरूपी ग्रीष्ममां विषयरूपी कुवात (खराब वायु) वडे लूकिन थयेला अर्थात् लूने प्राप्त थयेला हित अहितने नहीं जाणता अनंतदुःखोने अनुभवे छे. ॥९२॥

भाषांतर : संसार ए ज चार कारागृह ते रूप जे ग्रीष्म - उनाळो तेमां विषयरूपी कुवात उष्ण होवाथी अतिसंतापने उत्पन्न करनारा खराब वायु वडे लूकित थयेला. लू ए मरुदेशमां प्रसिद्ध एवो उनाळानो वायु-लू तेने प्राप्त थयेला जीवो हित अर्थात् सुखकारी, अहित ते दुःखजनकने नहीं जाणता अनंतदुःखोने अनुभवे छे, आस्वाद करे छे. जेम ग्रीष्म ऋतुमां लू वडे व्यथित (दुःखी) थयेला जीवो हित शुं अने अहित शुं ? एम नहीं जाणता दुःखो वडे व्याप्त थयेला रहे छे ते ज रीते आ विषयथी पीडाता जीवो पण दुःखनो अनुभव करे छे. ॥९२॥

हा हा दुरंतदुड्डा, विसय-तुरंगा कुसिक्खिआ लोए ।

भीसण-भवाडवीए, पाडंति जिआण मुद्धाणं

॥९३॥

गाथार्थ : खेदनी वात छे के लोकमां दुरंत अने दुष्ट कुशिक्षित एवा विषय रूपी अश्वो मुग्ध जीवोने भीषण भवाटवीमां पाडे छे. ॥९३॥

भाषांतर : 'हा' शब्द विषाद, शोक अने जुगुप्सा एम त्रण अर्थमां छे. अति खेदने जणाववा माटे 'हा हा' एम बे वार छे. दुरन्त अर्थात् दुःखद छे अंत जेनो ते, अने दुष्ट एवा, विषय रूपी अश्वो लोकमां कुशिक्षित अर्थात् खराब शिक्षाने प्राप्त थयेला - प्रतिकूल गति वडे अविनीत एवा आ विषय तुरंगो भीषण भवाटवीमां मुग्ध एटले के मूढ जीवोने पाडे छे, प्रवेश करावे छे. 'जिआण' ए द्वितीयाना अर्थमां षष्ठी जाणवी. जेम कुशिक्षित अश्वो

अटवीमां पुरुषोने लई जाय तेम विषयो जीवोने भवाटवीमां भ्रमण करावे छे. ॥१३॥

विसय-पिवासातत्ता, रत्ता नारीसुपंकिल-सरंमि ।

दुहिआ दीणा खीणा, रुलंति जीवा भववणंमि ॥१४॥

गाथार्थ : विषयनी इच्छा वडे संतप्त थयेला कादववाळा सरोवरनी जेम नारीओने विषे रक्त, दुःखी, दीन अने क्षीण थयेला जीवो भव वनमां भमे छे. ॥१४॥

भाषांतर : विषय पिपासा अर्थात् विषयो भोगववानी इच्छा वडे तप्त एटले के संतापने प्राप्त करेला जीवो, नारीओने विषे रक्त थयेला, कादववाळा सरोवरमां रक्त थयेलानी जेम दुःखित थयेला, दीन अने क्षीण थयेला जीवो भववनमां रखडे छे, भमे छे, पडे छे. जेम तरस वडे पराभव पामेला पुरुषो सरोवरना कादवमां निमग्न थयेला, खूपी गयेला दुःखित दीन अने क्षीण थाय छे, ते ज रीते विषय पिपासा वडे संतप्त जीवो पण थाय छे. दुःख ते शारीरिक व्यथा तेने प्राप्त थयेला ते दुःखित दीन ते वैमनस्यने (विपरीत मनने) प्राप्त थयेला, क्षीण ते शरीरने विषे कृशपणाने प्राप्त थयेला. ॥१४॥

गुणकारिआइं धणियं, धिइ-रज्जु-नियंतिआइं तुह जीव ।

निययाइं इंदियाइं, वल्लि-निअत्ता तुरंगु व्व ॥१५॥

गाथार्थ : हे जीव ! जेम वल्ली (रज्जु) वडे नियंत्रित करायेलो अश्व गुणकारी छे तेम धृतिरूपी रज्जु वडे नियंत्रित करायेली तारी इन्द्रियो अतिशय गुणकारी छे. ॥१५॥

भाषांतर : रे जीव ! तारी ईन्द्रियो धृतिरूपी रज्जु वडे नियंत्रित संयत करायेली अतिशय गुणकारिणी छे अर्थात् मूलोत्तरगुणनी पोषक छे. धृति वडे इन्द्रियना दमनमां ज संयम पुष्ट थाय छे. कोण केवानी जेम ? वल्लि अर्थात् लता, तेना वडे निवृत्त करायेला एटले के खोटा मार्गमांथी पाछा वळायेला तुरंगम एटले अश्वोनी जेम. जेवी रीते अश्व वल्लि (रज्जु) वडे नियंत्रित करायेलो गुणकारी थाय छे, तेना उपर आरूढ थयेला पुरुषने आनंद करे छे. ॥१५॥

मण-वयण-काय-जोगा, सुनिअत्ता वि गुणकरा हुंति ।

अनिअत्ता पुण भंजंति, मत्तकरिणु व्व सीलवणं ॥१६॥

गाथार्थ : सुनिवृत्त थयेला एवा मन-वचन अने कायाना योगो पण गुणने करनारा छे. अनिवृत्त रहेला वळी आ योगो मत्त हाथीनी जेम शीलरूपी वनने भांगी नाखे छे. ॥१६॥

भाषांतर : मन वचन अने कायाना योगो अर्थात् मन, वचन अने कायाना व्यापारो सारी रीते अब्रह्मथी निवृत्त थयेला (पाछा फरेला) अर्थात् जेओ (जे पुरुषो) मन वडे, वचन वडे अने काया वडे पण अब्रह्मने नथी सेवता, ते पण एटले के एवा मनवचनकायाना योगो पण गुणकर छे. संयमनी निर्मळता रूप गुणने करनारा छे. अब्रह्मथी निवृत्त नहीं थयेला एवा आ योगो मत्त हाथीनी जेम झरता एवा मदना जलथी युक्त हाथीनी जेम शील रूपी वनने भांगी नाखे छे मर्दन करे छे. जेम मत्त हाथी वनने भांगे तेम अनिवृत्त एवा आ योगो पण शीलने भांगे छे. ॥१६॥

जह जह दोसा विरमइ, जह जह विसएहिं होइ वेरगं ।

तह तह विनायव्वं, आसत्रं से अ परमपयं ॥१७॥

गाथार्थ : जेम जेम रागादि दोषो विराम पामे, जेम जेम विषयोथी वैराग्य थाय, तेम तेम जाणवुं के तेने (ते पुरुषने) परमपद नजीक छे. ॥१७॥

भाषांतर : जेम जेम रागादि दोषो विराम पामे अर्थात् निवर्ते (पाछा फरे) जेम जेम विषयोथी वैराग्य एटले के विरक्तपणुं

थाय तेनाथी निवृत्ति थाय, तेम तेम जाणवुं के ते पुरुषने परमपद-निःश्रेयस (मोक्ष) नजीकमां छे. नजीक छे मुक्तिपद जेने, एओने ज रागादिथी अटकवानुं होय छे. अने विषयोथी पण निवृत्ति तेओने ज होय छे. जे कारणे कह्युं छे के -

जे जीवनो भवनी सिद्धिनो आसन्नकाळ छे तेनुं आ लक्षण छे के सर्व पराक्रम वडे ते उद्यम करे के जेथी विषयसुखोमां ते रागी न थाय. ॥१७॥

दुष्करमेएहिं कयं, जेहिं समत्थेहिं जुव्वणत्थेहिं ।

भगं इंदिअ-सिन्नं, धिइ-पायारं विलग्गेहिं

॥१८॥

गाथार्थ : एओ वडे (ए पुरुषो वडे) दुष्कर करायुं छे के, यौवन अवस्थाने प्राप्त थयेला होवा छतां (इन्द्रिय दमनमां) समर्थ एवा, धृतिरूपी प्राकार (किल्ला) उपर आरूढ थयेला एवा जेओ वडे इन्द्रियरूपी सैन्य भांगी नंखायुं. ॥१८॥

भाषांतर : ए पुरुषो वडे दुष्कर अर्थात् दुःखे करीने साधी शकाय एवुं कार्य करायुं छे के जेओ वडे, यौवन अवस्थाने प्राप्त थयेला एवा पण इन्द्रिय दमनमां समर्थ एटले के प्रभु एवाओ वडे इन्द्रिय रूपी जे सैन्य-सेना ते भांगी नंखाई, दळी नंखाई, एटले के तरुण अवस्थामां पण जेओ वडे इन्द्रियो वश कराई तेओए दुष्कर कर्युं छे. जे कारणथी - दोषोना हेतुभूत एवा आ जन्ममां मति छे गहन जेमां एवुं यौवन जेना वडे अपवाद वगर (कोई कलंक वगर) ज ओळंगांयुं तेना वडे कयुं फळ प्राप्त नथी करायुं ? (अर्थात् बधुं ज फळ तेने मळ्युं छे) केवा थयेला तेओ वडे ? धृतिप्राकार अर्थात् धृति ते मननी धीरता ते रूप जे प्राकार किल्लो तेनी उपर चढेला एवा. धृतिरूप किल्ला उपर चडीने जेओ वडे इन्द्रियरूपी सेना जीताई तेना वडे कयुं फळ नथी मेळवायुं ? बीजाओ पण किल्लाना बळे शत्रुनी सेनाने जीते छे माटे अहीं ते घटे ज छे. ॥१८॥

ते धन्ना ताण नमो, दासोऽहं ताण संजमधराणं ।

अद्धच्छि-पिच्छरिओ, जाण न हिअए खुडुक्कंति

॥१९॥

गाथार्थ : जेओना हृदयमां अडधी आंख वडे जोवाना स्वभाववाळी स्त्रीओ नथी फरकती. तेओ धन्य छे, तेओने नमस्कार थाओ. ते संयम करनाराओनो हुं दास छुं. ॥१९॥

भाषांतर : ते धन्य छे, श्रेष्ठ छे, - चतुर्थीना अर्थमां हवे षष्ठी करी छे के ते पुरुषोने नमस्कार थाओ, ते संयम धारण करनाराओनो अर्थात् चारित्रीनो हुं दास छुं, किंकर छुं जेओना हृदयमां एटले के चित्तमां अर्धाक्षिदर्शनशीला अर्थात् अर्ध नयन वडे जो नारी ते स्त्रीओ खाट नथी करती एटले के फरकती नथी. जेओना हृदयने स्त्रीओ चलायमान नथी करती. तेओनो हुं दास छुं. जे कारणथी कह्युं छे के -

संशयोनुं आवर्त, अविनयनुं भवन, साहसोनुं गाम, दोषोनुं भंडार, सेंकडो कपटोनुं घर, अविश्वासनुं क्षेत्र, स्वर्गद्वारनुं विघ्न, नरकपुरना मुख समान, सर्वमायानो करंडियो, अमृतमय विष, प्राणीलोकने बांधनारुं एवुं आ स्त्री रूप यन्त्र कोना वडे रसजायुं ? ॥१९॥

किं बहुणा जइ वंछसि, जीव तुमं सासयं सुहं अरुअं ।

ता पिअसु विसय-विमुहो, संवेग-रसायणं निच्चं

॥१००॥

गाथार्थ : रे जीव ! वधारे कहेवा वडे शुं ? जो तुं रोगरहित एवा शाश्वत सुखने इच्छे छे तो विषयोथी विमुख थयेलो तुं संवेग रूपी रसायणने नित्य पी. ॥१००॥

भाषांतर : वधारे कहेवा वडे करीने शुं ? रे जीव, जो तुं शाश्वत एटले के अनंत, अरुज अर्थात् रोगरहित, सुख अर्थात् मुक्तिमां रहेली परमानंद रूप शाताने ईच्छे छे, वांछे छे तो तुं विषयोथी विमुख एटले के पराडमुख थयो छतो नित्य संवेग अर्थात् चित्तविरक्तता ते रूपी रसायण अर्थात् जरा अने मरणने दूर करनारा औषध तेने पी.

अन्य पण जे आरोग्यपणाने इच्छे छे ते खरेखर रसायणने पीए ज छे, ते ज रीते शिव एटले के अरोगरूप जे सुख तेने जो इच्छे छे, तो संवेग रसायणनुं पान करवा योग्य छे. ॥१००॥

वैराग्यशतकम्

प्रणम्य श्रीधरं पार्श्वं, पूर्वसूरिविनिर्मितम् ।
वैराग्यशतकं सम्यग्, विवृणोमि यथामति

॥११॥

गाथार्थ : केवलज्ञानरूपी लक्ष्मीने धारणकरनारा, श्री पार्श्वनाथ स्वामीने नमस्कार करीने पूर्वना आचार्य वडे रचायेला वैराग्यशतकने सारी रीते मारी बुद्धिनी क्षमता प्रमाणे वर्णन करुं छुं.

संसारम्मि असारे, नत्थि सुहं वाहि-वेअणापउरे ।
जाणंतो इह जीवो, न कुणइ जिणदेसिअं धम्मं

॥११॥

गाथार्थ : व्याधि अने वेदनाथी भरेला असार एवा संसारमां सुख नथी एम जाणतो होवा छतां पण संसारमां रहेलो जीव जीनेश्वर भगवंते कहेला धर्मने करतो नथी. ॥११॥

भाषांतर : असार एटले के अप्रधान एवा चारगतिरूप संसारमां तात्त्विकरीते अथवा घणुं करीने, शाता वेदनीय कर्मथी भोग्य एवुं कांईपण सुख विद्यमान नथी. संसारना असारपणानुं कारण कहेता कहे छे के केवा संसारमां ? व्याधि एटले के शरीरनी मांदगी वेदना एटले के मानसिक दुःख आ बन्नेथी भरेला एवा आ संसारमां प्राणीओने फक्त व्याधि अने वेदना ज वर्ते छे. ए प्रमाणे जाणतो एवो पण संसारमां रहेलो जीव जीनेश्वर भगवंतो वडे कहेवायेला अने पोते प्राप्त करेला एवा धर्मने कर्मनी बहुलता होवाने कारणे करतो नथी. धर्म कोने कहेवाय ? - दुर्गतिमां पडता प्राणीओने धारण करे ते धर्म. ॥११॥

अज्जं कल्लं परं परारिं, पुरिसा चिंतंति अत्थसंपत्तिं ।
अंजलिगयं व तोयं गलंत-माउं न पिच्छन्ति

॥१२॥

गाथार्थ : मूढ पुरुषो आजे काले, आवता वर्षे, अथवा पछीना वर्षमां मने अर्थसंपत्ति थशे एम विचारे छे परंतु अंजलिमां रहेला पाणीनी जेम गळता एवा आयुष्यने जोता नथी. ॥१२॥

भाषांतर : आदिपदोमां प्राकृत होवाथी अनुस्वार करेलो छे. मूढ मनुष्यो आजे, काले, आवता वर्षमां अथवा पछीना वर्षोमा मने धननी प्राप्ति थशे एम विचारे छे. जेम के- आजना दिवसे मने द्रव्यसंपत्ति मळशे, अथवा काले मळशे अथवा आवता वर्षे मळशे अथवा पछीना वर्षे मळशे ए प्रमाणे आशाथी बंधायेला रहे छे. परंतु अंजलिमां रहेला पाणीनी जेम गलता एवा आयुष्यने विचारता नथी. जेम अंजलिमां रहेलु पाणी थोडा पण काल सुधी रहेतु नथी. ते प्रमाणे आयुष्य पण आवीचिमरण। वडे क्षणे क्षणे क्षय थाय छे ते आयुष्य केटला काळ सुधी रहेशे ? ए प्रमाणे मूढपणाथी जीवो जाणता नथी. ॥१२॥

जं कल्ले कायव्वं तं अज्जं चिय करेह तुरमाणा ।
बहुविग्धो हु मुहुत्तो, मा अवरण्हं पडिक्खेह

॥१३॥

गाथार्थ : जे काले करवा योग्य छे ते आजे ज जल्दीथी करो, सांजनां समयनी राह न जुओ कारण के मुहूर्त घणा विघ्नवाळुं छे. ॥१३॥

भाषांतर : हे प्राणीओ ! जे पछीना दिवसे करवा योग्य धर्मकरणी छे, ते विलंबकर्या वगर आजे ज करो (अहिं चिप्र शब्दनो एवकार अर्थ छे.) कारण के निश्चे घणा अंतराय छे जेमां एवुं बहु विघ्नवाळुं मुहूर्त एटले काळ छे. आथी सांजना समय सुधी विलंब न करो. आवती काले आवती काले एम उपासना न करवी कारण के

मनुष्यनी आवती काल कोण जाणे छे ?” ॥३॥

ही ! संसारसहावं-चरियं नेहाणुरायरत्ता वि ।

जे पुव्वण्हे दिट्ठा, ते अवरण्हे न दीसन्ति

॥४॥

गाथार्थ : संसारना स्वभावनुं चरित्र केवुं छे ? खेद सूचक छे. कारण के स्नेहना अनुरागथी आसक्त पण स्वजनादि जे प्रातःकाले जोवायेला छे, ते संध्यानां समये देखाता नथी. ॥४॥

भाषांतर : ‘म’ कार अलाक्षणिक छे. संसारना स्वभावनुं आचरण जोईने खरेखर मने विषाद थाय छे. शामाटे विषाद थाय छे ? तो कहे छे के बीजा सामान्य मनुष्यो तो दूर रहो पण जे प्रेमना बन्धन वडे रागी थयेला स्वजनादिओ पण जेओ प्रातःकाले जोवायेला छे तेओ तेवा ज स्वरूपे सन्ध्याना समये देखाता नथी. स्नेहना अनुरागथी रक्त थयेलाओनो खरेखर वियोग न थतो होवाथी अहिं स्वजनो ग्रहण कर्या छे. परंतु संसारमां क्षणवार पहेला जोवायेलुं पण नष्ट थतुं होवाथी स्वजनोनो पण वियोग थाय छे. तेमां कांई ज आश्चर्य पामवा जेवुं नथी. ॥४॥

मा सुयह जग्गियव्वे, पलाइयव्वम्मि कीस विसमेह ? ।

तित्रि जणा अणुलग्गा, रोगो अ जरा अ मच्चू अ

॥५॥

गाथार्थ : हे जीवो जागवाने ठेकाणे सूई न रहो. ज्यांथी नाशी जवुं जोईए त्यां विसामो खावा केम बेठा छो ? कारण के रोग जरा अने मृत्यु ए त्रण मनुष्यो तमारी पाछळ पड्या छे. ॥५॥

भाषांतर : हे जीवो ! कर्तव्यरूप धर्मकार्यना अवसरे तमे सूई न रहो. प्रमाद न करवो जोईए. आ संसारथी नाशी जवा योग्य छे. तो कया कारणथी तमे संसारमां विसामो खावा बेठा छो ? अर्थात् के आवा संसारमां तमे खेदने केवी रीते दूर करशो ? जे कारणथी त्रण मनुष्यो तमारी पाछळ लागेला छे. ते कया त्रण मनुष्यो ? तो कहे छे के रोग-अतिसारादि, जरा-वयनी हानि, अने मृत्यु आ त्रणे पाछळ पडेला छे. आथी धर्ममां प्रमाद न करवो जोईए व्यवहारमां पण लोक जागवा योग्य स्थानमां सूतो नथी अने नाशी जवा योग्य स्थानमां विश्राम नथी करतो. अही रोग-जरा-अने मृत्यु ए त्रण ने “जन” ए प्रमाणे लोकउक्ति वडे ज कहेवायेलुं छे. वास्तविक रीते तेओ आत्माना (वैभाविक) धर्म स्वरूपे छे.

दिवस-निसाघडिमालं, आउसलिलं जिआण द्येत्तूणं ।

चंदाइच्चबइल्ला, कालरहट्टं भमाडन्ति

॥६॥

गाथार्थ : चन्द्र अने सूर्यरूपी बळदो दिवस अने रात्रि रूपी घडाओनी पंक्ति वडे जीवोना आयुष्य रूपी पाणीने ग्रहण करी काळ रूपी रेंटने फेरवे छे. ॥६॥

भाषांतर : चन्द्र अने सूर्यरूपी बळदो दिवस अने रात्रि रूपी घडाओनी पंक्ति वडे जीवोना आयुष्य रूपी पाणीने ग्रहण करीने परिवर्तन स्वरूप जे काळ छे, ते काळ रूप रेंटने फेरवे छे, अर्थात् के घडीकमां ऊंचे घडीकमां नीचे फेरवे छे. ॥६॥

सा नत्थि कला तं नत्थि, उसहं तं नत्थि किंपि वित्राणं ।

जेण धरिज्जइ काया, खज्जन्ती कालसप्पेण

॥७॥

गाथार्थ : काळरूपी सर्प वडे भक्षण कराती काया, जे रक्षण करी शकाय एवी कोई कला नथी, एवुं कोई औषध नथी, एवुं कोई विज्ञान पण नथी. ॥७॥

भाषांतर : - बहोतेर कळामांथी एवी कोई कळा नथी, अने तेवुं कोई औषध नथी, तेमज तेवुं कोई शिल्प आदि विज्ञान पण नथी के जे कळा आदि वडे काल एटले के मृत्यु, ते रूपी जे सर्प तेना वडे भक्षण कराती काया धारण

करी शकाय एटले के खाता एवा काल रूपी सर्प वडे रक्षण करी शकाय. ॥७॥

दीहरफणिंदनाले, महियरकेसर दिसामहदलिल्ले ।

ओ पियइ कालभमरो, जणमयरंदं पुहविपउमे

॥८॥

गाथार्थ : घणा खेदनी वात छे के शेषनाग रूप मोटा नाळचावाळा पर्वत रूपी केसरावाळा, दिशा रूप विशाळ पांदडावाळा, पृथ्वी रूपी कमळमां काळ रूप भ्रमर मनुष्य रूप रसने पीवे छे ॥८॥

भाषांतर -औ अव्यय खेद अर्थमां छे. काल रूप भमरो,पृथ्वी रूप जे कमल, ते कमळमां लोक रूपी रसने पीवे छे अन्य एटले के प्राणी रूप भ्रमर पण कमळमां रसने पीवे छे. ते प्रमाणे कालरूप भ्रमर पृथ्वी रूप कमळमां मनुष्य रूपी रसने पीवे छे. ए प्रमाणे कहेवानो भाव छे. अपराध नहीं कर्ये छते पण द्विपद-चतुष्पद-बहुपद-अपद-समृद्ध अने निर्धनने अपकार नहि करनारने पण हताश (आशा वगेरनो अपेक्षा वगरनो) एवो यम सतत हरण करे छे. केवा प्रकारना पृथ्वी रूपी कमलमां ? लांबा शेषनाग रूपी नाळचावाळा कमळमां. आ विशेषण लोकोकित वडे करेलुं छे. तथा पर्वतो रूपी केसरा जेने विषे छे तेवा कमळमां. अहीं प्राकृत होवाथी विभक्तिनो लोप करेलो छे. तथा दश दिशा रूपी मोटा पांदडा जेने विषे छे तेवा पृथ्वीरूपी कमलमां ग्रहण करेल छे. ॥८॥

छायामिसेण कालो, सयल जिआणं छलं गवेसंतो ।

पासं कहवि न मुंचइ, ता धम्मे उज्जमं कुणह

॥९॥

गाथार्थ : पडछायाना बहाना वडे सघळा जीवोना छलने शोधतो एवो काल कोईना पण पडखाने मूकतो नथी. ते कारणथी तमे धर्ममां उद्यमने करो. ॥९॥

भाषांतर : हे प्राणीओ ! पोतपोताना शरीरना प्रतिबिम्बना दंभ वडे आ यमराजा सघळा जीवोना छिद्रने शोधतो प्राणीनी क्यारेय पण केड - छेडो मूकतो नथी. वास्तविक रीते तो प्राणीओनी आ छाया नथी परंतु यम ज प्राणीओना छिद्र अर्थात् दोषोने शोधे छे. क्यारे आ जीव रखलना पामे अने क्यारे हुं तेने ग्रहण करुं ए प्रमाणेनी इच्छाथी ते दरेक जीवनी पाछळ पडेलो छे. ते कारणथी तमे जीनेश्वर भगवंते कहेला अहिंसादि रूप धर्ममां उद्यम करो. ज्यां सुधी यम वडे ग्रहण करायेला नथी त्यां सुधी कांईक पुण्यने करो. ॥९॥

कालम्मि अणाईए, जीवाणं विविहकम्म-वसगाणं ।

तं नत्थि संविहाणं, संसारे जं न संभवइ

॥१०॥

गाथार्थ : अनादिकालिन एवा आ संसारमां विविध प्रकारना कर्मने वश थयेला जीवोने एवो कोई संबंध नथी के जे न संभवे, अर्थात् के समग्र संबंधोथी जीवो संसारमां भटक्या छे. ॥१०॥

भाषांतर : जेनी आदि एटले के शरूआत नथी एवा अनादि तेमज परिवर्तन स्वरूप एवा काळमां आ संसारमां विविध प्रकारना कर्मने आधीन प्राणीओने तेवो कोई जीवो भेद नथी के जे न घटतो होय अर्थात् के सर्वे भेदोथी सर्वे संसारी जीवो घणीवार जोडायेला छे. विविध प्रकारना कर्मथी प्रेरायेला जीवो वडे जुदा जुदा प्रकारनी जातिओमां सर्वे पण एकेन्द्रिय -बेइन्द्रिय आदि भेदो प्राप्त कराया छे. ॥१०॥

बंधवा सुहिणो सव्वे, पिय-माया-पुत्त-भारिया ।

पेयवणाउ नियत्तंति, दाऊणं सलिलंऽजलिं

॥११॥

गाथार्थ : स्वजनो, मित्रो, माता, पिता, पुत्र, स्त्री ए सर्वे व्यक्ति मृत्यु पाम्या पछी पाणीनी अंजली आपी स्मशानथी पाछा जाय छे ॥११॥

भाषांतर : सर्वे पण बांधवो एटले स्वजनो, मित्रो, माता, पिता (प्राकृत होवाथी सूत्रमां पिता-माता आ प्रमाणे विपर्यय

छे.) पुत्र, पत्नी वगैरे मृत्यु पामेल व्यक्तिने पाणीनी अंजली आपीने स्मशानथी पोताना घरे पाछा जाय छे. परंतु मृत्यु पामेल व्यक्तिनी पाछळ जता नथी. ॥११॥

विहडन्ति सुआ विहडन्ति, बंधवा वल्लहाय विहडन्ति ।

इक्को कह वि न विहडइ, धम्मो रे जीव ! जिणभणिओ ॥१२॥

गाथार्थ : हे जीव ! पुत्रो विखूटा पडे छे, बान्धवो विखूटा पडे छे, स्त्रीओ पण विखूटी पडे छे परंतु एक धर्म, जे जिनेश्वर भगवंते कहेलो छे तेनो क्यारे पण वियोग थतो नथी. ॥१२॥

भाषांतर : हे आत्मा ! पुत्रो विखूटा पडे छे. पोताना करता पुत्रोनुं मरण कोईवार पहेलां थाय छे. तथा स्वजनो विखूटा पडे छे. तथा स्त्रीओनो मरण वडे वियोग थाय छे. अथवा तो अन्य पुरुषोनी साथे संयोग थवाथी वियोग थाय छे अन्य सर्वे वस्तुनो वियोग थाय छे परंतु एक श्री जिनेश्वर भगवंते कहेल धर्मनो क्यारेय वियोगो थतो नथी धर्म आलोक अने परलोकमां पण सुखनुं कारण होवाथी आत्माथी ते क्यारेय छूटो पडतो नथी ॥१२॥

अडकम्मपास-बद्धो, जीवो संसारचारए ठाइ ।

अडकम्मपास-मुक्को, आया सिवमंदिरे ठाइ ॥१३॥

गाथार्थ : आठ कर्मरूप पाशथी बंधायेलो एवो जीव संसाररूप केदखानामां रहे छे. आठ कर्मरूप पाशथी मूकायेलो जीव मोक्षमंदिरमां जईने रहे छे. ॥१३॥

भाषांतर : हे आत्मा ! आठ प्रकारना कर्मरूपी जे पाशा छे तेना वडे बंधायेलो एवो आ जीव संसाररूप केदखानामां रहे छे. आठ प्रकारना कर्म रूप पाशथी रहित थयेलो आत्मा मोक्ष रूप महेलमां रहे छे. ज्यारे आत्मा कर्मरहित थाय छे त्यारे एक समय वडे अन्यक्षेत्रने स्पर्श कर्या वगर - मोक्षमां जाय छे. ॥१३॥

विहवो सज्जणसंगो विसयसुहाइं विलासललिआइं ।

नलिणीदलगधोलिर,-जललव-परिचंचलं सव्वं ॥१४॥

गाथार्थ : वैभव स्वजनोना संबंध, विलास वडे मनोहर विषय सुखो आ सर्वे कमलना पत्रना अग्रभागमां रहेला चंचळ पाणीना बिंदुनी जेम अतिशय चंचळ छे. ॥१४॥

भाषांतर : वैभव एटले धन, तथा पिता, माता, भाई, पत्नी विगैरे स्वजनोना संबंध तथा लीला वडे मनोहर विषयसुखो आ सर्वे, कमलना पांदडाना छेडे रहेलुं, कंपवाना स्वभाववाळुं जे पाणीनुं बिन्दु छे तेनी जेम अतिशय अस्थिर छे. जे प्रमाणे कमलना पांदडाना छेडाना भागमां रहेलुं जलनुं बिन्दु पवन वडे थोडा ज समयमां पडी जतुं होवाथी अल्पकाल ज रहे छे तेनी जेम वैभवादि सर्वे पण अस्थिर छे ॥१४॥

तं कथ बलं तं कथ, जुव्वणं अंगचंगिमा कथ ? ।

सव्वमणिच्चं पिच्छह, दिट्टं नट्टं कयंतेण ॥१५॥

गाथार्थ : शरीरनुं ते बळ क्यां गयु ? ते जुवानी क्यां गई ? शरीरनुं सौन्दर्य क्यां गयुं ? काळ वडे ते सर्वे थोडा ज वखतमां हतुं न हतुं करायुं छे. आथी ते सर्वे अनित्य छे तेम जुओ ॥१५॥

भाषांतर : हे प्राणीओ ! तरुणावस्थामां जे तमारुं बळ एटले पराक्रम हतुं ते क्यां गयुं ? तथा ते यौवन एटले के तरुणपणुं क्यां गयुं ? तथा शरीरनी उत्कृष्टता क्यां गई ! पूर्वे जे जे वस्तु जे स्वरूपे जोवायेली हती ते ते वस्तु ते स्वरूपे पाछळथी काळ वडे नष्ट करायेली छे. ते कारणथी ते सर्वे पदार्थोने अनित्य स्वरूपे जुओ. पूर्वे जे शरीर बळ, सौन्दर्य अने जुवानीथी युक्त हतुं, ते ज शरीर हमणां काळ वडे बळ, सौन्दर्य अने जुवानीथी रहित करायुं छे. तेथी ते शरीरमां श्रद्धा केवी रीते थाय ? ॥१५॥

घणकम्मपास-बद्धो, भवनयर-चउप्पहेसु विवहाओ ।

पावइ विडंबणाओ, जीवो को इत्थ सरणं से

॥१६॥

गाथार्थ : गाढ कर्मरूप पाशथी बंधायेलो जीव आ संसाररूप नगरना चारगति रूप मार्गमां अनेक प्रकारनी विडम्बनाने पामे छे, अहीं तेनुं कोण शरण छे ? ॥१६॥

भाषांतर : हे जीव ! आ आत्मा गाढ कर्म रूप जे बन्धनो छे, तेना वडे बंधायेलो, संसार रूपी नगरना चारगति रूप जे मार्गो ते मार्गमां अर्थात् के चारेगतिमां, विविध एटले शरीर अने मनने दुःख आपनारी अनेक प्रकारनी वध-बन्धनादि रूप विडम्बनाओ पामे छे. आथी आ संसारमां प्राणीओने कोण शरण छे ? के जेना अवलम्बनथी तेओ विडंबनाने न पामे ! ॥१६॥

घोरंमि गब्भवासे कलमल-जंबाल-असुइबीभच्छे ।

वसिओ अणंतखुत्तो, जीवो कम्माणुभावेण

॥१७॥

गाथार्थ : कर्मना प्रभाव वडे आ जीव वीर्य अने मळ रूप कादवनी अशुचिथी भयानक अने रौद्र एवा गर्भवासमां अनंती वार वस्यो छे. ॥१७॥

भाषांतर : घोर एटले रौद्र एवा गर्भवास एटले माताना उदरना एक भागमां, आ जीव शुभाशुभ कर्मना प्रभाव वडे अनंतीवार वस्यो छे. केवा प्रकारना गर्भवासमां ? वीर्य अने मळ रूप जठरना द्रव्यना समूह रूप जे कादव, ते रूप अशुचिथी उद्वेग करनार अति भयजनक एवा गर्भवासमां जीव वस्यो छे. ॥१७॥

चुलसीइ किर लोए, जोणीणं पमुहसयसहस्साइं ।

इक्किक्कम्मिअ जीवो, अणंतखुत्तो समुप्पन्नो

॥१८॥

गाथार्थ : लोकने विषे जीवने उत्पन्न थवाना स्थान रूप योनि चोराशी लाख छे. ते एक एक योनिमां आ जीव अनंती वार उत्पन्न थयो छे. ॥१८॥

भाषांतर : किल एटले के खरेखर, आगममां कहेलुं छे के लोकमां जीवना उत्पत्तिस्थानो रूप योनिना चोराशी लाख भेद विद्यमान छे, ते उत्पत्तिस्थानोने योनि केहवाय छे. ते एक एक योनिमां जीव अनंतीवार उत्पन्न थयो छे. ॥१८॥

माया-पिय-बंधूहिं, संसारत्थेहिं पूरिओ लोओ ।

बहुजोणिनिवासीहिं, न य ते ताणं च सरणं च

॥१९॥

गाथार्थ : संसारमां रहेला अने चोराशी लाख योनिमां वसता एवा माता-पिता अने बन्धुओ वडे आ लोक भरेलो छे, पण ते कोई तारुं रक्षण करनार नथी तेमज शरण आपनार पण नथी ॥१९॥

भाषांतर : चोराशी लाख प्रमाणवाळी योनिमां वसता अने संसारमां रहेला एवा माता-पिता अने बन्धुओ वडे आ चौदराज लोक पूरायेलो छे. आ सर्वे जन्तुओ क्यारेक माता पणे उत्पन्न थाय छे, क्यारेक पितापणे तो क्यारेक बन्धुपणे उत्पन्न थाय छे, अने ते संसारमां रहेला मातादि स्वजनो रक्षण रूप थता नथी. आपत्तिमांथी तारवामां जे समर्थ होय तेने त्राण कहेवाय छे, जे प्रमाणे महाप्रवाहो वडे तणाई जतो व्यक्ति होंशियार एवा नाविक वडे अधिष्ठित एवा वहाणने प्राप्त करीने पाणीने तरी जाय छे, एनी जेम मातापितादि स्वजनो संसार रूप समुद्रने पार उतरवामां समर्थ थता नथी. अने तेओ शरणरूप पण नथी. जेना आलंबनने पामीने निर्भयपणे रहेवाय ते शरण कहेवाय. महाप्रवाहमां तणाता प्राणीओने किल्लो, पर्वत अथवा पुरुष पण शरण रूपे क्यारेक प्राप्त थई जाय छे. परंतु संसाररूप महासमुद्रमां तणाता जीवोने मातापितादि कोई शरण रूप थतु नथी. कहेलुं छे के जन्म-जरा-मरणना भयोथी उपद्रव पामेला अने व्याधि अने वेदनादि ग्रस्त थयेला एवा आ लोकमां जिनवचनथी अन्य बीजुं कोई शरण नथी. ॥१९॥

जीवो वाहिविलुत्तो, सफरो इव निज्जले तडफ्फडए ।

सयलो वि जणो पिच्छइ, को सक्को वेअणाविगमे ? ॥२०॥

गाथार्थ : ज्यारे रोगोथी घेरायेलो आ जीव, जल विनाना माछलानी जेम तडफडे छे त्यारे सर्वे पण स्वजनो तेने रोगोथी पीडातो देखे छे, छतां तेमांथी कोण तेनी वेदना दूर करवाने समर्थ थाय छे ? ॥२०॥

भाषांतर : विविध प्रकारना रोगोथी घेरायेलो जीव, जल रहित प्रदेशमां रहेला माछलानी जेम तडफडे छे, एटले के आकुळ-व्याकुळ थाय छे. रोगो वडे पीडाता तेवा प्रकारना जीवने सघळा स्वजनो देखे छे. परंतु तेनी पीडाने दूर करवामां कोण पुरुष समर्थ थाय ? अर्थात् के कोईपण स्वजन तेनी पीडाने दूर करी शकतुं नथी. ॥२०॥

मा जाणसि जीव ! तुमं, पुत्त-कलत्ताइ मज्झ सुहहेऊ ।

निउणं बंधणमेयं, संसारे संसरंताणं

॥२१॥

गाथार्थ : हे जीव ! तुं आ संसारने विषे पुत्र स्त्री विगेरे, मने सुखना हेतु थशे एम जाण नहीं, कारण के संसारमां भ्रमण करता जीवोने ए पुत्र-स्त्री विगेरे गाढ संसार बंधननुं कारण थाय छे. ॥२१॥

भाषांतर : हे आत्मा ! तुं ए प्रमाणे जाण नहीं के पुत्र-स्त्री विगेरे मने सुखना हेतु थशे. तो शुं जाणवुं ? तो कहे छे के आ संसारमां नारक तिर्यच आदि विविध रूप वडे भ्रमण करता जीवोने पुत्री-स्त्री विगेरे गाढ बंधन रूप छे. आ बंधनथी बंधायेला जीवो ज संसारमां रहे छे. ए प्रमाणे जाण. ॥२१॥

जणणी जायइ जाया, जाया माया पिआ य पुत्तो य ।

अणवत्था संसारे, कम्मवसा सब्बजीवाणं

॥२२॥

गाथार्थ : संसारमां कर्मना वशथी सर्वे जीवोने अनवस्था छे के जे, भवमां माता होय छे ते भवान्तरमां स्त्री थाय छे, जे स्त्री होय छे ते माता रूपे थाय छे, पिता होय ते पुत्र रूपे उत्पन्न थाय छे अने पुत्र होय छे ते भवांतरमां पिता रूपे थाय छे. ॥२२॥

भाषांतर : हे जीव ! संसारमां कर्मना वशथी एटले कर्मनी पराधीनताथी सर्वे जीवोने अनियमितपणुं होय छे. तेने ज कहे छे के जे आ भवमां माता होय छे ते ज अन्यभवमां पत्नीपणे उत्पन्न थाय छे., जे पत्नी होय छे ते माता रूपे उत्पन्न थाय छे तथा कर्मना वशथी पिता पुत्र रूपे थाय छे अने पुत्र अन्यभवमां पिता रूपे थाय छे. आथी अनियमितपणुं ज छे. जो माता होय ते माता रूपे ज भवांतरमां थाय अने पत्नी होय ते पत्नी रूपे ज थाय तो नियमितपणुं कहेवाय पण ते प्रमाणे तो थतुं नथी. आथी ज ते अनवस्था अर्थात् अनियमितपणुं कहेवाय. तथा श्रीमद् भगवतीमां आ प्रमाणे कहेलुं छे - हे भगवंत ! जीवो सर्वे जीवोना मातापणे, पितापणे, बंधुपणे, बहेनपणे, पत्नीपणे, पुत्रपणे, पुत्रीपणे, पूर्व उत्पन्न थयेला छे ? हे गौतम ! अनेक प्रकारे अथवा अनेकवार. हे भगवंत ! सर्वे जीवो आ जीवना मातापितादिपणे पहेला उत्पन्न थयेला छे ? हे गौतम ! सर्वे जीवो आ जीवना मातादिपणा वडे अनेकवार उत्पन्न थया छे. हे भगवंत ! जीवो, सर्वे जीवोना सामान्यथी शत्रुभाव वडे करीने, वैरिपणा वडे करीने, मारनारपणा वडे करीने, व्यथकपणा वडे करीने, प्रत्यनीकपणा वडे करीने, मित्र तरीके सहायपणुं नहि करवा द्वारा पहेला उत्पन्न थयेला छे ? हे गौतम ! अनंतीवार उत्पन्न थयेला छे. हे भगवंत ! सर्वे जीवो आ जीवना ए ज प्रमाणे उत्पन्न थया छे. हे भगवंत ! जीवो सर्वे जीवोना राजापणे, युवराजपणे यावत् सार्थवाहपणे पहेला उत्पन्न थया छे ? हे गौतम ! अनेक वार यावत् अनंतवार. ए ज प्रमाणे सर्वे जीवो जीवना राजादिपणा

वडे उत्पन्न थया छे. एज प्रमाणे हे भगवंत ! जीवो सर्वे जीवोना दासपणे, प्रेष्यपणे, भृतकपणे भाग ग्रहणकरवापणे भोगिक पुरुषपणे शिष्यपणे द्वेष्यपणे पहेला उत्पन्न थया छे ? हे ! गौतम ! यावत् अनंतीवार. आ प्रमाणे सर्वे जीवो अनंतीवार थयेला छे. ए प्रमाणे बारमा शतकना सातमा उद्देशामां छे. ॥२२॥

न सा जाई न सा जोणी, न तं ठाणं न तं कुलं ।

न जाया न मुया जत्थ, सव्वे जीवा अणंतसो

॥२३॥

गाथार्थ : संसारमां एवी कोई जाति नथी, एवी कोई योनि नथी, एवंु कोई स्थान नथी, एवंु कोई कुल नथी के ज्यां सर्वे जीवो अनंतीवार जन्म्या न होय अने अनंतीवार मृत्यु पाम्या न होय. ॥२३॥

भाषांतर : संसारमां क्षत्रियादि एवी कोई जाति नथी, जीवोना उत्पत्तिस्थान रूप एवी कोई योनि नथी, एवंु कोई आकाशप्रदेशरूप स्थान नथी. तथा श्री भगवती सूत्रमां कहेलुं छे के “महान एवा लोकमां हे भगवंत ! केटला परमाणु पुद्गल मात्र प्रदेश छे के ज्यां आ जीव जन्म्यो न होय के मर्यो न होय ? हे गौतम ! ते कार्य माटे एक पण प्रदेश समर्थ नथी. हे भगवंत ! शा माटे आप ए प्रमाणे कहो छो के आ महान लोकमां कोईपण परमाणु पुद्गलमात्र पण प्रदेश नथी ज्यां आ जीव जन्म्यो के मर्यो न होय ? हे गौतम ! कोईक नामना कोईक पुरुषे सो बकरीओ माटे एक मोटो बकरीओनो वाडो कर्यो. ते तेमां जघन्यथी एक अथवा बे अथवा त्रण अने उत्कृष्टथी एक हजार बकराओने नाखे. तेओ त्यां घणी चरवानी भूमिथी अने घणा पाणीथी (खोराक मेळवे) पछी एक दिवस अथवा बे दिवस अथवा त्रण दिवस अथवा उत्कृष्टथी छ मास सुधी वसे, तो हे गौतम ! बकरीओना वाडाना केटला परमाणुपुद्गल मात्र प्रदेश ते बकरीओना मळ वडे, मूत्र वडे, श्लेष्म वडे, कानना मेल वडे, वमन वडे, पित्त वडे, परु वडे, वीर्य वडे, लोही वडे, चर्म वडे, रोम वडे, शींगडा वडे, खरी वडे, नख वडे स्पर्शाया वगर बाकी रहे ? भगवन् ! ते समर्थ नथी (एक पण आकाशप्रदेश स्पर्शाया वगर बाकी न रहे) गौतम ! ते बकरीना वाडाना केटलाक परमाणुपुद्गलमात्र प्रदेश बाकी रहे जे ते बकरीओना मळ वडे यावत् नख वडे स्पर्शाया वगर बाकी रहे ज्यारे आ मोटा लोकमां एवो एक प्रदेश पण बाकी न रहे. लोक शाश्वत छे अने संसार अनादि छे. जीव नित्य छे, कर्मनुं बहुलपणुं छे. जन्म-मरणनी बहुलताए बधाने आश्रयीने कोई परमाणु पुद्गलमात्र प्रदेश नथी ज्यां जीव जन्म्यो न होय ते कारणथी एक पण पुद्गलमात्र प्रदेश आखा मोटा लोकमां नथी के ज्यां जीव जन्म्यो न होय अने मर्यो न होय ए प्रमाणे श्री भगवती सूत्रना बारमा शतकमां सातमा उद्देशामां कहेलुं छे. तथा उग्रादि एवंु कुल नथी जेमां जाति आदिमां सर्वे जीवो अनंतवार जन्म्या न होय एटले के उत्पन्न न थया होय अने मर्या न होय एटले के प्राणनो त्याग न कर्यो होय. आना वडे व्यवहारराशिमां आवेला जे जीवो अनंतकाळ रहेला विद्यमान छे, तेओनी सर्वे पण जाति आदिमां उत्पत्ति थयेली ज छे ए प्रमाणे संभवे छे विशेष आ अभिप्रायने तो बहुश्रुतो ज जाणे छे. ॥२३॥

तं किंपि नत्थि ठाणं, लोए वालग्ग-कोडिमिंतपि ।

जत्थ न जीवा बहुसो, सुह-दुक्ख-परंपरं पत्ता

॥२४॥

गाथार्थ : लोकने विषे वालना अग्रभागना असंख्याता भाग जेटलुं पण एवंु कोई स्थान नथी के ज्यां जीवो घणी वार सुख दुःखनी परंपराने न पाम्या होय. ॥२४॥

भाषांतर : हे जीव ! लोकने विषे कोई मोटुं क्षेत्र तो दूरे रहो, पण एक वालना अग्रभागना छेडा मात्र जेटलुं पण क्षेत्र नथी के ज्यां वाळना अग्रभागना छेडा मात्र जेटला स्थानमां घणीवार जीवोए शाता आशाता रूप सुखदुःखनी परंपराने अनेकवार प्राप्त न करी होय. कर्मने आधीन थयेला जीवोए सर्वत्र क्यारेक सुख तो क्यारेक दुःख ने प्राप्त कर्युं छे. ॥२४॥

सव्वाओ रिद्धिओ, पत्ता सव्वे वि सयणसंबंधा ।

संसारे ता विरमसु, तत्तो जइ मुणसि अप्पाणं

॥२५॥

गाथार्थ : हे जीव ! संसारने विषे सर्वे संपत्तिओ अने सर्वेनी साथे स्वजनना संबंधो पाम्यो छे, पण हजु सुधी सुखी थयो नथी. तेथी जो आत्माना स्वरूपने जाणवा इच्छतो होय तो ते रिद्धि तथा संबंधोथी विराम पाम ॥२५॥

भाषांतर : हे आत्मा ! संसारमां भटकता एवा तारावडे सर्वे संपत्तिओ प्राप्त कराई छे. अहीं अपि शब्द च अर्थमां छे. वळी तारावडे सर्वे माता-पिता भाई विगरे भेदोथी भिन्न स्वजनोना संबंधो प्राप्त कराया छे. जे कारणथी कह्युं छे के “दरेक युगमां हजारो मातापिता सेंकडो पुत्र अने पत्नीओ व्यतीत थयेला छे. तेथी तेओने विषे मोह करवो ते योग्य नथी” (१) अने अयोग्यपणुं आ छे के पत्नीओ पराभव करनारी छे, बधुंजनो बंधन रूप छे, विषयो विष स्वरूप छे, तो पण लोकनो आ केवो मोह के जे शत्रुओ छे तेओने विषे मित्रनी आशा राखे छे (२) ते कारणथी जो तुं आत्माने सुखी करवा इच्छे छे तो ते संपत्ति अने स्वजनोना संबंधोथी विराम पाम एटले के पाछो फर. विराम (विरति) सुखनुं कारण छे. ॥२५॥

एगो बंधइ कम्मं, एगो वह-बंध-मरण-वसणाइ ।

विसहइ भवम्मि भमडइ, एगु च्चिअ कम्म-वेलविओ ॥२६॥

गाथार्थ : आ जीव एकलो ज कर्मबंध करे छे. वध, बंध मरण अने आपत्तिने एकलो ज सहन करे छे. वळी कर्मथी ठगायेलो एकलो ज आ जीव संसारमां भमे छे. ॥२६॥

भाषांतर : असहाय एवो एकलो ज जीव ज्ञानावरणीयादि आठ कर्मोने बांधे छे, एटले के आत्मानी साथे एकमेक करे छे. तथा एकलो ज भवांतरमां वध एटले ताडन, बंध एटले दोरडादि वडे बंधन, प्राणना त्याग रूप मरण, तथा आपत्तिने सहन करे छे, अनुभवे छे. नरकादि गतिमां वधबन्धादि प्राप्त करे छे. तथा एकलो ज कर्मोथी ठगायेलो एटले पुण्य करवाथी ठगायेल संसारमां भमे छे. वश्च धातुनो वेलव आदेश थाय छे. ॥२६॥

अत्रो न कुणइ अहिअं, हिअंपि अप्पा करेइ न हु अत्रो ।

अप्पकयं सुह-दुक्खं, भुंजसि ता किस दीणमुहो ॥२७॥

गाथार्थ : हे जीव ! अन्य कोईपण तारु अहित करतुं नथी, हित पण आत्मा पोते ज करे छे, अन्य कोई करतुं नथी. पोते ज करेला (कर्म करीने) सुख-दुःखने तुं भोगवे छे, तो शा माटे दीन मुखवाळो थाय छे. ॥२७॥

भाषांतर : हे आत्मा ! वधबन्धादिक अनिष्टने अन्य कोई पण करतुं नथी, जे हुं आना वडे मरायो इत्यादि बीजाए करेलुं छे एम तुं न विचार. तथा सुखना कारणोना समूहने पण आत्मा पोते ज करे छे. ‘हुं’ निश्चय अर्थमां छे एटले बीजुं कोई ज करतुं नथी, तेथी शुभाशुभ कर्मोथी प्रेरित एवा आत्मा वडे करायेला सुखदुःखने तुं भोगवे छे, तो शा माटे तुं विलखा मुखवाळो थाय छे ? जो बीजा वडे कांईक ईष्ट अथवा अनिष्ट करायेलुं होय तो तारे ते बंने उपर राग-द्वेष करवो उचित गणाय, परंतु पोतानो आत्मा ज सर्वे करे छे. तथा श्री उत्तराध्ययनमां कहेलुं छे के आत्मा ए ज वैतरणी नदी छे. आत्मा एज कूट शात्मली वृक्ष छे. (नरकमां रहेलुं वृक्ष) आत्मा ज कामधेनुं गाय छे. अने आत्मा ज नंदनवन छे (१) आत्मा ज सुख अने दुःखनो कर्ता अने विकर्ता एटले नाश करनारो छे. दुःप्रस्थित अने सुप्रस्थित एवो आत्मा ए ज अनुक्रमे शत्रु अने मित्र छे. ॥२७॥

बहुआरंभ-विढत्तं वित्तं, विलसंति जीव सयणगणा ।

तज्जणियपावकम्मं, अणुभवसि पुणो तुमं चेव ॥२८॥

गाथार्थ- हे जीव ! तें घणा आरंभो करीने उपार्जन करेला धनने स्वजनो भोगवे छे. पण ते धन उपार्जन करतां बांधेला पापकर्मो तारे ज भोगववां पडे छे ॥२८॥

भाषांतर : हे आत्मा ! तारा वडे खेती व्यापारादि रूप घणा आरंभ वडे उपार्जन करेला धनने पिता-माता-भाई-पुत्रादि स्वजनो भोगवे छे अर्थात् के धनना फलने भोगवनारा स्वजनो थाय छे, अने ते आरंभ वडे उपार्जन करेला ज्ञानावरणीयादि अशुभप्रकृति रूप कर्मने नरकादि दुर्गतिमां तुं एकलो ज अनुभवे छे. वर्तमानना सामीप्यपणा थी एटले के वर्तमाननी नजीकमां रहेलुं भविष्य वर्तमाननी जेम थाय छे. आ प्रमाणेना आर्षवचनथी अहीं भविष्यकालना ‘अनुभविष्यसि’ रूपने बदले वर्तमानकालनुं रूप करेलुं छे एटले के धन उपार्जन करतां

बांधेला पापकर्माना फळनो आस्वाद तुं एकलो ज पामीश. ॥२८॥

अह दुक्खियाइं तह, भुक्खियाइं जह चिंतियाइं डिंभाइं ।

तह थोवंपि न अप्पा, विचिंतिओ जीव किं भणिमो ॥२९॥

गाथार्थ : हे आत्मा ! तारा वडे आ मारा बाळको दुःखी छे, भूख्या छे इत्यादि चिंता कराई, पण तारा आत्मानि थोडी पण चिंता कराई नहीं, आथी तने अमे शुं कहीए ? ॥२९॥

भाषांतर : हे आत्मा ! मोहने वश तारावडे मारा बाळको टंडीमां वस्त्रादि रक्षणना अभावे पीडा पामे छे. तथा क्षुधाथी भूख्या थयेला छे, ए प्रमाणे रात-दिवस चिंताथी आकुल तारा वडे विचारायुं, परंतु हे जीव ! तारा वडे थोडी पण चिंता पोतानी न कराई के पुण्यरहित एवा मारा आत्मानुं परलोकमां शुं थशे ? खरेखर योग्य जीव ज उपदेशने योग्य होवाथी अमे तने शुं कहीए ? अने तुं पारकानी चिंता करनारो थयो पण पोताना आत्मानि चिंता करनार न थयो, आथी तुं मूर्ख बन्यो छे. कारण के जे स्वार्थथी भ्रष्ट थयेलो होय ते मूर्ख छे, ए प्रमाणेनुं वचन छे. ॥२९॥

खणभंगुरं सरीरं, जीवो अन्नो अ सासयसरूवो ।

कम्मवसा संबंधो, निब्बंधो इत्थ को तुज्झ

॥३०॥

गाथार्थ : आ शरीर क्षणभंगुर छे अने आत्मा तेथी जुदो शाश्वत स्वरूप छे. कर्मना वशथी तारो तेनी साथे संबंध थयो छे, तो ते शरीरने विषे तारी मूर्च्छा शी छे ? ॥३०॥

भाषांतर : हे आत्मा ! आ शरीर क्षणविनाशी छे. श्री आचारांगमां लोकसार अध्ययनना बीजा उद्देशामां कहेलुं छे के 'मेडरधम्मं विद्धंसणधम्मं अधुवं अणितयं असासयं चयावचइयं विपरिणामधम्म' मित्यादि, आनी टीका आ प्रमाणे - आ औदारिक शरीर लांबो काल औषध-रसायनादिथी संस्कारित करवा छतां माटीना काचा घडाथी पण अत्यंत निसार छे, सर्वथा सदा नाश पामवाना स्वभाववाळुं छे, ते बतावे छे अथवा तो पहेला अथवा पाछळथी पण आ औदारिक शरीर हवे जे कहेवाशे ते स्वभाववाळुं छे. पोतानी मेळे ज जे भेदाय ते भिदुर, ते धर्म आ शरीरनो छे. ए प्रमाणे नाश पामवाना स्वभाववाळुं आ औदारिक शरीर सारी रीते पोषवा छतां पण मस्तक पेट,

चक्षु, छाती वगैरे अवयवोमां वेदनाना उदयथी पोतानी जाते ज भेदाय छे, तेथी भिदुरधर्मवाळुं, तथा हाथ-पगादि अवयवो ध्वंस एटले के नाश थतो होवाथी विध्वंसन धर्मवाळुं छे. अवश्य थनारुं होय ते ध्रुव कहेवाय. जेम त्रण प्रहरना अंते सूर्योदय, पण आ शरीर तेवुं नथी तेथी अध्रुव, जे नाश न पामे, उत्पन्न न थाय, अने स्थिर एक स्वाभावपणाथी कूटस्थ नित्यपणे जे रहे ते नित्य अने आ शरीर तेवुं नथी तेथी ते अनित्य छे. तथा ते ते रूप वडे पाणीनी धारानी जेम जे सतत पडे छे. (अविच्छन्नपणे) ते शाश्वत, आ शरीर तेवुं नथी, तेथी ते अशाश्वत तथा इष्ट आहरना उपभोगपणाथी औदारिक शरीरनी वर्गणा-अने परमाणुनी वृद्धि थती होवाथी चय थवो ए धीरजना टेका रूप छे. अने इष्टाहारादिना रहितपणाथी शरीरनी वर्गणादिनो नाश थतो होवाथी अपचय, ते चयापचय जेमां विद्यमान छे ते चयापचयक, आथी ज विविध एवा परिणाम रूप एटले बीजा स्वरूपे थवुं ते स्वभाव जेनो छे ते विपरिणाम धर्म, (इति सिद्ध. सा. प्र. स. मुद्रिते १८७ पत्रे) जेथी शरीर आवा प्रकारनुं छे. अने शाश्वतरूप एटले नाश न पामे तेवा, उत्पन्न न थाय तेवा स्वभाववाळो आत्मा शरीरथी अन्य छे, कारण के शरीरना नाशमां आत्मानो नाश थतो न होवाथी. तो पछी कया कारणथी परस्पर भेदवाळा शरीर अने आत्मानो संबंध छे ? तो कहे छे के कर्मना परतंत्रपणाथी शरीर अने आत्मानो संबंध छे, आथी तने आ शरीरमां केवो राग ? केवी मूर्च्छा ? कहुं छे के मांस, हाडका लोही, अने स्नायु वडे आच्छादित, कलमल, चरबी, अने मज्जाथी भरेल चामडीनी कोथळी रूप, फरता एवा यंत्रमांथी झरता एवा मळ-मूत्र वडे जे सतत पूर्ण छे, दुर्गंध अने अशुचि वडे बीभत्स, अने अशुचिनां कारण रूप देहमां रागनुं कारण शुं थाय ? आथी शरीरने विषे रागने छोडीने धर्ममां कांईक उद्यम करो. ॥३०॥

कह आयं कह चलियं, तुमंपि कह आगओ कहं गमिही ।

अनुत्रंपि न याणह, जीव कुटुंबं कओ तुज्झ ॥३१॥

गाथार्थ : हे आत्मा ! आ कुटुंब कयांथी आवेलुं छे अने कयां गयुं ? तुं पण कयांथी आव्यो छे अने कयां जईश ? परस्पर तमे बन्ने आ जाणता नथी तो तारुं कुटुंब कयांथी ? ॥३१॥

भाषांतर : हे आत्मा ! आ माता-पिता-भाई वगैरे कुटुंब कयांथी आवेलुं छे ? तथा अहींथी मरीने कयां गयुं ? तुं पण कयांथी आवेलो छे अने कयां जईश ? ए प्रमाणे परस्पर पण तमे बन्ने एकबीजाने जाणता नथी, जेथी आचारांगमां शस्त्र परिज्ञा अध्ययनमां पहेला उद्देशामां कहेलुं छे के अहीं केटलाकने संज्ञा होती नथी, ते आ प्रमाणे जेम के हुं पूर्व दिशाथी आव्यो छुं के दक्षिण दिशाथी आव्यो छुं ? पश्चिम दिशाथी आव्यो छुं के उत्तर दिशाथी आव्यो छुं ? उर्ध्व दिशाथी आव्यो छुं के अधो दिशाथी आव्यो छुं ? के कोई पण एक दिशाथी अथवा अनुदिशाथी हुं आव्यो छुं ? आ प्रकारे कोई जीवोने खबर नथी होती. मारो आत्मा जुदी जुदी गतिओमां उत्पन्न थवावाळो छे अथवा मारो आत्मा जुदी जुदी गतिओमां उत्पन्न थवावाळो नथी, हुं कोण हतो ? अने आ शरीरथी छूटीने आ संसारमां बीजा जन्ममां शुं होईश ? ते पुरुष स्वयं सूक्ष्म बुद्धिथी

तथा तीर्थकर आदिना उपदेशथी अथवा बीजानी पासेथी सांभळीने फरीथी पूर्वोक्त वातोने जाणी ले छे. पण परस्पर गमनागमन नहीं जाणता होवाथी तारुं कुटुंब कयांथी ? ॥३१॥

खणभंगुरे सरीरे, मणुअभवे अब्भपडलसारिच्छे ।

सारं इत्तियमेत्तं, जं कीरइ सोहणो धम्मो ॥३२॥

गाथार्थ : वादळाना समूह समान मनुष्यभवमां अने क्षणभंगुर देहने विषे जे सुंदर धर्म कराय छे, तेटलो ज मात्र सार छे. ॥३२॥

भाषांतर : हे आत्मा ! क्षणे क्षणे नाश पामवावाळा आ शरीरमां तथा पवन वडे वादळोनो समूह जल्दीथी नाश पामे छे, ते प्रमाणे देवादि भवनी अपेक्षाथी अल्पकाल रहेवावाळो आ मनुष्य भव पण मेघना समूह समान छे. आथी आ मनुष्यभवमां पांचआश्रवनी विरतिरूप जिनेश्वरोए कहेल जे धर्म छे, ते धर्म कराय तेटलो ज मात्र सार छे. (सारनो वळी द्रविण न्याय, पाणी विगैरे अनेक अर्थ थाय छे. ॥३२॥

जम्मदुक्खं जरादुक्खं, रोगा य मरणाणि य ।

अहो दुक्खो हु संसारो, जत्थ कीसंति पाणिणो ॥३३॥

गाथार्थ : जन्मनुं दुःख, जरानुं दुःख, रोगो अने मरणो छे. अहो ! संसार ज दुःखरूप छे के ज्यां जीवो पीडा अनुभवे छे. ॥३३॥

भाषांतर : अहो ! ए अव्यय ते जीवना संबोधन अर्थमां अथवा आश्चर्य अर्थमां छे. संसारमां भटकता जीवोने तेवुं कांईपण नथी जे दुःखरूप न होय, ते आ प्रमाणे जन्म ए दुःख, दुःखनां हेतु होवाथी ते दुःख कहेवाय छे. तथा कहेलुं छे के अग्नि जेवा लाल वर्णवाळी सोय वडे निरंतर भेदाताने जेवा प्रकारनी वेदना छे तेनां करतां आठ गुणी वेदना गर्भमां होय छे. ॥१॥ अति विस्वरथी रडतो माताने अने पोताने अतुल वेदना उत्पन्न करतो योनिरूपी यंत्रमांथी जीव कोईपण रीते नीकळे छे. ॥२॥

जन्मता अने मरण पामता प्राणीने जे दुःख छे ते दुःख वडे तपेला पोताने जातिस्मरण ज्ञान थतुं नथी ॥३॥

ते प्रमाणे वयनी हानि रूप दुःख, तथा कहेलुं छे के अहो ! जंघायुगल थरथरे छे, दृष्टि क्षीण थाय छे, सांभळवानी शक्ति नाश पामे छे, वायु वडे अंग तूटे छे, आ प्रचुर विकृति वाळो थाय छे.

लोकमां अनादेय थाय छे, हसवा योग्य थाय छे, शोक करवा योग्य थाय छे, घरना खूणामां रहे छे

अने उधरस खातो खाटलांमां बेसी रहे छे वृद्ध पणामां जिनदत्त श्रावकनी जेम पत्नी, पुत्रो, पुत्री अने घणा जनोथी अति दुःसह पराभवने पामे छे. ॥३३॥

जाव न इंद्रियहाणी, जाव न जरारक्खसी परिप्फुरइ ।

जाव न रोगवियारा, जाव न मच्चू समुल्लियइ ॥३४॥

गाथार्थ : ज्यां सुधी इंद्रियोनी हानि थई नथी, ज्यां सुधी वृद्धावस्था रूपी राक्षसी प्रगट थई नथी, ज्यां सुधी रोगना विकारो उत्पन्न थया नथी अने ज्यां सुधी मृत्यु उल्लसित थयुं नथी, त्यां सुधीमां हे आत्मा ! धर्मनुं सेवन करी ले. ॥३४॥

भाषांतर : हे आत्मा ! ज्यां सुधी कर्णादि इंद्रियोनी पोतपोताना विषयने ग्रहण करवानी शक्तिना नाश रूप हानि थई नथी, तथा ज्यां सुधी शरीरना सर्वस्वनो नाश करती होवाथी जेने राक्षसीनी उपमा आपी शकाय तेवी जरा रूपी राक्षसी प्राप्त थई नथी, तथा ज्यां सुधी रोगोना विकारो उल्लसित थया नथी, तथा ज्यां सुधी मरण समयने भेटवानुं थयुं नथी, त्यां सुधी धर्मने विषे उद्यमने करो. तथा भर्तुहरिऋषि वडे कहेवायेलुं छे के 'ज्यां सुधी आ शरीर रूपी घर स्वस्थ छे, ज्यां सुधी घडपण दूर छे, ज्यां सुधी इंद्रियोनी शक्ति हणार्इ नथी, ज्यां सुधी आयुष्यनो क्षय थयो नथी, त्यां सुधीमां ज पंडितो वडे आत्माना कल्याणमां मोटो प्रयत्न करवा योग्य छे. खरेखर घर बळते छते कूवाने खोदवानो उद्यम केवा प्रकारनो कहेवाय !, ॥३४॥

जह गेहंमि पलित्ते, कूवं खणितं न सक्कए कोइ ।

तह संपत्ते मरणे धम्मो कह कीरए जीव ॥३५॥

गाथार्थ : हे जीव ! जेम घर बळतुं होय त्यारे कूवो खोदवाने कोई शक्तिमान न थाय तेम मरण नजीक आवतां धर्म शी रीते करी शकाय ? ॥३५॥

भाषांतर : जेम घर अग्निथी बळतुं होय त्यारे कूवाने खोदवा माटे कोई शक्तिमान थतुं नथी, तेम परलोकगमन रूप मरण नजीक आवे त्यारे हे आत्मा ! धर्म केवी रीते कराय ? ज्यारे धर्म करवानो अवसर हतो त्यारे न कर्यो, तो हमणां मृत्युना खोळामां प्राप्त थयेलो तुं शुं करीश? ॥३५॥

रुव-मसासयमेयं, विज्जुलयाचंचलं जए जीयं ।

संज्ञाणुराग-सरिसं, खणरमणीयं च तारुणं ॥३६॥

गाथार्थ : आ रूप अशाश्वत छे. जगतमां जीवित विद्युतनी वेलडी जेवुं चपल छे, अने यौवन संध्याना रंगनी जेम क्षण मात्र रमणीय छे. ॥३६॥

भाषांतर : हे आत्मा ! आ शरीरनी सौंदर्यता अशाश्वत छे. जे सदाकाळ रहे ते शाश्वत कहेवाय, जे शाश्वत न होय ते अशाश्वत, अनित्य कहेवाय. रोगादि कारणोथी शरीरनो विनाश थतो होवाथी, आ शरीर अशाश्वत छे. सनतकुमार चक्रवर्ती विगरेनी जेम ते अनित्य छे. तथा कहेवायेलुं छे के थोडा पण निमित्त वडे केटलाक सत्पुरुषो सनतकुमारनी जेम बोध पामे छे. देवो वडे देहमां क्षणभरमां रोगो रूप हानि थई छे एम कहेवायुं, अने आत्मा बोध पामी गयो तेम बोध पामे छे. तथा जगतमां विजळीनी वेगनी जेम प्राणने धारण करवा रूप जीवित चंचल छे, जेम विद्युतनी वेग क्षणवार पहेला जोवायेली ज क्षणवारमां नष्ट थाय छे, ते प्रमाणे जीवन पण क्षणिक छे. वळी यौवन संध्याना रंग समान क्षण मात्र ज सुंदर छे. जेम संध्या समये वादळोना समूहो विविध रंगोने भजनारा थाय छे. वळी पवनना झपाटाथी क्षण मात्रमां ज नाश पामे छे ते प्रमाणे यौवन पण पांच-दिवस जेटला काळ सुधी रहे छे, त्यार पछी यौवनने नाश करनार एवा घडपणनो उदय थाय छे आथी उगता तारुण्यमां मद केवो ? ॥३६॥

गय-कत्रचंचलाओ, लच्छीओ तियसचावसारिच्छं ।

विसयसुहं जीवाणं, बुद्धसु रे जीव मा मुद्ध

॥३७॥

गाथार्थ : लक्ष्मी हाथीना कान जेवी चंचळ छे. जीवोनुं विषयसुख इन्द्रधनुष्य जेवुं छे. रे जीव ! तुं समज अने मोह न पाम ॥३७॥

भाषांतर : हे जीव ! हे आत्मा ! जे लक्ष्मीनो तुं मद धारण करे छे के आ लक्ष्मी जीवन पर्यंत मारा पडखाने मूकशे नही, परंतु ते लक्ष्मी हाथीना काननी जेम चंचल छे, लांबा समय सुधी रहेवावाळी नथी, हमणां पण, पहेलां जेमने श्रीमंत तरीके जोयेला ते ज श्रीमंतो पाछळथी लक्ष्मी वगरना घणा जोवाय छे. आथी लक्ष्मीनुं स्थिरपणुं नथी, तथा जीवोना शब्दादि विषयसुख इन्द्रधनुष्यनी जेम चंचळ छे. आथी हे जीव ! हे आत्मा ! आ प्रमाणे सर्वेने चंचळ स्वभाववाळा जाणीने धर्ममां बोधने कर, मोह न पाम, फरी आवा प्रकारनी सामग्रीनो योग दुःखे करीने प्राप्त करी शकाय तेवो छे. ॥३७॥

जह संझाए सउणाण, संगमो जह पहे अ पहियाणं ।

सयणाणं संजोगा, तहेव खणभंगुरा जीव

॥३८॥

गाथार्थ : हे जीव ! जेम संध्या समये पंखीओनो संगम अने मार्गमां जेम पथिकोनो समागम क्षणिक छे, ते ज प्रकारे स्वजनोनो संयोग पण क्षणभंगुर छे. ॥३८॥

भाषांतर : जेम सांजना समये एक वृक्षमां घणा पंखीओ सर्वे दिशामांथी आवीने मळे छे, रात्रिमां ते वृक्षमां वसीने फरी सवारे पोताना इच्छित स्थानमां ऊडी जाय छे, जेम मार्गमां मुसाफरो रात्रिमां एक स्थानमां रहीने प्रातःकाळे पोतपोताना इष्ट एवा गामादि तरफ जुदा जुदा जाय छे, जेम तेओनो संगम क्षणिक छे, ते ज प्रकार वडे हे जीव ! हे आत्मा ! माता-पिता-भाई विगेरे स्वजनोना संयोगो क्षणवारमां ज विनाश पामवाना स्वभाववाळा छे. ते स्वजनो पण केटलोक काळ साथे रहीने फरी आयुष्यनो क्षय थये छते विखूटा पडे छे. आथी ते स्वजनोने विषे तुं मोह न पाम. ॥३८॥

निसाविरामे परिभावयामि

गेहे पलित्ते किमहं सुयामि ।

डुद्धंत-मप्पाण-मुविक्खयामि,

जं धम्मरहिओ दिअहे गमामि

॥३९॥

गाथार्थ : रात्रिना अंते फरी फरीने विचारुं छुं के, बळता घरमां हुं केम सूई रह्यो छुं ? दाझी रहेला आत्माने हुं केम उपेक्षा करी रह्यो छुं ! अने धर्मरहित दिवसो पसार करुं छुं. ॥३९॥

भाषांतर : रात्रिना अंते जागृत थयेलो हुं विचारुं छुं. शुं विचारुं छुं ? हुं धर्म रहित दिवसोने केम पसार करुं छुं ? अग्निनी ज्वालाथी युक्त घर बळते छते हुं केम निद्राने करुं छुं ? तथा अग्निनी ज्वाला वडे बळता एवा आत्माने केम अवगणना करुं छुं ? जो बळे छे तो भले बळतुं, ए प्रमाणे उपेक्षाने केम करुं छुं ? धर्मरहित आटला दिवसो पसार करता मारा वडे कर्म रूपी अग्निथी बळतो एवो पोतानो आत्मा उपेक्षा करायेलो छे ए प्रमाणे जाणवुं. ॥३९॥

जा जा वच्चइ रयणी, न य सा पडिनियत्तइ ।

अधम्मं कुणमाणस्स, अहला जंति राईओ

॥४०॥

गाथार्थ : जे जे रात्रि जाय छे ते फरी पाछी आवती नथी. अधर्म करनारनी रात्रिओ अफळ जाय छे. ॥४०॥

भाषांतर : जे जे रात्रि पसार थाय छे ते फरी पाछी आवती नथी. अधर्म करनारने ते रात्रि धर्मना फलथी रहित एटले निष्फळ थाय छे. ॥४०॥

जस्सऽत्थि मच्चुणा सक्खं, जस्स चत्थि पलायणं ।

जो जाणे न मरिस्सामि, सो हु कंखे सुए सिया ॥४१॥

गाथार्थ : जेने मृत्यु साथे मित्रता छे, अथवा जे मृत्युथी पलायन थई शके छे, अथवा जे जाणे छे के हुं मरवानो नथी, ते आवती काले धर्म थशे एवी इच्छा कदाचित् करे. ॥४१॥

भाषांतर : जेने मृत्युनी साथे मित्रता छे, जे मृत्युथी भागी शके छे तथा जे जाणे छे के हुं मरीश नहीं, ते ज आवती काले धर्म थशे ए प्रमाणे कदाच इच्छा करी शके, परंतु आवुं तो काई बनतुं नथी माटे आजे ज धर्मने करो. ॥४१॥

दंडकलिअं करित्ता, वच्चंति हु राईओ अ दिवसा य ।

आउस संविल्लिता, गया य न पुणो नियत्तंति ॥४२॥

गाथार्थ : हे आत्मा ! दंडथी उकेलाता सूत्रनी जेम रात्रि-दिवसो आयुष्यने उखेळी रह्या छे, परंतु गयेला ते फरी पाछा आवता नथी. ॥४२॥

भाषांतर : हे आत्मा ! दंडनी रीतने धारण करता, प्राप्त थयेला उपक्रमना कारणो वडे आयुष्यने टूंकु करता रात्रि अने दिवसो निश्चे पसार थाय छे. जेम कोलिक दंड सघळा सूत्रने उकेले छे, तेम रात्रि-दिवसो पण आयुष्यने उकेले छे अर्थात् के आयुष्यने ओछुं करता एवा रात्रि-दिवसो पसार थाय छे. परंतु ते गयेला रात्रि-दिवसो फरी पाछा आवता नथी. ॥४२॥

जहेह सीहो व मियं गहाय,

मच्चू नरं णेइ हु अंतकाले ।

न तस्स माया व पिया व भाया,

कालंमि तम्मि सहरा भवन्ति

॥४३॥

गाथार्थ : आ लोकमां जेम सिंह मृगने पकडीने लई जाय छे. तेम मृत्यु अंत समये माणसने पकडीने लई जाय छे. ते समये माता-पिता के भाई सहायक बनता नथी. ॥४३॥

भाषांतर : जेम लोकमां सिंह हरणने ग्रहण करीने परलोकमां लई जाय छे. (अहीं यथा-उपमा अर्थमां छे. अने वा वाक्यपूर्ति माटे छे.) ए प्रमाणे मृत्यु जीवनना अंत समये माणसने पकडीने परलोकमां लई जाय छे. ते समये मृत्यु वडे लई जवाता जीवने, माता-पिता-भाई विगेरे कोईपण रक्षण करनार थता नथी. एटले के मरता जीवना आयुष्यना अंशने तेओ धारण करता नथी. ए प्रमाणे कहेलुं छे के संसार सागरमां डूबेला पिता, भाईओ, पुत्रो, भार्या, बान्धवो मरणथी रक्षण करवा माटे शक्तिमान नथी ॥४३॥

जीअं जलबिंदुसमं, संपत्तिओ तरंग-लोलाओ ।

सुमिणयसमं च पिम्मं, जं जाणसु तं करेज्जासु ॥४४॥

गाथार्थ : जीवित जलबिंदु जेवुं छे. संपत्तिओ जळना तरंगनी जेम चंचळ छे अने स्नेह स्वप्न समान छे. जे जाणे ते प्रमाणे तुं कर. ॥४४॥

भाषांतर : हे आत्मन् ! जीवन घासना अग्रभाग पर प्राप्त थयेला पाणीना बिंदुनी जेम चंचळ छे तथा संपत्तिओ जल्दीथी अन्यत्र चाली जती होवाथी पाणीना तरंगोनी जेम चपल छे अने वळी स्त्री आदिनो स्नेह, स्वप्न समान छे. एटले क्षणवार पहेलां जे जोवायेलो छे ते क्षणमां नष्ट थाय छे. ते कारणथी जे तुं जाणे ते प्रमाणे कर. आ प्रमाणे सर्वे वस्तुनुं अस्थिरपणुं जाणीने, स्थिर एवा श्री जिनेश्वरे कहेला धर्ममां उद्यम कर. ए प्रमाणे सूचित करेलुं छे. ॥४४॥

संज्ञ-रागजल-बुब्बुओवमे, जीविए य जलबिन्दुचंचले ।

जुव्वणे य नईवेगसंनिभे, पावजीव ! किमियं न बुज्झसे ॥४५॥

गाथार्थ : संध्याना रंग अने पाणीना परपोटा समान जीवित जळबिंदु जेवुं चंचळ होवा छतां अने यौवन नदीना पूर जेवुं होवा छतां, हे पापी जीव ! तुं बोध केम पामतो नथी ? ॥४५॥

भाषांतर : संध्याराग अने पाणीना परपोटा आ द्वन्द्व समास छे. ते बन्ने वडे उपमा जेनी छे, तेवा आयुष्यमां (च शब्द व्यवहितनो संबंध करे छे) अने घासना अग्र भाग पर लागेला पाणीना बिंदुनी जेम चपल एवुं आयुष्य होते छते, अहीं त्रण उपमा आयुष्यनी अति क्षणभंगुरता बताववा माटे छे. तेमज यौवन अने च शब्दथी द्रव्यनो समूह, नदीना पूर जेवो होवा छतां, हे पापात्मा ! दुरात्मा ! आ प्रमाणे जोवा छतां पण तुं बोध केम पामतो नथी ? ॥४५॥

अन्नत्थ सुआ अन्नत्थ, गेहिणी परियणोवि अन्नत्थ ।

भूअबलिव्व कुटुंबं, पक्खित्तं हयकयंतेण ॥४६॥

गाथार्थ : हा ! निंदनीय एवा यमे भूतने फेंकाता बलिनी जेम पुत्रने अन्यत्र, पत्नीने अन्यत्र, अने स्वजनोने पण अन्यत्र, ए प्रमाणे कुटुंबने छुटुं छुटुं फेंक्युं छे ॥४६॥

भाषांतर : हा ! खेदनी वात छे के यमराजा वडे भूतने फेंकाता बलिनी जेम पुत्रो अन्य गतिमां, पत्नी अन्य गतिमां, परिवार पण अन्य गतिमां मोकलायेलो छे. अर्थात् के भूतने फेंकायेलो बलि जेम जुदा जुदा स्थाने पडे छे, तेम आखुं कुटुंब क्रूर एवा यमराजा वडे भिन्न-भिन्न गतिने प्राप्त करायेलुं छे. ॥४६॥

जीवेण भवे भवे, मिलयाइ देहाइ जाइ संसारे ।

ताणं न सागरेहिं, कीरइ संखा अणंतेहिं ॥४७॥

गाथार्थ : संसारमां भवे भवे जे शरीरो, जीवो वडे प्राप्त कराया छे, तेनी संख्या अनंत सागरोपमथी करी शकाती नथी. ॥४७॥

भाषांतर : हे आत्मा ! जे शरीरने माटे तुं आवा प्रकारना पापोने करे छे, परंतु जे देहो संसारमां भटकता जीव वडे दरेक जन्ममां मूकायेला छे, ते देहोनी अन्नत सागरोपम वडे पण संख्या करी शकाती नथी, कारणके जीवे पूर्व-पूर्व भवोमां छोडेला शरीरो अनन्त संख्यावाळा सागरना पाणीना बिंदुथी तथा अनन्त सागरोपमना समयोथी पण अनन्त छे. तथा कहेलुं छे के, 'जीव वडे सेंकडो जातिओमां जेटला शरीरो विसर्जन कराया छे, ते भेगा करीए तो थोडा शरीरो वडे ज आखुं जगत भराई जाय. ॥४७॥

नयणोदयंपि तासिं, सागर-सलिलाओ बहुयरं होइ ।

गलियं रुयमाणीणं, माऊणं अन्नमन्नाणं ॥४८॥

गाथार्थ : अन्य-अन्य जन्मोमां मळेली माताओना नयनमांथी रडती समये वहेतुं जल-पण सागरना जळथी अधिक होय छे. ॥४८॥

भाषांतर : हे आत्मा ! अन्य-अन्य भवोमां मळेली अने रडती एवी माताओना नयनमांथी पडेलीं आंसुनां पाणी पण सागरना पाणीथी अधिक थाय छे. रडती एवी माताओ वडे अश्रुनुं जल एटलुं मूकायेलुं छे के जेनुं माप समुद्रना पाणी वडे पण करवाने माटे शक्य नथी. ॥४८॥

जं नरए नेरइया, दुहाइ पावंति घोरऽणंताइ ।

तत्तो अणंतगुणियं, निगोय-मज्झे दुहं होइ ॥४९॥

गाथार्थ : नरकमां नारको जे घोर अने अनंत दुःखो पामे छे, तेथी अनंतगणुं दुःख निगोदनी मध्यमां होय छे. ॥४९॥

भाषांतर : हे आत्मा ! नारकमां रहेला नारको घोर अने अनन्त दुःखो पामे छे. जेना समान अन्य कोई न होय ते घोर अने अनन्त कहेवाय. अने अशाता वेदनीय कर्मथी भोगवातुं ते दुःख कहेवाय छे. कह्युं छे के - बिचारा नारकना जीवो फाडी नाखेला, उत्कीर्तन करायेला, तळी नखायेला, छिन्नभिन्न करायेला, बाळी नखायेला, भांगी नखायेला, वाळी नखायेला तोडी नखायेला अने विलीन करायेला, पण मरवानी इच्छावाळा होवा छतां मरता नथी, परंतु पापना उदय वडे फरी पाछा पारानी जेम मळी जाय छे ॥१२॥ त्यार पछी दीन थयेला कहे छे, हे स्वामी ! मने मारीश नहि, हे प्रभु ! हे नाथ ! आ दुःख अतिदुस्सह छे. महेरबानी करीने आ प्रमाणे मने ना कर ॥३॥ आ प्रमाणे परमाधामीना पगमां वारंवार पडे छे. दांत वडे आंगळीओने ग्रहण करे छे अने दीनवचनोने बोले छे. ॥४॥ त्यार पछी नरकपालो कहे छे - रे जीव ! आजे तने आ दुःख दुस्सह लागे छे, परंतु ज्यारे पापने करतो हतो त्यारे खुश थयेलो, आ प्रमाणे कहेतो हतो ॥५॥ जे कारणथी सर्वज्ञ नथी अथवा अहीं हुं ज सर्वज्ञ छुं अथवा खाओ, पीओ, कोना वडे परलोक जोवायो छे ? ॥६॥ जे अहीं खाता अने पीता मरे छे फरीथी तेओ रात्रे खाय छे अने पीए छे. वळी जेओ भूखथी दुःखी थयेला मरे छे ते बीजा भवमां पण भूखथी दुःखी थाय छे. ॥७॥ त्यारे वाचाळपणाथी खुश थयेलो पुण्य नथी, पाप नथी, अने पांच भूतथी अधिक जीव देखातो नथी वगेरे तुं बोलतो हतो. ॥८॥ मांसना रसमां गृद्ध-आसक्त थयेलो ज्यारे तुं निर्दय जीवोने मारतो हतो त्यारे अमने कहेतो हतो, आ खावा माटे तो कुदरते बनावेलुं छे माटे भक्ष्य छे ॥९॥ वेदमां कहेलुं छे एटले दोष नथी, अथवा यज्ञमां होमवामां आवे ते अहिंसा छे ते प्रमाणे बोलतो हतो अने जीवोने चर-चर ए प्रमाणे फाडीने बीजाना मांसने खातो हतो. ॥१०॥ अतिआसक्त एवो तुं लावकपक्षी अने तित्तरिना इंडानो रस अने चरबी आदिने पीतो हतो अने अहीं पोकार करे छे के आ अतिदुस्सह दुःख छे. ॥११॥ त्यारे खोटा धंधा अने जूठा वचन वडे त्यारे मुग्धजनने ठगतो हतो, हर्ष पामेलो पैशुन्यादि-चाडीआदि अढार पाप करतो हतो अने अत्यारे अतिदुस्सह दुःख छे एम प्रलाप करे छे. ॥१२॥ त्यारे खातरने खणतो हतो, विश्वास मूकनारनो घात करतो हतो, लोकोने चोरतो हतो अने पारका धनमां लोभी बनेलो घणा देश-गाम-नगरने तुं भांगतो हतो. ॥१३॥ ते पुरुषार्थ वडे अभिमान पामेलो आखा त्रण जगतने तृण समान जाणतो हतो. पारका द्रव्य वडे विलास करतो हतो. तो हवे अहीं केम पोकार करे छे ? ॥१४॥ तुं परद्रव्यने हरण न कर ए प्रमाणे शिखामण अपाती हती, त्यारे धिदुटाईथी कहेतो हतो, बधाने पारकु ज छे फक्त द्रव्य नहि, भाई पण कोनो छे ? (कोई कोईनुं नथी एटले द्रव्य पोतानुं छे ज नहि. पोतानो आत्मा ज छे.) ॥१५॥ त्यारे परस्त्रीनी साथे चोरी छुपीथी क्रीडा करी तेमां सुख मानतो हतो अने ते स्त्रीमां अतिरक्त बनेलो तेना पति वगेरेने मारतो हतो. ॥१६॥ ते स्त्रीओनी साथे कूट विलास करतो हतो. त्यां सौभाग्यने विषे स्वखलित न थयो अने अहीं तो तपेला तांबामां डूबाडवामां आवे तो केम भागी जाय छे ? ॥१७॥ खोटी होंशियारीथी गर्वित थयेलो, शीखवाडायेलो तुं बीजानी पत्नी भोगववा योग्य छे अने माता-बेन पण भोगववा योग्य छे ए प्रमाणे तुं बोलतो हतो. ॥१८॥ तथा मूढ, असंतुष्ट एवो घणा पाप-परिग्रहने एकठा करतो हतो अने आरंभ वडे संतोष पामतो हतो तो अहीं दुःख वडे केम रोष पामे छे ? ॥१९॥ आरंभ अने परिग्रहने छोडीने अमारा कुटुंबनो निर्वाह न थाय, एवुं जेना माटे तुं बोलतो हतो तेने दुःखनो भाग करवा माटे बोलाव ॥२०॥ रात्रे मिष्टान्न खातो हतो, एना बदलामां अमारा वडे ज्यारे तारुं मुख कीडी आदिथी भरीने सीवायुं, त्यारे पराङ्मुख केम थाय छे. ॥२१॥ स्त्रीओने नचावतो, वखाणतो, गातो मदिराने पीए छे. तो हे हताश ! अहीं तपेला तल तांबा अने सीसाने केम पीतो नथी ? ॥२२॥ गुरु भगवंतोनी मश्करी तथा आशातना करी, व्रतनो भंग कर्यो. शूद्रपणादिना भावने पामेलो तुं लोकोने हेरान करतो हतो. ॥२३॥ ए प्रमाणे जो पोताना हाथे रोपेला एवा ते पापवृक्षना फळोने भोगवे छे तो रे दुष्ट एमां अमारो शुं दोष ? ॥२४॥ इत्यादि पूर्वभवना दुष्कृतोने याद करावीने नरकपालो फरीथी पण विविध प्रकारे वेदना उत्पन्न करे छे. ॥२५॥ तडफडता तेना देहमांथी मांस उखेडीने अग्निमां पकावीने तेना ज मुखमां नाखे छे. ॥२६॥ रे रे जीव ! पूर्वभवमां तने मांसना रस वडे संतोष थतो हतो ए प्रमाणे कहीने मांसना रसने ग्रहण करीने आपे छे. ॥२७॥ पशुओना स्कंध-खभा उपर भार आरोपण करतो हतो, तेने याद

करावीने देवो तेनी उपर चडीने भार वडे अंगोने भांगी नाखे छे. ॥२८॥ सर्व निधि वडे दीन थयेला नपुंसको, शरणथी मूकायेला, क्षीण थयेला नरकना जीवो नरकना आवासमां रहे छे. एनाथी बीजुं शुं (दुःख वर्णववुं ?) ॥२९॥ नरकमां दिवस रात पकावाता एवा नारकीना जीवोने आंखना निमेष मात्र पण सुख नथी. दुःख ज सतत भोगव्या करे छे. ॥३०॥ त्यां वेदनाथी हणायेला सम्यग्दृष्टि जीवो प्रायः विचार करे छे के रे जीव ! कर्मने छोडीने तेमनी उपर रोष न कर. कारण के कह्युं छे के ॥३१॥ सर्व जीवो अपराधोने विषे अने गुणोने विषे पूर्व करेला कर्मना फळना विपाकने पामे छे बीजो व्यक्ति निमित्तमात्र होय छे. ॥३२॥ समुद्रना तरंग अने कल्लोलथी भेदायेल कुलपर्वतने धारण करवो सहेलो छे पण अन्य जन्ममां निर्माण करेल शुभ के अशुभ भाग्यना परिणामने धारण करवुं सहेलुं नथी. ॥३३॥ गुरु-वडीलजन वडे अटकावातो पण त्यारे तुं पापने करतो हतो अने पोते ज दुःखने ग्रहण करतो हतो. तो हे जीव ! अहीं कोनी उपर रोष करे छे ? ॥३४॥ सातमीथी बीजी आठमी नरकनी पृथ्वी नथी ने ? ए प्रमाणे खोटा उत्तर आपतो हतो. हवे अहीं केम उद्वेग पामे छे ? ॥३५॥ ए प्रमाणे चिंता वडे तथा वेदनाओ वडे अशुभकर्मोने खपावीने राजभवनादिमां उत्पन्न थाय छे अने क्रमे करीने सिद्ध थाय छे. ॥३६॥ सम्यग्दृष्टि सिवायना बीजा जीवो परस्पर झगडो करीने तथा कोप करवा वडे तिर्यंचपणाने पामे छे, अने त्यार पछी अनंत भव भमे छे. ॥३७॥ त्यार पछी नरकना दुःख करतां निगोदमां एटले साधारण वनस्पतिकायमां फरी-फरी जन्म-मरण रूप अनन्त दुःख होय छे. जे कारणथी कहेलुं छे के 'निगोदना गोळा असंख्याता होय छे एक-एक गोळामां असंख्याता निगोदना शरीर होय छे अने एक-एक निगोदना शरीरमां अनंत जीवो होय छे. ॥१॥ एक श्वासोच्छ्वासमां मरीने सत्तर वार क्षुल्लक भव रूपने ग्रहण करवा वाळी आ निगोदमां जीव अनंतो वार उत्पन्न थयेल छे. ॥४९॥

तम्मि वि निगोअ-मज्झे, वसिओ रे जीव विविहकम्म-वसा ।

विसहंतो तिक्खदुहं, अणंतपुग्गलपरावत्ते

॥५०॥

गाथार्थ : हे आत्मा ! विविध कर्मनी पराधीनताथी ते निगोदमां पण अनंत पुद्गल परावर्त सुधी तीक्ष्ण दुःख सहन करतो तुं रह्यो. ॥५०॥

भाषांतर : हे जीव ! हे आत्मा ! नरकना दुःखथी पण अतिशय दुःखना समूहरूप निगोदमां तुं कया कारणथी वस्यो ? ज्ञानावरणीयादि विविध कर्मोनी पराधीनताथी वस्यो छे. जे कारणथी कहेलुं छे के ज्यारे तीव्र मोहनो उदय, महाभयानक अज्ञान, अने असार-अशाता वेदनीय कर्म उदयमां आव्युं होय, त्यारे जीव एकेन्द्रियपणुं प्राप्त करे छे. शुं करतो त्यां वस्यो ? तो कहे छे के विविध कर्मोनी परवशताथी अनंत सूक्ष्मक्षेत्र पुद्गल परावर्त जेटला काळ सुधी एक श्वासोच्छ्वासमां साडा सत्तर भव रूप तीक्ष्ण दुःखोने अनुभवतो रहेलो छे. कह्युं छे के एक श्वासोच्छ्वासमां कांईक अधिक सत्तर क्षुल्लक भवो निश्चये थाय छे अने एक मुहूर्तमां साडत्रीशसो तहोतेर (३७७३) श्वासोच्छ्वास थाय छे. ॥१॥ एक मुहूर्तमां पांसठ हजार पांचसो अने छत्रीस (६५, ५३६) क्षुल्लक भवो थाय छे अने क्षुल्लक भवने विषे बसो छप्पन्न (२५६) आवलिका थाय छे. ॥२॥ ॥५०॥

निहरीय कहवि तत्तो, पत्तो मणुअत्तणंपि रे जीव ।

तत्थवि जिणवरधम्मो, पत्तो चिंतामणिसरिच्छो

॥५१॥

गाथार्थ : हे जीव ! त्यांथी कोईपण रीते नीकळीने मनुष्यपणुं पण तुं पाम्यो. तेमां पण चिंतामणि रत्न समान जिनधर्म तने प्राप्त थयो. ॥५१॥

भाषांतर : हे जीव ! तुं महान कष्ट वडे ते निगोदमांथी नीकळीने मनुष्यपणुं पाम्यो, मनुष्य भवमां पण मननी इच्छाओने पूर्ण करतो होवाथी चिन्तामणि रत्न समान श्री जीनेश्वरे कहेलो धर्म पण पुण्यना योगे पाम्यो. ॥५१॥

पत्ते वि तम्मि रे जीव !, कुणसि पमायं तुमं तयं चेव ।

जेणं भवंधकूवे, पुणो वि पडिओ दुहं लहसि

॥५२॥

गाथार्थ : हे जीव ! ते धर्म प्राप्त थवा छतां पण ते ज प्रमाद तुं करे छे के जे प्रमादथी भवरूपी अंधकूपमां फरी वार पण पडेलो तुं दुःख पामे छे ॥५२॥

भाषांतर : हे जीव ! ते दुःखे करीने प्राप्त करी शकाय तेवा श्री जिनेधर्मने प्राप्त करवा छतां पण तुं, ते ज निद्रा-विकथादि प्रमादने करे छे के जे प्रमाद वडे भव रूपी अंध कूपमां पडेलो फरी पण नरकादिमां दुःखने ज मेळवे छे. (अहीं आर्ष वचनथी भविष्यकाळना अर्थमां वर्तमान काळ करेल छे.) परंतु हारेला एवा जिनेधर्मने फरी प्राप्त करी शकाय नहीं. आ प्रमाणे अर्थ छे.

उवलद्धो जिणधम्मो, न य अणुचिण्णो पमायदोसेणं ।

हा जीव ! अप्पवेरिअ, सुबहं पुरओ विसूरिहिसि ॥५३॥

गाथार्थ : हे जीव ! जिनेधर्म प्राप्त थयो परंतु प्रमादना दोषथी तेनुं आचरण कर्युं नहीं. अरे आत्मवैरी ! परलोकमां तुं खूब खेद पामीश. ॥५३॥

भाषांतर : हे जीव ! तारा वडे भाग्यना योगथी श्री जिनेधर्म प्राप्त करायो, परंतु आलसादि प्रमादना दोषथी ते धर्मनुं सेवन कर्युं नहीं. हा खेदनी वात छे के हे आत्म वैरी ! तुं परलोकमां शशिराजानी जेम अतिशय खेदने पामीश. ॥५३॥

सोयंति ते वराया, पच्छा समुवट्टियंमि मरणंमि ।

पावपमायवसेणं, न संचियो जेहि जिणधम्मो ॥५४॥

गाथार्थ : पाप रूप प्रमादने आधीन थईने जेओए जिनेधर्मनो संचय नथी कर्यो, तेओ बिचारा मरण उपस्थित थये छते शोक करे छे. ॥५४॥

भाषांतर : दुष्टालस - निद्रा - विकथादि पापी एवा प्रमादने आधीन थयेला होवाथी, जेओ वडे जिनेधर्मनो पोताना आत्माने विषे संचय करायो नथी, तेओ बिचारा पाछळथी मरण उपस्थित थये छते शोक करे छे. ते शोक केवा प्रकारनो छे ? तो कहे छे के हा ! हा ! नहीं सेवेला जिनेधर्मवाळा अमे परलोकमां केवी रीते सुखी थईशुं ? ॥५४॥

धी धी धी!!! संसारं, देवो मरिऊण जं तिरी दोइ ।

मरिऊण रायराया, परिपच्चइ निरयजालाहिं ॥५५॥

गाथार्थ : ते संसारने धिक्कार हो ! धिक्कार हो ! धिक्कार हो ! जे संसारमां देवो मृत्यु पामीने तिर्यच बने छे अने राजाधिराज मरण पामीने नरकनी ज्वालाथी अत्यंत पकावाय छे ॥५५॥

भाषांतर : चार गति रूप संसारने धिक्कार हो ! धिक्कार हो ! धिक्कार हो ! अत्यंत निन्दकपणुं बताववा माटे अहीं त्रण वार धिक् शब्द वापरलो छे. संसारना धिक्कारपणाना कारणने कहे छे. जे कारणथी देव मरीने पृथ्वी आदि रूप तिर्यच थाय छे, तथा वासुदेवादि राजाओ मरीने नरकनी ज्वालओ वडे अत्यंत पकावाय छे, जेथी कहेवायेलुं छे के "मीरा संस्थानवाळी अने घडाना आकारवाळी एवी पकावनारी कुंभीमां नरकमां घणा काळ सुधी जीव पकावाय छे अने लोहीमां आळोटे छे. ॥५५॥

जाइ अणाहो जीवो, दुमस्स पुप्फं व कम्मवायहओ ।

धणधन्ना हरणाइं घर-सयण-कुडुंब-मिल्लेवि ॥५६॥

गाथार्थ : कर्म रूपी पवनथी हणायेलो आत्मा धन, धान्य, अलंकार, घर, स्वजन अने कुटुंब मळवा छतां पण तेने मूकीने पवनथी पडी गयेला वृक्षना पुष्पनी जेम अनाथ बनीने जाय छे. ॥५६॥

भाषांतर : हे जीव ! आ आत्मा कर्मरूपी पवनथी हणायेलो अनाथ बनेलो छतां जेम पवनथी प्रेरायेला वृक्षना पुष्पो

जल्दीथी नीचे पड़े छे तेम, जीव पण परलोकमां एकलो जाय छे. जीव शुं करीने परलोकमां एकलो जाय छे ? तो कहे छे के धन, धान्य, आभरणो, घर, स्वजन, अने कुटुंबने मूकीने जाय छे. (नहीं आपेलो होवा छतां अहीं चकार जाणवो) प्राकृत होवाथी विभक्तिनो लोप करेलो छे. ॥५६॥

वसियं गिरीसु वसियं, दरीसु वसियं समुद्रमज्झंमि ।

रुक्खग्गोसु य वसियं, संसारे संसरंतेणं

॥५७॥

गाथार्थ : हे आत्मा ! संसारमां पर्यटन करतां तु पर्वत पर वस्यो छे, गुफामां वस्यो छे, समुद्रनी मध्यमां वस्यो छे अने वृक्षनी टोच पर पण वस्यो छे. ॥५७॥

भाषांतर : हे आत्मा ! संसारमां भटकता एवा तारा वडे क्यारेक पर्वतोने विषे निवास करायो, क्यारेक गुफाओने विषे, क्यारेक समुद्रनी मध्यमां, तो क्यारेक वृक्षनी टोच पर निवास करायो छे. जीवने एक स्थाने रहेवानुं निश्चित न होवाथी जुदा जुदा स्थाने निवास करायो छे. आ आत्मा नटनी जेम अन्य-अन्य रूप वडे परावर्तन पामे छे. तेथी कुळना अभिमानने अवकाश क्यांथी होय ? ते माटे कहे छे - ॥५७॥

देवो नेरइउत्ति य, कीड पयंगुत्ति माणुसो एसो ।

रूवस्सी य विरूवो, सुहभागी दुक्खभागी य

॥५८॥

गाथार्थ : हे जीव ! तुं देव बन्यो छे अने नारक बन्यो छे. कीडो अने पतंगियुं थयो छे अने मनुष्य पण थयेलो छे. तुं सुंदर रूपवाळो अने कुरूपवाळो बन्यो छे. सुखी बन्यो छे अने दुःखी बन्यो छे. ॥५८॥

भाषांतर : अहीं इति शब्द सर्वे भेदोने बताववा माटे छे अने च शब्द पोते प्राप्त करेला अनेक भेदोनों सूचक छे हे जीव ! तुं देव अने नारक बन्यो छे. कीडो - कृमि आदि अने पतंगीयुं बनेलो छे. उपलक्षणथी दरेक तिर्यग् जातिमां उत्पन्न थयो छे, मनुष्य पण थयेलो छे अर्थात् के अन्य-अन्य रूपे आ जीव परावर्तन पामे छे एम दरेक ठेकाणे क्रियापद समजवुं. वळी क्यारेक सुंदर रूपवाळो एटले के शरीरवाळो तो क्यारेक कुरूपवाळो, शोभा वगरनो बन्यो छे, वळी क्यारेक सुखने भजनारो छे तो क्यारे दुःखनो भागी थयो छे. ॥५८॥

राउत्ति य दमगोत्ति य, एस सपागोत्ति एस वेयविऊ ।

सामी दासो पुज्जो, खलोत्ति अधणो धणवइत्ति

॥५९॥

गाथार्थ : हे जीव ! तुं राजा अने भिखारी बन्यो छे. ए ज तुं चंडाळ अने वेदपाठी, स्वामी अने दास, पूज्य अने दुर्जन, निर्धन अने धनवान थयो छे. ॥५९॥

भाषांतर : ते प्रमाणे आ जीव राजा अने भिखारी बन्यो छे. तथा ते ज प्रमाणे आ जीव चंडाळ अने सामादि वेदोने जाणनार श्रेष्ठ ब्राह्मण थयो छे. अही वारंवार “एष” शब्दनुं ग्रहण अनेक पर्यायो बदलाता होवा छतां जीवद्रव्य अर्थात् आत्मा एक स्वरूपे ज रहे छे, ते जणाववा माटे कर्तुं छे. आ एक आत्मा ज अन्य-अन्य रूपोमां परावर्तन पामे छे, ते आत्मद्रव्य बदलातुं नथी. तथा आ जीव स्वामी एटले के पोताना नोकरनी अपेक्षाए नायक अने बे अक्षरवाळो दास थयो छे. उपाध्यायादि रूपे पूज्य अने दुर्जन, धनरहित अने धनवान थयो छे. ॥५९॥

नवि इत्थ कोवि नियमो, सकम्म-विणिविट्टु-सरिसकयचिट्ठो ।

अत्रान्नरूव-वेसो, नडोव परिअत्तए जीवो

॥६०॥

गाथार्थ : पोते करेला कर्मनी रचना प्रमाणे चेष्टा करतो जीव अन्य-अन्य रूप अने वेश धारण करीने नटनी जेम परावर्तन पामे छे. एमां कोई नियम नथी. (के पुरुष मरीने पुरुष थाय) ॥६०॥

भाषांतर : अन्य दर्शनवाळा आ प्रमाणे माने छे के पुरुष होय ते पुरुषपणाने ज पामे छे. पशुओ होय ते पशुपणाने पामे

छे, परंतु प्रमाणथी बाधित होवाथी अने कर्मना विचित्रपणाथी भवनी उत्पत्ति थती होवाथी एमां कोई अवश्य थवा रूप नियम नथी. तो शुं नियम छे ? तो कहे छे के कराय ते कर्म ज्ञानावरणीयादि. पोतानुं कर्म ते स्वकर्म. तेनो विनिवेश एटले के प्रकृति, स्थिति, रस अने प्रदेश स्वरूप रचना. ते कर्मने अनुरूप एवी करेली चेष्टा एटले के देवादि पर्यायने पामवा रूप व्यापार. अर्थात् जीवे पोते करेला ज्ञानावरणीयादि कर्म, तेनाथी निश्चित करेला प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध अने प्रदेशबंधथी करेला कर्मनी रचना प्रमाणे तेने अनुरूप देवादि पर्यायोमां व्यापार वडे चेष्टा करतो जीव भमे छे. अहीं दृष्टान्तने कहे छे- जेम अनेक प्रकारनी वेषभूषा, वर्ण, कान्ति विगेरे स्वरूपवाळा वेषने धारण करतो नट भमे छे, तेम आत्मा पण आ संसारमां भम्या करे छे. आ प्रमाणे चार गति रूप संसारमां भटकता जीवनुं अनवस्थितत्वपणुं कह्युं. तथा श्री आचारांगमां कहेलुं छे के संसारी जीव अनेकवार मान-सत्कारने योग्य उच्चगोत्रमां उत्पन्न थाय छे, तथा अनेकवार सर्वलोकमां निंदित एवा नीचगोत्रमां उत्पन्न थाय छे, ते आ प्रमाणे - नीचगोत्रना उदयथी अनंत काल तिर्यचना भवमां रहे छे. आवलिका कालना असंख्यातमा भागना समयनी संख्यावाळा पुद्गल परावर्तो रूप अनंत उत्सर्पिणी अने अवसर्पिणी उच्च-नीच गोत्रमां अनेकवार उत्पन्न थता जीव वडे मान पण करवा योग्य नथी अने दीनता पण करवा योग्य नथी. उच्च-नीचगोत्रना अध्यवसाय स्थानना कंडको तुल्य छे. हीन पण नथी अने अधिक पण नथी. जेटला उच्चगोत्रमां अनुभाव बन्धाध्यवसाय स्थान कंडको छे तेटला ज नीचगोत्रमां छे अने ते सर्व स्थानो प्राणी वडे अनादि रूप संसारमां फरी-फरी स्पर्शायेला छे. तेथी उच्चगोत्रना कंडकना अर्थपणा वडे प्राणी हीन नथी, अधिक पण नथी. ए प्रमाणे नीचगोत्रना दंडकना अर्थपणा वडे पण हीनाधिक नथी. जे कारणथी उच्च-नीच स्थानमां कर्मना वशथी उत्पन्न थाय छे. अने बल-रूप-लाभादि मदस्थानोनुं विचित्रपणुं जाणीने शुं करवा योग्य छे ? नो णोऽपीहार अहीं 'अपि' संभावना अर्थमां छे अने ते भिन्न जगाए जोडवानो छे. ते आ प्रमाणे - मदस्थानोमांथी कोईने पण न इच्छे अथवा तो तेनी स्पृहा न करे. त्यां जो उच्च-नीच स्थानोमां प्राणी वारंवार उत्पन्न थाय छे तो शुं ? 'इति संख्याय' इति ए उपप्रदर्शन अर्थमां छे, एटले के पूर्वे कहेलुं छे ते प्रमाणे उच्च-नीच स्थानमां उत्पादादिकने जाणीने कोण बुद्धिमान मारुं गोत्र सर्वलोकमां माननीय छे बीजा कोईनुं नहीं ए प्रमाणे गोत्रवादी थाय ? तथा मारा वडे अने अन्य जीव वडे सर्वे पण स्थानो पूर्वे अनेकवार प्राप्त करायेला छे, तेथी उच्चगोत्रना निमित्ते मानवादी कोण थाय ? तो कहे छे के संसारना स्वभावने जाणनार कोईपण न थाय. अनेक वार अनेक स्थान अनुभवाये छते तेनी मध्यमां अथवा कोईपण एक उच्चगोत्रादिक स्थान नहीं प्राप्त कराये छते रागादिना विरहथी एकनी शा माटे ईच्छा करे ? तात्पर्य आ प्रमाणे छे के- जाणेला कर्मपरिणामवाळो विचारे, जो ते स्थान में पूर्वे प्राप्त न कर्युं होय तो तेमां गृद्धि करवी योग्य छे, अने आवुं तो बनतुं नथी. ए स्थान पण पूर्वे अनेकवार प्राप्त करेलुं छे. आथी तेना लाभ अथवा अलाभमां उत्कर्ष के अपकर्ष करवा योग्य नथी. अने कह्युं छे के जे कारणथी अनादि संसारमां भटकता प्राणी वडे अनेकवार ते अदृष्टने आधीन एवा उच्च-नीच स्थानो अनुभवायेला छे. तेथी कोईपण उच्चादिक मदस्थानने पामीने पंडित एटले के हेयोपादेय तत्वने जाणनार हर्षने न करे. अने कहेलुं छे के अहीं संसारमां भटकता मारा वडे सर्वे सुखो पण बहुवार प्राप्त कराया छे. तथा उच्च स्थानो पण बहुवार प्राप्त कराया छे तेथी तेओने विषे मने विस्मय नथी ॥१॥ आंट मानना स्थानने मथन करवा द्वारा उत्पन्न थयेली निर्जरा छे. जो ते निर्जरानो मद पण करवानी ना पाडी होय तो बाकीना मदस्थानोनु प्रयत्नपूर्वक त्याग करवो जोईए' अने वळी निंदित एवा नीच स्थानोनी प्राप्ति थये छते वैमनस्यपणुं न करवुं जोईए. तेथी ज कह्युं छे के, भाग्यना वशथी तेवा प्रकारना लोकमां असंमत अने निंदनीय एवा जाति-कुल-रूप-बल लाभादि प्राप्त करीने क्रोध न करवो जोईए, केटला नीचस्थानो अथवा शब्दादिक दुःख मारा वडे नथी अनुभवाया, ए प्रमाणे जाणीने उद्वेगने वश थईने विचारवुं न जोईए अने कहेलुं छे के अपमानथी परिभ्रंशथी, वध-बन्धनथी अने धनना क्षयथी पूर्वे संकडो जातिमां रोगो अने शोको प्राप्त करेला छे. पंडित वडे विद्यमान पदार्थने विषे आश्चर्य न करवो ए शक्य छे अने अविद्यमान पदार्थने विषे शोक न करवो ए शक्य छे. कारण के वृक्षनी उपमाने जाणे छे. (पीपळ पान खरंता हसती कूपळियां, मुज वीती तुज वीतशे धीरी बापडिया) एटले हृदय वडे हितने धारण करो" ॥१॥ निर्मल अने उज्जवळ छत्रवाळो राजा चक्रवर्ती थईने ते ज खरेखर फरीथी अनाथशालानुं स्थान थाय छे. ॥६०॥

नरएसु वेअणाओ, अणोवमाओ असायबहुलाओ ।

रे जीव! तए पत्ता, अणंतखुत्तो बहुविहाओ

॥६१॥

गाथार्थ : हे जीव ! अशाता रूप दुःखथी भरपूर अने उपमारहित बहुविध वेदनाओ नारकीमां अनंतवार तें प्राप्त करी छे. ॥६१॥

भाषांतर : हे जीव ! तारा वडे रत्नप्रभादि सात नरकमां अनन्तवार, अनेक प्रकारनी, उपमा न आपी शकाय तेवी अशातावेदनीय कर्मथी उत्पन्न थयेली वेदना प्राप्त कराई छे. जेथी कहेलुं छे के हे भगवंत ! नारकी केटला प्रकारनी वेदना अनुभवता रहेला छे ? हे गौतम ! दश प्रकारनी वेदना अनुभवता नारको रहेला छे. ते आ प्रमाणे १, शीत, २, उष्ण, ३, क्षुधा, ४, तृषा, ५, खणज, ६, परवशता, ७, ज्वर, ८, दाह, ९, भय, १०, शोक. आनी टीका आ प्रमाणे - त्यां अनंती ठंडी अने गरमी होय छे ते प्रतीत छे. क्षुधा वळी नारकोने हंमेशां रहेनारी छे. ते क्षुधा वेदनाथी बळता नारको जगतमां रहेला सघळा घी विगेरे पुद्गलोना आहारथी पण तृप्त न थाय, वळी तेओने हंमेशां तृषा पण गळुं, ओठ, ताळवुं जीभादि ने सूकावनारी होय छे. जे तृषा सघळा समुद्रनुं पाणी पीवा छतां पण शांत न थाय तेवी होय छे. छरीथी खणवा छता पण शांत न थाय तेवी खणज होय छे, सदाकाळ परवशपणुं होय छे. अर्हीया थता ज्वर करतां त्यां यावज्जीव सुधी अनंतगुण ज्वर होय छे. दाह, भय, शोक पण अर्हीया करता अनंतगुणा होय छे. ॥६१॥

देवत्ते मणुअत्ते, पराभिओगत्तणं उवगएणं ।

भीसणदुहं बहुविहं अणंतखुत्तो समणुभयं

॥६२॥

गाथार्थ : देवभवमां अने मनुष्यभवमां तेना पराधीनपणाने पामेला तें अनेक प्रकारनुं भीषण दुःख अनंतवार अनुभव्युं छे. ॥६२॥

भाषांतर : हे जीव ! तारा वडे देवभवमां तथा मनुष्यभवमां ताराथी अन्य एवा जे देवो अने मनुष्यो तेओनुं परवशपणुं प्राप्त करीने तेनाथी अनंतवार, अनेक प्रकारनुं भयानक अशातावेदनीय रूप दुःख अनुभवायेलुं छे. ॥६२॥

तिरियगइं अणुपत्तो, भीममहावेयणा अणेगविहा ।

जम्मण-मरणरघट्टे, अणंतखुत्तो परिब्भमिओ

॥६३॥

गाथार्थ : अनेक प्रकारनी महाभयंकर वेदना युक्त तिर्यचगतिते पामीने त्यां जन्म-मरण रूप रेंटमां अनंतवार तें प्ररिभ्रमण कर्युं छे. ॥६३॥

भाषांतर : हे जीव ! तुं तिर्यचगतिते पामेलो, अनेक प्रकारनी महाभयंकर वेदनाने सहन करतो छतो जन्म-मरण रूप रेंटमां अनंतवार भमेलो छे. अने कहेलुं छे के परलोकमां जे नियमवाळा थयेला होय छे ते तिर्यचना जीवो आ लोकमां असार एवी चाबूक, अने सेंकडो निपात वध-बंध अने मरणने पामता नथी. ॥६३॥

जावंति केवि दुक्खा, सारीरा माणसा व संसारे ।

पत्तो अणंतखुत्तो, जीवो संसार-कंतारे

॥६४॥

गाथार्थ : संसारमां जेटला शारीरिक अने मानसिक दुःखो छे, ते सर्वे दुःखो जीवे भवाटवीमां अनंतवार प्राप्त कर्या छे. ॥६४॥

भाषांतर : हे आत्मा ! आ संसार रूपी जंगलमां जेटला शरीर सम्बन्धी दुःखो अने मनथी उत्पन्न थयेला दुःखो छे, ते सर्वे दुःखो आ जीवे अनंतवार प्राप्त करेला छे. ॥६४॥

तण्हा अणंतखुत्तो, संसारे तारिसी तुमं आसी ।

जं पसमेउं सव्वो-दहीणमुदयं न तीरिज्जा

॥६५॥

गाथार्थ : संसारमा अनंतवार तने एवी तृषा थई हती के जेने शमाववाने सकल सागरनुं पाणी असमर्थ थाय. ॥६५॥
भाषांतर : हे जीव ! संसारमा अर्थात् के नरकमां तने तेवा प्रकारनी तृषा अनन्तवार प्राप्त थयेली हती के जे तृषाने शांत करवा माटे सघळा समुद्रोनुं पाणी पण शक्तिमान न थाय.

आसी अणंतखुत्तो, संसारे ते छुहावि तारिसिया ।

जं पसमेउं सव्वो, पुग्गलकाओ वि न तरिज्जा ॥६६॥

गाथार्थ : संसारमा अनंतवार तारी भूख पण एवा प्रकारनी हती के जे शमाववाने सर्व पुद्गलो पण समर्थ न थाय. ॥६६॥

भाषांतर : हे जीव ! तने संसारमा अर्थात् के नरक भवमां अनंतवार तेवा प्रकारनी भूख प्राप्त थयेली हती के जेने शांत करवा माटे सर्वे घी विगेरे पुद्गलो पण समर्थ थाय नहीं. ॥६६॥

काऊणमणेगाइं, जम्मण-मरण-परियट्टणसयाइं ।

दुक्खेण माणुसत्तं, जइ लहइ जहिच्छियं जीवो ॥६७॥

गाथार्थ : अनेक जन्म मरणोना सेंकडो परावर्तनो करीने महाकष्ट वडे ज्यारे जीव मनुष्यपणुं पामे छे, त्यारे तेनुं यथेच्छित ते प्राप्त करे छे. ॥६७॥

भाषांतर : हे जीव ! अनेक एटले के अनंत जन्म मरणोनां, क्यारेक जन्म तो क्यारेक मरण, ए रूपे सेंकडो परावर्तनो करीने दुःख वडे आ जीव, इच्छा मुजबनुं मनुष्यपणुं प्राप्त करे छे. सुख वडे नहि अर्थात् के सहेलाईथी प्राप्त थतुं नथी. जे कुशल पक्षने करनार होय छे ते वळी सुख वडे मरीने सुखवडे ज फरी प्राप्त करे छे. ॥६७॥

तं तह दुल्लहलंभं, विज्जुल्लयाचंचलं च मणुअत्तं ।

धम्मंमि जो विसीयइ, सो काउरिसो न सप्पुरिसो ॥६८॥

गाथार्थ : परंतु ते दुर्लभ अने विद्युल्लता जेवुं चपळ मनुष्यपणुं पामीने जे धर्मकार्यमां खेद करे छे, ते क्षुद्र पुरुष छे, सत्पुरुष नहि. ॥६८॥

भाषांतर : चुल्लकादि दश दृष्टांतनी व्यवस्था वडे दुर्लभ तथा वीजळीना पलकारानी जेम चंचळ एवुं मनुष्यपणुं प्राप्त करीने, (ए अध्याहारथी ग्रहण करवानुं छे) जे मनुष्य भाग्यना वशथी प्राप्त थयेला, जिनेश्वरे कहेला धर्ममां प्रमाद करे छे अर्थात् के खेदने धारण करीने धर्मने सारी रीते आचरतो नथी ते क्षुद्र पुरुष छे, सत्पुरुष नहि. ॥६८॥

**मणुस्सजम्मे तडि लद्धयंमि,
जिणिंदधम्मो न कओ य जेणं ।**

**तुट्टे गुणे जह धाणुक्कएणं,
हत्था मलेव्वा य अवस्स तेणं**

॥६९॥

गाथार्थ : धनुष्यनी दोरी तूटी गया पछी जेम धनुर्धारिने अवश्य हाथ घसवा पडे छे, तेम संसार सागरना किनारा रूपी मानवजन्मने पामीने जेणे जिनेन्द्रे कहेला धर्मनुं सेवन न कर्युं, तेने अवश्य हाथ घसवा पडशे. ॥६९॥

भाषांतर : संसार सागरना किनारा रूपी मनुष्य जन्म प्राप्त कर्ये छते जे मनुष्य वडे (च पादपूर्ति माटे छे) जिनेश्वरे कहेला अहिंसादि रूप धर्मनुं आचरण करायुं नथी, ते मनुष्य वडे निश्चये मरण समय प्राप्त थये छते हाथ घसवा योग्य छे के हा ! हा ! मारावडे सामग्रीने प्राप्त करवा छतां धर्मरूप भातु एकतुं न करायुं, हवे हुं शुं करुं ? कोना विषे कोनी जेम आ हाथ घसवा जेवुं छे ? तो कहे छे के जेम धनुष्यनी दोरी तूटी गया पछी युद्धभूमिमां धनुर्धारी वडे हाथ घसवा पडे छे, तेनी जेम आ जीव वडे पण अवश्य हाथ घसवानुं रहेशे. अहीं

भृद्राति नो 'मल' आदेश थयो छे. ॥६९॥

रे जीव! निसुणि चंचलसहाव,
मिल्लेवि णु सयल वि बज्झभाव ।
नवभेयपरिग्गह-विविहजाल,
संसारि अत्थि सह इंदयाल

॥७०॥

गाथार्थ : रे आत्मा ! सांभळ, चंचळ स्वभाववाळा सकळ बाह्य भावोनो अने नव प्रकारनी परिग्रहनी विविध जाळने मूकीने जवानुं छे. माटे संसारमां सघळुं इंद्रजाल जेवुं छे. ॥७०॥

भाषांतर : हे जीव ! हे आत्मा ! तुं सांभळ, शुं सांभळ ? तो कहे छे के चंचळ स्वभाववाळा एटले चपल स्वरूपवाळा सघळा शरीरादि बाह्यभावो तथा नव प्रकारनो जे परिग्रह धन, धान्य, क्षेत्र, वास्तु, रुप्य, सुवर्ण कुप्य, द्विपद, चतुष्पद रूप जे अनेक प्रकारनो समूह छे, तेने मूकीने तुं परलोकमां जईश. (ए अध्याहारथी ग्रहण करवानुं छे) अहीं संसारमां जे धनधान्यादिक छे, ते इन्द्रजाल समान छे. वस्तु स्वरूपे जे वास्तविक रीते न होय, परंतु तान्त्रिक प्रयोगथी जे अविद्यमान वस्तुने प्रकाशित करे ते इन्द्रजाल कहेवाय. ॥७०॥

पिय-पुत्त-मित्त-घर-घरणि-जाय,
इहलोइय सव्व नियसुहसहाय ।
न वि अत्थि कोइ तुह सरणि मुक्ख !
इक्कल्लु सहसि तिरि-निरयदुक्खं

॥७१॥

गाथार्थ : हे मूर्ख ! आ लोकमां पिता, पुत्र, मित्र, पत्नी विगेरेनो समूह पोतानुं सुख शोधवाना स्वभाववाळो छे. कोई तने शरणरूप नथी. तिर्यच अने नरकना दुःखो तुं एकलो ज सहन करीश. ॥७१॥

भाषांतर : हे मूर्ख ! हे अज्ञानी ! हे आत्मा ! जे पिता, पुत्र, मित्र, पत्नीने माटे तुं द्रव्य उपार्जन करवामां बीजाने ठगवुं, अनीति, अन्यायादि करे छे, परंतु ते स्वजनो फक्त आलोक संबंधी ज छे. परलोकमां नरकादि गतिमां प्राप्त थयेला तने शरणरूप एटले निर्भयपणु आपवा माटे समर्थ नथी. तारा आत्म कल्याणने माटे कोई पण नथी. तेओ पोतानुं सुख शोधवाना स्वभाववाळा छे. परलोकमां तुं एकलो ज तिर्यच, नरकादिनां दुःखो सहन करीश. त्यां तने कोई रक्षण करनार नथी. जे वर्तमान कालमां प्रसिद्ध होय ते भूतकाळमां अने भविष्यकाळमां पण थाय छे. ए वचनथी अहीं षह्षि प्रयोग वर्तमानकाळनो कर्यो होवा छतां दुष्ट नथी. ॥७१॥

कुसग्गे जह ओसबिंदुए, थोवं चिड्डुइ लंबमाणए ।
एवं मणुआण जीवियं, समयं गोयम ! मा पमायए ॥७२॥

गाथार्थ : जेम डाभना अग्रभागे रहेलुं झाकळ (पाणी)नुं लटकतुं बिंदु थोडी ज वार टके छे, तेम मनुष्यनुं जीवित पण अल्पकाळ रहे छे. माटे हे गौतम ! एक समय पण प्रमाद न कर. ॥७२॥

भाषांतर : जे प्रमाणे घासना अग्रभाग पर लटकतुं शरदऋतुमां थनारुं पातळुं झाकळनुं वर्षानुं बिंदु अल्पकाळ रहे छे. (अहीं स्वार्थमां क प्रत्यय करेलो छे अने काळ ए अध्याहारथी ग्रहण करवानुं छे) ए प्रमाणे मनुष्यनुं जीवन पण अल्पकाळ रहेवाना स्वभाववाळुं छे आथी हे गौतम ! एक समय पण प्रमाद न कर. ॥७२॥

संबुज्झह किं न बुज्झह, संबोही खलु पेच्च दुल्लहा ।
नो हूवणमंति राइओ, नो सुलहं पुणरवि जीवियं ॥७३॥

गाथार्थ : तमे बोध पामो. तमे केम बोध पामता नथी ? खरेखर परलोकमां बोधिबीज दुर्लभ छे. जेम गयेला रात्रि-दिवसो निश्चे पाछा आवता नथी, तेम जीवन फरी-फरी सुलभ नथी. ॥७३॥

भाषांतर : श्री सूयगडांग सूत्रना वैतालीयाध्ययनमां भगवान श्री आदिनाथ, भरत चक्रवर्तीना तिरस्कारथी संवेग पामेला पोताना पुत्रोने उद्देशीने कहे छे, अथवा सुर-असुर-मनुज उरग तिर्यचोने उद्देशीने कहे छे के बोध पामो, आवी उत्तम सामग्री प्राप्त थवा छतां कया कारणथी धर्मने विषे बोध नथी पामता ? जे कारणथी नहीं करेला धर्मवाळाओने परलोकमां धर्मनी प्राप्तिरूप बोधि दुर्लभ छे. खलु शब्दनो अवधारण अर्थ होवाथी सुदुर्लभ ज छे. 'हुं' निश्चय अर्थमां छे. पसार थयेला रात्रि-दिवसो फरी पाछा आवता नथी, अर्थात् के पसार थयेलो यौवनादि काल पाछो आवतो नथी. तेम संयम जीवन पण फरी-फरी सुलभ नथी, अथवा तो त्रुटित थयेला आयुष्यने सांधवाने कोई शक्तिमान नथी. आ प्रमाणे आयुष्यनुं अनित्यपणुं कह्युं. ॥७३॥

डहरा बुद्धा य पासह, गम्भत्था वि चयंवि माणवा ।

सेणे जह वट्टयं हरे, एवमाउक्खयंमि तुट्टइ

॥७४॥

गाथार्थ : जुओ ! बाळको, वृद्धो अने गर्भमां रहेला मनुष्यो पण मृत्यु पामे छे. बाज पक्षी जेम तेतर पक्षीनुं हरण करे छे तेम आयुष्यनो क्षय थतां यमदेव जीवितने हरे छे. ॥७४॥

भाषांतर : जुओ केटलाक बाळको जीवितने त्यजे छे तथा केटलाक वृद्धो अने गर्भमां रहेला मानवो पण जीवितने त्यजे छे. मनुष्य उपदेशने योग्य होवाथी अहीं तेओनुं ग्रहण कर्तुं छे. जेथी सर्व अवस्थां प्राणी जीवितने त्यजे छे. ते आ प्रमाणे - त्रण पल्योपमना आयुष्यवाळाने पण पर्याप्ति पूर्ण थया पछी अंतर्मुहूर्त वडे ज केटलाकनुं मृत्यु उपस्थित थाय छे. दृष्टान्तने कहे छे - जेम बाज पक्षी तितिर पक्षीने हणे छे, तेम आयुष्यनो क्षय थये छते प्राणोने यमदेव-मृत्यु हणे छे, अथवा तो आयुष्यना क्षयमां जीवित नष्ट थाय छे. ॥७४॥

तिहुयणजणं मरंतं, दट्टण नयंति जे न अप्पाणं ।

विरमंति न पावाओ धी द्धि! धीट्टणं ताणं

॥७५॥

गाथार्थ : त्रण भुवनमां माणसोने मरता जोईने जेओ आत्माने धर्ममार्गे दोरता नथी अने पापथी अटकता नथी, तेमनी धृष्टताने धिक्कार थाओ. ॥७५॥

भाषांतर : त्रणे भुवनमां समस्त लोकने मरता जोईने, जेओ आत्माने धर्म मार्गमां जोडता नथी तथा हिंसादि पापथी अटकता नथी तेओनी धृष्टताने धिक्कार थाओ, धिक्कार थाओ. ॥७५॥

मा मा जंपह बहुयं जे बद्धा चिक्कणेहिं कम्महिं ।

सव्वेसिं तेसिं जायइ, हिओवएसो महादोसो

॥७६॥

गाथार्थ : जेओ चीकणां कर्मथी बंधायेला छे, तेमने बहु बोध न आपो. ते सर्वेने हितोपदेश महाद्वेषमां परिणमे छे ॥७६॥

भाषांतर : खेदनी वात छे के आ लोको फरी फरी बोध पमाडवा छतां पण शा माटे बोध पामता नथी ? आ प्रमाणे बोलो नहीं. अथवा अयोग्यनी प्रति उपदेश आपवाथी गुरुओनी प्रति शिष्यो आ प्रमाणेना वाक्यने कहे छे. हे गुरु ! बहु हितकारी उपदेश न आपो. कया कारणथी ? के जे प्राणीओ अत्यंत गाढ ज्ञानावरणीयादि कर्मो वडे जे कारणथी बंधायेला छे. तेओने धर्मनो उपदेश महादोष अथवा महाद्वेषने माटे थाय छे. दोष वळी आ प्रमाणे - काचा घडामां स्थापन करेलुं पाणी जेम पाणीनो अने घडानो विनाश करे छे तेम आ सिद्धांतनुं रहस्य अल्प आधारवाळाने के जे पचावी न शके तेने आपवामां आवे तो तेनी जेम नाश थाय छे. गाढ कर्मोथी बंधायेला जीवोने अभिमानथी मने पण आ ए प्रमाणे उपदेश आपे छे इत्यादि रूप द्वेष थाय छे. ब्रह्मदत्त चक्रवर्त्यादिनी जेम. जेथी कहेलुं छे के खरेखर मूर्खोने अपातो उपदेश कोपने माटे थाय छे, परंतु शान्तिने माटे थतो नथी. सर्पोने करावातुं दूधनुं पान केवल विषने वधारनारुं छे ॥१॥ अने जे कारणथी गाढ कर्मोवाळाने हितोपदेश महादोष अथवा महाद्वेष माटे थाय छे. ते कारणथी तेवा जीवोने बहु बोध आपो नहीं. ॥७६॥

कुणसि ममत्तं धण-सयण-विहवपमुहेसु ऽणंतदुक्खेसु ।

सिढिलेसि आयरं पुण, अणंतसुक्खंमि मुक्खंमि ॥७७॥

गाथार्थ : अनंत दुःखना कारण रूप एवा धन, स्वजन अने वैभव विगरेमां तुं ममत्व करे छे, परंतु अनंत सुख-रूप मोक्षमां तुं आदरने शिथिल करे छे. ॥७७॥

भाषांतर : हे मूढात्मा ! तुं अनंत दुःखना कारण रूप सोनुं-रूपु विगरे धन, माता-पितादि स्वजन तथा हाथी, घोडादि वैभवने विषे ममत्व करे छे तथा श्री आचारांगमां लोकविजय अध्ययनमां पहेला उदेशामां) कहेलुं छे के मारी माता, मारा पिता, मारो भाई, मारी बेन, मारी पत्नी, मारा पुत्रो, मारी दीकरी, मारी पुत्रवधू, मारा मित्र-स्वजन-संग्रंथ-संस्तुत, मारा सुंदर उपकरण-परिवर्तन-भोजन-आच्छादन ए प्रमाणे गृद्ध एवो मोहित मनवाळो लोकमां वसे छे. रात दिवस दुःखी थतो काल अकालने जोया वगर प्रवृत्ति करे छे. संयोगनो अर्थी अने अर्थनो लोभी होय छे. - तेनी टीका आ प्रमाणे - माता विषयक राग, संसारना स्वभावथी अथवा ते माता उपकार करती होवाथी थाय छे अने राग थये छते मारी माता क्षुधा-पिपासादि वेदनाने न पामे, आथी खेती, वेपारादि प्राणीओनो नाश करनारी क्रियाने आरंभे छे. माताने उपघात करनारनी उपर अथवा तो माता अकार्यमां प्रवृत्त थाय तो तेना उपर द्वेष उत्पन्न थाय छे. ते आ प्रकारे अनंतवीर्यनी उपर रागी बनेली रेणुकाने विषे रामने द्वेष उत्पन्न थयो तेम. ए प्रमाणे आ मारा पिता छे ए प्रमाणे पिता निमित्ते राग-द्वेष थाय छे. जेम राम वडे पिता उपरना रागथी अने तेमना हणनारने विषे द्वेषथी सात वार क्षत्रियोने मराव्या. सुभूम वडे पण एकवीस वार ब्राह्मणोने मराया. आ प्रमाणे आ मारा भाई छे बहेन छे, ए निमित्ते प्राणी क्लेशने अनुभवे छे. तथा पत्नी निमित्तक राग-द्वेष उत्पन्न थाय छे, ते आ प्रमाणे - बहेन अने बनेवी आदिथी अवज्ञा पामेली भार्याथी प्रेरायेला, अने द्रव्यने माटे नंदनी पासे गयेला चाणक्य वडे कोपथी नंद कुलनो क्षय करायो. तथा मारा पुत्रो जीवता नथी, आथी आरंभमां प्रवर्ते छे. एवी ज रीते मारी पुत्री दुःखी छे, ए प्रमाणे राग-द्वेषथी हणायेला चित्तवाळा, परमार्थने नहीं जाणता तेवा-तेवा अकार्योने करे छे के जेना वडे आलोक संबंधी अने परलोक संबंधी अपायोने पामे छे. ते आ प्रमाणे - जमाई कंस मराते छते पोताना बलना अवलेपथी पाछा फरेला वासुदेवनी पाछळ जनार बल-वाहन सहित जरासंघ क्षयने पाम्यो. पुत्रवधू मारी जीवती नथी इत्यादि आरंभमां प्रवर्ते छे. मारा-मित्रो, काकादि स्वजनो, संग्रन्थ एटले के स्वजनोना स्वजन एटले काकाना पुत्र, साळो वगेरे, संस्तुत एटले के फरी-फरी दर्शन वडे परिचित अथवा पूर्व संस्तुत माता पितादि वडे कहेवायेला, पश्चात् संस्तुत साळादि मारा दुःखित छे, एम खेदने पामे छे. सुंदर अथवा प्रचुर हाथी-रथ-आसन-पलंगादि, मोदकादि भोजन, पट्टयुगादि आच्छादन ते मारुं नष्ट थशे ए प्रमाणे अर्थमां ज आसक्तिवाळो थयेलो लोक माता-पितादि रागादि निमित्तक स्थानोने विषे मरण पर्यंत आ मारा स्वजनो अथवा तो हुं आ लोकोनो स्वामी अथवा पोषण करनार, ए प्रमाणे मोहित मनवाळो वसे छे. तथा कहेलुं छे के मारा पुत्रो, मारा भाई, मारा स्वजनो, मारुं घर, मारी पत्नीवर्ग ए प्रमाणे मारुं मारुं आवा शब्दोने बोलता जनने मृत्यु पशुनी जेम हरे छे. ॥१॥ पुत्र-भार्या अने परिग्रहना ममत्व दोषो वडे मनुष्य नाशने पामे छे, रेशमना कीडा (कोशेटाना कीडा)नी जेम परिग्रहथी दुःखने पामे छे. ॥२॥ तथा ए ज प्रमाणे कषाय अने इन्द्रियमां प्रमत्त एवो माता-पितादिने माटे अर्थने उपार्जन करवामां अने रक्षणमां तत्पर केवल दुःखने ज अनुभवे छे. अने कह्युं छे के अहो ! रात्रि-दिवस-पक्ष-मासमां निवृत्त थयेला शुभाध्यवसायवाळो जीव चारे बाजुथी दुःखी थतो रहे छे. ते आ प्रमाणे - सार्थ क्यारे जाय छे ? करियाणुं क्यां छे ? क्यां केटली भूमि छे ? क्रय-विक्रयनो काळ कयो छे ? कोना वडे क्यां ते केम नीकळे छे ? ॥१॥ अने ते खेद पामतो केवा प्रकारनो थाय छे ? तो कहे छे के काल एटले के कर्तव्य अवसर, तेनाथी विपरीत अकाल वडे अनुष्ठानने करे छे. अर्थात् करवाना समये कार्य न करे अने अन्यदा करे, अथवा तो जे प्रमाणे काले करे छे तेम ज अकाले पण करे. छे अने जेम अनवसरे न करे एम अवसरे पण न करे. आ प्रमाणे अन्यमां मन होवाथी दूर थयो छे कालाकालनो विवेक जेणे ते आ प्रमाणे करे छे, जेम चाली गयेलो छे स्वामी जेनो अने करी छे किल्ला आदिथी रक्षा जेणे एवी मृगावतीए पकडावाना कालने पसार करीने प्रद्योतराजा वडे ग्रहण कराई.

जे वळी सम्यक्काल उत्थायी होय छे, ते यथाकाल परस्परने बाधा न थाय तेम सर्वे क्रिया करे छे. तथा कहेलुं छे के आठ मास वडे, ते रीते करवुं जोईए के चार मास शान्तिथी पसार थाय. दिवसे ते रीते करवुं जोईए जेथी रात्रि सुखेथी पसार थाय. तेवी ज रीते पूर्व क्रोडना आयुष्य वडे ते प्रमाणे करवुं जोईए के जेथी अंते सुखी थवाय. अने धर्मानुष्ठानने कांई पण अकाल नथी, जेम मृत्युने अकाल होतो नथी तेवी रीते. वळी कया अर्थे कालाकाल समुत्थायी थाय छे, तो कहे छे संयोगनु प्रयोजन जेने छे ते संयोगार्थी कहेवाय छे.

त्यां धन-धान्य-हिरण्य द्विपद, चतुष्पद, राज्य, पत्न्यादि संयोग तेना वडे प्रयोजन छे जेने ते, अथवा शब्दादि विषयोना संयोगनो अर्थी अथवा माता-पितादिना संयोगनो अर्थी होय, ते कालाकाले कार्य करवावाळो थाय छे.

अने वळी अर्थ ते रत्न-कुप्यादि, तेनो समस्त प्रकारे लोभ जेने छे, ते अर्थनो लोभी पण मम्मण शेठनी जेम काल अने अकाले कार्य करनार थाय छे. ते मम्मण शेठनी कथा आ प्रमाणे - आ शेठ केवा प्रकारनो छे ? तो कहे छे के अर्थने उपार्जन करवामां समर्थ एवी यौवनवय प्रसार थई गई छे जेने तेवो, जल-स्थल मार्गे मोकलेला छे अनेक देशोमां करियाणाथी भरेला वहाणोवाळो, तथा गाडा अने ऊंटना समूहथी भरेला भारवाळो पण, सात रात्रि सुधी निरंतर मुशलनी धारा समान जलधारा, वरसते छते अने रोकाई गयो छे सकल प्राणीओना समूहनो संचारनो मनोरथ एवी वर्षाऋतुमां, महान नदीओना पाणीनां पूरथी आवेला लाकडाने ग्रहण करवानी इच्छावाळो, उपभोग अने धर्मने आराधवाना अवसरे पण समस्त शुभ परिणामथी पराङ्मुख थयेलो फक्त अर्थने उपार्जन करवामां ज प्रवृत्त थयेलो छे. कहुं छे के 'उंडे सुधी खोदे छे, खोदे छे अने निधान रूपे दाटे छे, रात्रे सूतो नथी अने दिवसे पण कोई लई जशे एवी शंकावाळो रहे छे. ज्यां धन दाटेलुं छे त्यां लीपे छे. तेने स्थिर करे छे, अने क्यां संताड्युं छे ए जणाय ते माटे चिह्न करे छे. वारंवार चिह्न करे छे. खाली थई जवाना भयथी भोगवतो नथी, खावा माटे पण समर्थ थतो नथी. आजे घरे पण रहीश नहीं, आजे घणुं काम करवा योग्य छे. आ प्रमाणे अनंत सुख रूप मोक्षमार्गमां तुं आदरने शिथिल करे छे, परंतु मोक्षे जवाने माटे तेना हेतुरूप अहिंसादिमां प्रवर्ततो नथी. ॥७७॥

संसारो दुहहेऊ, दुखफलो दुसहदुखरूवो य ।

न चयंति तं पि जीवा, अइबद्धा नेहनिअलेहिं

॥७८॥

गाथार्थ : दुःखनुं जे कारण छे, दुःखनुं जे फल छे अने जे अत्यंत दुःखे करीने सहन थाय तेवा दुःखरूप छे, ते संसारने पण स्नेहनी सांकळथी अतिशय बंधायेला जीवो त्यजता नथी. ॥७८॥

भाषांतर : हे जीव ! आ संसार दुःखनो हेतु छे तथा दुःख ज छे फल जेनुं तेवो दुःखफलक छे अने वळी जे सहन करवा माटे पण अशक्य होय तेवा दुःखना स्वरूपवाळो छे, तेवा भयंकर संसारने पण स्नेहनी सांकळथी अतिशय बंधायेला जीवो, ब्रह्मदत्तादिनी जेम त्यजता नथी. मरण रूपी अंत आवे तेवा रोगादिनी वेदना वडे पराभूत थयेलो ब्रह्मदत्त संतापना अतिशयपणाथी स्पर्श करती पोतानी प्रियानी जेम विश्वासना स्थान समान मूर्छानुं बहुमान करतो, वेंतपणा वडे हाथने करतो (नानाने मोटुं करतो) विषमता वडे विषयभूत करायेलो, ग्लानि वडे विषय करायेलो, दुःखासिका वडे दंशायेलो, काल वडे खोळामां करायेलो, पीडाओ वडे पीडायेलो, नियति वडे निरूपण करायेलो, भाग्य वडे खावानी इच्छा करायेलो अन्त्य श्वासोच्छ्वासनी नजीकमां, महाप्रवासना मुखमां, दीर्घ निद्राना द्वारमां, यमनी जिह्वाना अग्रभागमां रहेलो, वाणीमां विरल थयेलो, शरीरमां विह्वल थयेलो, प्रलाप करवामां प्रचूर, बगासादि वडे जीतायेलो आ प्रमाणेनी अवस्थाने अनुभवतो होवा छतां पण महामोहना ऊदयथी भोगोने भोगववानी इच्छावाळो सतत वेदनाना वशथी झरता आंसुथी लाल थयेला लोचनवाळी अने पासे बेठेली भार्याने हे कुरुमति ! कुरुमति ए प्रमाणे बोलतो सातमी नरकनी पृथ्वीमां गयो. त्यां नरकमां पण तीव्रतर वेदनाथी पराभूत थयेलो ते वेदनाने पण अवगणीने ते ज प्रमाणे कुरुमतीने बोलावे छे आ प्रमाणे भोगोनो राग केटलाकने दुखे करीने त्याज्य थाय छे. अने वळी घणा

સત્ત્વવાળા આત્માથી શરીર અન્ય છે, એમ જાણેલા તત્ત્વવાળા કેટલાક મહાપુરુષોને સનતકુમારાદિની જેમ વેદનાનો સદ્ભાવ હોવા છતાં પણ મારા વડે જ આ કરાયેલું કર્મ સહન કરવા યોગ્ય છે. આ પ્રમાણે ઉત્પન્ન થયેલા નિશ્ચયવાળા અને કર્મને ખપાવવામાં ઉદ્યત થયેલાઓને મનમાં પીડા ઉત્પન્ન થતી નથી. કહેલું છે કે જે સ્વયં જ વાવેલું, મોહરૂપી પાણીથી સિંચાયેલું, જન્મ રૂપી ક્યારાથી અશુભ, રાગ-દ્વેષ-કષાયોની પરંપરા રૂપ મહાનિર્વિઘ્ન બીજવાલું, રોગો વડે અંકુરિત થયેલું, વિપત્તિઓથી પુષ્પિત થયેલું એવું આ કર્મ રૂપી વૃક્ષ હમણાં છે તે સહન કરવા યોગ્ય છે. જો હમણાં સહન ન કરાય તો અધોગામિ (નરકાદિના) દુઃખો વડે આ કર્મવૃક્ષ સારી રીતે ફલવાલું થશે. અને વઠ્ઠી તારે આ દુઃખોનો વિપાક સહન કરવા યોગ્ય છે. એકઠા કરેલા કર્મોનો ખરેખર નાશ થતો નથી. એ પ્રમાણે ગણીને જે-જે દુઃખ આવે છે, તેને સારી રીતે સહન કર. આવો સદ્-અસદ્નો વિવેક અન્ય ગતિમાં ફરી ક્યાંથી થાય ? ॥૭૮॥

નિયકમ્પવણ-ચલિઓ, જીવો સંસારકાળને ઘોરે ।

કા કા વિટંબનાઓ, ન પાવે દુસહદુઃખાઓ! ॥૭૯॥

ગાથાર્થ-ઘોર સંસાર અટવીમાં પોતાના કર્મ રૂપી પવનથી ચલિત થયેલો જીવ અસહ્ય વેદના યુક્ત કઈ કઈ વિટંબનાઓ પામતો નથી ? ॥૭૯॥

ભાષાંતર : આ આત્મા ભયંકર સંસાર રૂપી અટવીમાં પોતાના જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મ રૂપી વાયુથી ચલિત થયેલો જે સહન કરવા માટે અશક્ય છે એવા પ્રકારની વધ-બંધનાદિ રૂપ કઈ-કઈ વિટંબનાઓ પામતો નથી ? અર્થાત્ કે સર્વે પણ વેદનાને જીવ પામે છે. ॥૭૯॥

સિસિરમ્મિ સીયલાનિલ-લહરિસહસ્સેહિ ભિન્નઘણદેહો ।

તિરિયત્તણમ્મિડરણ્ણે, અણંતસો નિહણમણુપત્તો ॥૮૦॥

ગાથાર્થ : તિર્યંચ ભવમાં જંગલમાં, શિશિર ઋતુના શીતલ પવનના હજારો સુસવાટાથી તારો પુષ્ટ દેહ ભેદાયો છે અને અનન્તવાર તું મૃત્યુને પામ્યો છે. ॥૮૦॥

ભાષાંતર : હે જીવ ! તિર્યંચ ભવમાં અરણ્યમાં, શિયાળાના ઠંડા પવનના હજારો સુસવાટાથી તારો દેહ પ્રચુર ભેદાયો છે, અર્થાત્ કે તું પુષ્ટ દેહવાળો હોવા છતાં ઘણીવાર ભેદાયેલા શરીરવાળો થયો છે. અહીં પ્રાકૃત હોવાથી ભિન્ના અને ઘણદેહો શબ્દ વ્યત્યય થયેલ છે. એ પ્રમાણે થયો છતો અનંતવાર મૃત્યુને પણ પામ્યો છે. ॥૮૦॥

ગિમ્હાયવસંતત્તો-ડરણ્ણે છુહિઓ પિવાસિઓ બહુસો ।

સંપત્તો તિરિયભવે, મરણદુહં બહુ વિસૂરંતો ॥૮૧॥

ગાથાર્થ : તિર્યંચ ભવમાં અરણ્યમાં ગ્રીષ્મ ઋતુના તાપથી અત્યંત તપેલો અનેકવાર ક્ષુધા તથા તૃષાવાળો તું ઘણો જ ખેદ પામતો મરણનું દુઃખ પામ્યો છે. ॥૮૧॥

ભાષાંતર : હે જીવ ! તું તિર્યંચ ભવમાં અરણ્યની અંદર પડેલો ગ્રીષ્મઋતુના તાપથી તેપેલો ઘણી વાર ક્ષુધા તથા તૃષાવાળો તું ઘણો જ ખેદ પામતો મરણનું દુઃખ પામ્યો છે. ॥૮૧॥

વાસાસુડરણ્ણમજ્જે, ગિરિનિજ્જરણોદગેહિ વજ્જંતો ।

સીયાનિલ-ડજ્જવિઓ, મઓસિ તિરિયત્તણે બહુસો ॥૮૨॥

ગાથાર્થ : તિર્યંચભવે અટવીમાં વર્ષાઋતુમાં પર્વતના ઝરણાના જલથી તળાવો અને શીતલ વાયુથી ઢાંચેલો તું અનેક વાર મૃત્યુ પામ્યો છે. ॥૮૨॥

ભાષાંતર : હે જીવ ! તું તિર્યંચભવે અટવીમાં વર્ષાઋતુમાં પર્વતોના ઝરણાનાં પાણીથી તળાવો અર્થાત્ કે એક સ્થલેથી બીજા સ્થલે લઈ જવાતો અને શીતલ વાયુથી ઢાંચેલો અનેક વાર પંચત્વને એટલે મૃત્યુ પામ્યો છે. ॥૮૨॥

एवं तिरियभवेसु, कीसंतो दुक्खसयसहस्सेहिं ।

वसिओ अणंतखुत्तो, जीवो भीसणभवारण्णे

॥८३॥

गाथार्थ : ए प्रमाणे भीषण भववनने विषे तिर्यच भवमां जीव एवी रीते लाखो दुःखोथी पीडातो, अनंती वार वसेलो छे. ॥८३॥

भाषांतर : पूर्वे कहेला प्रकारो वडे तिर्यच भवमां जीव लाखो दुःखोथी खेद पामतो छतो अनंती वार भयंकर एवा भव वनमां वसेलो छे. ॥८३॥

दुट्टु-कम्मपलया-निलपेरिउ, भीसणंमि भवरण्णे ।

हिंडंतो नरएसु वि, अणंतसो जीव! पत्तो सि

॥८४॥

गाथार्थ : हे जीव ! दुष्ट एवा आठ कर्म रूपी प्रलयना पवनथी प्रेराईने भीषण भवाटवीमां भटकतां नारकीमां पण तुं अनंती वार गयेलो छे. ॥८४॥

भाषांतर : हे जीव ! तुं भयजनक एवा भवारण्यमां रहेलो, दुष्ट फलने आपवावाळा जे ज्ञानावरणीयादि आठ संख्यावाळा कर्मो, ते ज कर्मो रूपी प्रलयकालना पवनथी प्रेरायेलो छतो रखडतो नारकीमां पण अनंती वार दुःखने पाम्यो छे. ॥८४॥

सत्तसु नरयमहीसु वज्जानलदाह-सीयवियणासु ।

वसियो अणंतखुत्तो, विलवंतो करुणसहेहिं

॥८५॥

गाथार्थ : ज्यां वज्रना अग्नि समान दाह छे अने अतिशय ठंडी नी वेदना छे तेवी सात नरकनी पृथ्वीने विषे करुण शब्दोथी विलाप करतो तुं अनंती वार वसेलो छे. ॥८५॥

भाषांतर : हे जीव ! तुं वज्रना अग्नि समान दाहनी वेदना अने अतिशय ठंडीनी वेदना ज्यां छे तेवी सात नरकनी पृथ्वीने विषे करुण शब्दोथी एटले दयाजनक अवाज वडे विलाप करतो अनंती वार वसेलो छे, नरकने विषे उष्णवेदना अने शीतवेदनाना स्वरूपने आगमने जाणनारा जणावे छे. ते आ प्रमाणे - उनाळानां अंत समये आकाशना मध्यभागमां सूर्य आवते छते अने मेघथी रहित आकाश होय त्यारे अत्यंत पीतना प्रकोपथी पीडाता,

दूर कर्या छे, मस्तक परथी सर्वप्रकारना छत्रने जेने एवा, अने जेनी चारे बाजु भयंकर अग्निनी ज्वाला बळी रही छे एवा पुरुषने जेवा प्रकारनी उष्ण वेदना थाय छे, तेनाथी पण उष्णवेदनाथी युक्त नरकमां, नारकोने अनंतगुणी उष्णवेदना होय छे. अने वळी उष्णवेदनावाळी नरकथी नारकोने उपाडीने बळता खदिरना अंगाराना समूहमां नाखीने बळाय, तो चंदनथी जाणे लेप कर्यो होय तेम अत्यंत सुखेथी निद्राने प्राप्त करे. तथा पोष अथवा महा महिनानी रात्रिमां, वादळ रहित आकाश होते छते, हृदयादिने कंपावनारो पवन वाते छते, हिमाचलनी पृथ्वीमां रहेला, अग्नि रहित, आश्रय रहित, आवरण रहित अने झाकळना कणोथी सींचायेलुं छे शरीर जेने एवा पुरुषने जे शीत वेदना छे तेना करतां पण शीत वेदनाथी युक्त नरकमां नारकोने अनंतगुणी शीत वेदना होय छे. अने वळी जो शीत वेदनाथी युक्त नरकथी उपाडीने नारकोने उपर कहेला शीतवेदनाथी युक्त पुरुषना स्थानमां स्थपाय त्यारे ते नारको अत्यंत पवनरहित स्थानने जाणे प्राप्त करेलु होय तेनी जेम, उपमा न आपी शकाय तेवा सुखथी निद्राने पण प्राप्त करे. ॥८५॥

पिय-माय-सयणरहिओ, दुरंतवाहिहिं पीडिओ बहुसो ।

मणुयभवे निस्सारे, विलविओ किं न तं सरसि!

॥८६॥

गाथार्थ : निस्सार मानवभवमां, पिता, माता, अने स्वजन वगरनो तथा दुरंत व्याधिथी अनेक वार पीडातो तुं विलाप करतो हतो, ते तुं केम याद करतो नथी ? ॥८६॥

भाषांतर : हे जीव ! तूं असार एवा मनुष्य भवमां माता-पिता स्वजनो वडे रहित, (अहीं प्राकृत होवाथी विपर्यय एटले निममाय शब्द छे) दुःखेथी अंत लावी शकाय तेवी व्याधिओथी पीडातो छतो घणा प्रकारे विलाप करतो हतो, ते तूं केम याद करतो नथी ? अन्यत्र पण मनुष्यभव दुःखाधिकारमां कहेलुं छे. मारा घरमां द्रव्य नथी, लोक विलास करे छे., महोत्सव प्रवर्ते छे. बाळको घरमां रोवे छे, हा ! हुं घरनी स्त्रीने शुं आपीश ? ॥१॥ पोतानी समृद्धिथी गर्विष्ठ थयेला स्वजनो मने मारुं स्थापन करेलुं पण आपता नथी. बाकीना धनवानो पण पराभव करे छे, अवकाश पण आपता नथी. ॥२॥ आजे घरमां घी, तेल, मीतुं, बळतण अने वस्त्र नथी स्त्री गर्भवती छे. आवती काले कुटुंब केवी रीते रहेसे, ॥३॥ घरमां कुमारिका वर्ते छे दीकरो हजी बाळ छे धन उपार्जन करतो नथी. घणा रोगोथी व्याप्त कुटुंब छे. दवा लाववा माटे पैसा नथी ॥४॥ आजे घणा महमान आवी गया छे, घर अने दुकान जीण थई गया छे, पाणी झरे छे अने सर्वे गळी गयुं छे ॥५॥ मारी पत्नी झगडाखोर छे. परिजन असंवृत छे, स्वामीनी दृष्टि विषम छे, देश धारण करवा योग्य नथी रह्यो एटले हवे बीजे ठेकाणे जाउं छुं ॥६॥ समुद्रमां प्रवेश करुं ? पृथ्वी उपर भ्रमण करुं ? धातुने धमावुं ? अथवा विद्या के मंत्रनी साधना करुं के देवनी पूजा करुं ? ॥७॥ आजे पण शत्रुओ जीवे छे, मरी गयो होत तो सारुं ! स्वामी मारी उपर रुष्ट छे. वैभववाळा आपेलाने ग्रहण करवा माटे उघराणी करे छे. ॥८॥ इत्यादि ज्वराथी ग्रहित मोटी चिंताओ छे अने नित्य दरिद्र छे ते कौसंबी नगरना ब्राह्मणनी जेम केवी रीते सुखनो अनुभव करे ? तेनुं कथानक आ प्रमाणे -

कौशाम्बी नगरीमां जन्मथी मांडीने दरिद्र, पत्नी-पुत्र-पुत्र्यादि मोटा कुटुम्बवाळो, सोमिल नामनो ब्राह्मण हतो. धन मेळववा माटे देशांतरमां गयेला तेणे वाणिज्यादि व्यापारथी रहित, दान कर्या पछी जमवावाळा एक योगिने जोयो अने ते योगी चिंतातुर ते ब्राह्मणने पूछे छे, तने शी चिंता छे ? तेना वडे कहेवायुं दरिद्रतानी चिंतावाळो छुं, योगीए कह्युं तने हुं समर्थ करुं छुं, परंतु जे हुं कहुं ते तारा वडे करवा योग्य छे. त्यार पछी बन्ने पर्वतनी झाडीमां गया योगीए कह्युं, - आ सुवर्णरस टंडी-गरमी सहन करवा वडे, शुष्क कंदमूल-फलादि खावा वडे शमीवृक्षनां पत्रना पुट वडे मळे छे. बंने वडे पण त्यार पछी ते ज प्रमाणे रस ग्रहण करायो. तुम्बडुं भरायुं. वनथी ते बंने नीकळ्या, योगीए कह्युं - हे ! तारा वडे अप्रमत्तपणे तुंबडुं धारण करवा योग्य छे. आ रस दुःख वडे घणी महेनते छ मासथी मळेलो छे, ए प्रमाणे फरी फरी कहेवाते छते ब्राह्मण रुष्ट थयो. तुंबडुं ढोळी नाख्युं. सागनां पत्रो वडे चारे बाजु नखायेलो सर्व रस ढळी गयो. त्यार पछी आ अयोग्य छे ए प्रमाणे योगी वडे त्यजायेलो ते दरिद्र पृथ्वीमां भमीने मृत्यु पाम्यो. ॥८६॥

पवणुव्व गयणमग्गे, अलक्खिओ भमइ भववणे जीवो ।

ठाणट्टाणंमि समु-ज्झिऊण धण-सयणसंघाए ॥८७॥

गाथार्थ : स्थाने-स्थाने धन अने स्वजनना समूहने मूकीने भववनमां नहीं ओळखायेलो जीव, आकाश मार्गमां पवननी जेम अदृश्य रहीने भमे छे. ॥८७॥

भाषांतर : हे आत्मा ! आ जीव दरेक स्थानमां धन अने स्वजनोना समूहने छोडीने भववनने विषे अदृश्य स्वरूपवाळो भमे छे. कया स्थानमां अने कोनी जेम भमे छे ? जेम आकाश मार्गमां पवन. जे प्रमाणे आकाशमां अदृश्य रूपवाळो पवन भमे छे ते प्रकारे आ जीव पण भमे छे. ॥८७॥

विंधिज्जंता असयं, जम्म-जरा-मरणतिक्खकुं तेहिं ।

दुहमणुहवंति घोरं, संसारे संसरंत जिआ ॥८८॥

गाथार्थ : संसारमां भटकता जीवो जन्म, जरा अने मृत्यु रूप तीक्ष्ण भालाओथी अनेक वार वींघाता घोर दुःख अनुभवे छे. ॥८८॥

भाषांतर : हे आत्मा ! आ जीवो चारगति रूप संसारमां आम-तेम भटकता वारंवार घोर दुःख रूप अशाताने प्राप्त करे छे. केवा प्रकारना जीवो दुःखने अनुभवे छे ? जन्म-जरा-मरण रूप तीक्ष्ण भालाओ वडे वींघाता एवा जीवो

दुःखने अनेक वार प्राप्त करे छे. ॥८८॥

तहवि खणंति कयावि हु, अन्नाणभुअंगडंक्रिया जीवा ।

संसार-चारगाओ, न य उव्विज्जंति मूढमणा ॥८९॥

गाथार्थ : तो पण अज्ञान सर्पथी डसायेला मूढ मनवाळा जीवो संसार रूपी कारागृहथी क्यारे पण क्षण मात्र उद्वेग पामता नथी ए खेदनी वात छे ॥८९॥

भाषांतर : आम अनेक प्रकारे जीवो दुःखने अनुभवे छे तो पण खेदनी वात छे के क्यारे पण मूढ मनवाळा तेओ अज्ञान रूपी सर्पथी डसायेला अर्थात् के अज्ञानथी अंध थयेला क्षण मात्र पण संसार रूपी कारागृहथी उद्वेग पामता नथी. ॥८९॥

कीलसि कियंतवेलं, सरीरवावीड़! जत्थ पइसमयं ।

काल-रहदुघडिहिं सोसिज्जइ जीवियंउभोहं ॥९०॥

गाथार्थ : देह रूपी वावडीमां तुं केटलो समय क्रीडा करीश ? जेमांथी दरेक समये काळ रूपी रेंटनी घडीओ वडे जीवित रूपी पाणीनो प्रवाह शोषाई जाय छे. ॥९०॥

भाषांतर : हे जीव ! तुं शरीर रूपी वावडीमां केटलो समय क्रीडा करीश ? अर्थात् के केटलो काळ रहीश ? जे शरीर रूपी वावडीमांथी दरेक समये काळ रूपी रेंटना घडाओ वडे जीवित रूपी पाणीनो प्रवाह शोषाय छे. जेम वावडी प्रति समये रेंटना घडाओ वडे बहार कढाता पाणीथी सूकाई जाय छे. ते प्रमाणे आ शरीर पण प्रति समये, काळ पसार थये छते, जीवित रूपी जल सूकाई जवाथी खाली थई जाय छे, नाश पामे छे. ॥९०॥

रे जीव! बुज्झ मा भुज्झ मा पमायं करेसि रे पाव! ।

किं परलोए गुरुदुक्ख-भायणं होहिसि अयाण! ॥९१॥

गाथार्थ : हे जीव ! बोध पाम, मोह न कर. हे पापी ! प्रमाद न कर. हे अज्ञान ! परलोकमां भारे दुःखनुं भाजन शा माटे थाय छे ? ॥९१॥

भाषांतर : हे जीव ! आत्मा ! तुं धर्मने विषे बोध पाम. मोह न पाम. हे पापी ! हे दुष्टात्मा ! भाग्यना योगे प्राप्त थयेला धर्ममां आळस न कर, हे अज्ञान ! हे मूढ ! परलोकमां महान अशातावेदनीय कर्मथी उत्पन्न थयेली पीडानुं भाजन शा माटे थाय छे ? (प्राकृत होवाथी वर्तमान काळमां भविष्यन्तिनो प्रयोग छे) ॥९१॥

बुज्झसु रे जीव तुमं, मा मुज्झसि जिणमयम्मि नाऊणं ।

जम्हा पुणरवि एसा, सामग्गी दुल्लहा जीव! ॥९२॥

गाथार्थ : हे जीव ! बोध पाम, जिनमतने जाणीने तुं मोह न पाम. कारण के हे जीव ! आ सामग्री फरी मळवी दुर्लभ छे. ॥९२॥

भाषांतर : हे जीव ! तुं बोध पाम, जिनमतने यथा स्वरूपे जाणीने सर्वज्ञना शासनमां मोह न पाम अर्थात् के जिनमतने सम्यक् प्रकारे स्वीकार. जे कारणथी हे जीव ! काकतालीय न्याय वडे आ उत्तम साधु-श्रावकादि रूप सामग्री एक वार प्राप्त थयेली छे. परंतु फरी आ सामग्री मळवी दुर्लभ छे. आ संसारमां प्राणीओने १, मनुष्य जन्म, २, धर्मनुं श्रवण, ३, धर्मनी श्रद्धा, अने ४, संयमने विषे पुरुषार्थ ए रूप चार श्रेष्ठ अंगो दुर्लभ छे. एटले के चक्रना वेधनी जेम दुःखे करीने प्राप्त थाय छे. ते आ प्रकारे इंद्रपुर नामनुं नगर हतुं, तेमां इंद्रदत्त राजा हतो. तेने इष्ट अने श्रेष्ठ एवी देवीओने बावीस पुत्रो हता. केटलाक कहे छे के - एक ज देवीने पुत्रो हता. ते सर्वे पुत्रो राजाने प्राणनी जेम प्रिय हता-बीजी एक अमात्यनी दीकरी हती. ते परणती वखते जोवायेली हती. ते अन्यदा क्यारेक ऋतुस्नाता थयेली आवे छे. राजा वडे जोवाई, 'आ कोण छे ? एम

પૂછાયું, મંત્રી વડે કહેવાયું આ તારી દેવી છે. ત્યારે તે તેણીની સાથે એક રાત્રિ વસે છે. તે ઋતુસ્નાતા હતી તેથી તેને ગર્ભ રહ્યો. તેણી અમાત્ય વડે કહેવાઈ કે જ્યારે તને ગર્ભ રહે ત્યારે મને કહેજે. તેણી વડે તેને તે દિવસ અને મૂહૂર્ત કહેવાયું. જે રાજા વડે કહેવાયેલા સંકેત કરનાર હતો તેના વડે પત્રમાં લખાયું. તે તેને સાચવી રાખે છે. નવ માસ પૂરા થયે પુત્ર જન્મ્યો. તેના દાસીને પણ તે જ દિવસે બાલકો જન્મ્યા તે આ પ્રમાણે - (૧) આગ્નેયક (૨) પર્વતક (૩) બહુલિક (૪) સાગર, તે સાથે ઉત્પન્ન થયેલા હતા. મંત્રી વડે કલાચાર્યની પાસે દીકરીના બાલકને લેખનાદિ ગણિત પ્રધાન બહોત્તેર કલાઓ ગ્રહણ કરાવાઈ. જ્યારે તે ચાર બાલકો ગ્રહણ કરાવાય છે, ત્યારે તેઓ આચાર્યને હેરાન કરે છે અને વ્યાકુલ કરે છે. પૂર્વના પરિચય વડે તેઓ અવાજ કરે છે. કલાચાર્ય તેને ગણતા નથી અને કલાઓ ગ્રહણ કરાઈ. તે બીજા બાવીશ કુમારો કલાને મળાવતી વચ્ચે તે આચાર્યને મારે છે. ધરાબ વચનો બોલે છે. જ્યારે તે આચાર્ય તેઓને શિક્ષા કરે છે. ત્યારે તેઓ જઈને માતાને કહે છે ત્યારે તે માતાઓ આચાર્યની હીલના કરે છે. કે 'કેમ હળો છો ? પુત્રનો જન્મ શું સુલભ છે ? તેથી તેઓ શિક્ષા ન અપાયા.

આ તરફ મથુરામાં પર્વત રાજા હતો તેને નિવૃત્તિ નામની દીકરી હતી. શણગારેલી તે રાજા પાસે લવાઈ. રાજાએ કહ્યું- 'જે તને ગમે તે તારો પતિ થાય' ત્યારે તેના વડે જણાવાયું 'જે શૂર, વીર અને પરાક્રમવાળો હોય તે મારો પતિ થાઓ. તને વળી રાજ્ય અપાય. ત્યારે તે સૈન્ય અને વાહનને ગ્રહણ કરીને ઇન્દ્રપુર નગર તરફ ગઈ. ત્યાં ઇન્દ્રદત્ત રાજાના ઘણા પુત્રો તેણે સાંભળ્યા હતા. ખુશ થયેલો ઇન્દ્રદત્ત વિચારે છે 'ખરેખર ત્યાર પછી, તેણે નગરને ઝંઘી ધજાઓથી શણગાર્યું. ત્યાં એક પૈડામાં આઠ ચક્રો છે. તેની પાછળ પૂતળી છે. તેને આંખમાં વીંધવાની છે. ત્યાર પછી તૈયાર થયેલો ઇન્દ્રદત્ત રાજા પુત્રો સાથે નીકળ્યો. તે કન્યા પણ સર્વ અલંકારથી વિભૂષિત એક પ્રદેશમાં રહે છે. તે રાજાનો રંગમંડપ છે. તે દંડિક રાજા સૈન્ય અને ભોગિક રાજા છે, જેવો દ્રૌપદીમાં સ્વયંવર મંડપ રચાયેલ તેવો મંડપ રચાયેલ છે. ત્યાં રાજાનો મોટો પુત્ર શ્રીમાળી નામનો હતો તે કહેવાયો 'હે પુત્ર ! આ પુત્રી અને રાજ્ય ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે. તેથી આ પૂતળીને તું વીંધી નાખ. ત્યારે આવા કાર્ય માટે જેણે પ્રયત્ન-મહેનત નથી કરી તેવો તે સમૂહની મધ્યમાં ધનુષ્યને ગ્રહણ કરવા માટે પણ શક્તિમાન ન થયો. બીજા કેટલાક પુત્રોએ ધનુષ્યને ગ્રહણ કર્યું. તેના વડે 'જ્યાં જવું હોય ત્યાં જાઓ' એ પ્રમાણે બાળ મૂકાયું. તે ચક્રમાં અથડાઈને ભાગી ગયું- એ પ્રમાણે કોઈકને એક આરાની વચ્ચેથી પસાર થયું, કોઈકને બે અને કોઈકને ત્રણ, કેટલાકનું ચક્રની બહાર જાય છે. ત્યારે રાજા અધૃતિને પામ્યો. અરે ! હું આ પુત્રો વડે અપમાનિત કરાયો. ત્યારે અમાત્ય વડે કહેવાયું. 'શા માટે અધૃતિને કરો છો ?' રાજા કહે છે 'આ પુત્રો વડે હું હલકો કરાયો. ત્યારે મંત્રી કહે છે. 'આપનો બીજો પણ પુત્ર છે, જે મારી દીકરીથી ઉત્પન્ન થયેલ સુરેન્દ્રદત્ત નામનો છે. તે શિક્ષા અપાયેલો છે. તે વિંધવા માટે સમર્થ છે. તેની જાણકારી કહેવાઈ. રાજાએ પૂછ્યું 'તે ક્યાં છે ?' તે બતાવાયો. ત્યાર પછી પ્રગટ કરાયેલો તે રાજા વડે કહેવાયો કે તારે આ આઠ રથના ચક્રોને ભેદીને પૂતળીને આંખમાં વીંધીને રાજ્યનું સુખ અને નૃવૃત્તિ રાજકન્યાને ગ્રહણ કરવા માટે શ્રેયસ્કર છે. ત્યાર પછી કુમારે 'જેવી આપની આજ્ઞા' એ પ્રમાણે કહીને સ્થાને બેસીને ધનુષ્યને ગ્રહણ કરે છે. લક્ષ્યને અભિમુખ બાળ તૈયાર કરે છે. ને દાસના બાલકો ચાર દિશામાં રહેલા અવાજ કરે છે. બીજા પણ બંને પડખે હાથમાં તલવાર લઈને ઉભા છે કે કોઈપણ રીતે લક્ષ્યને ચૂકે તો તેનું શિર છેદી નાખવું. તે ઉપાધ્યાય પણ પડખે રહેલો ભય આપે છે - જો ચૂકી જઈશ તો મરાઈશ. તે બાવીશ કુમારો પણ 'આ વીંધશે' એ પ્રમાણે વિશેષ ઉલ્લંઠ એવા વિઘ્નો કરે છે. ત્યાર પછી તે ચાર અને તે બાવીશ કુમારોને નહિ ગણતો તે આઠ રથના ચક્રોના અંતરને જાણીને તે લક્ષ્યમાં અવરોધ વગરની દૃષ્ટિ વડે અન્યમતિ નહિ કરવા વડે તે પૂતળી ડાબી આંખમાં વીંધાઈ. ત્યારે લોક વડે મોટા કલકલ અવાજ વડે પ્રશંસા કરાઈ. જે પ્રમાણે તે ચક્રને ભેદવું દુષ્કર છે એ પ્રમાણે આ સામગ્રી પણ દુર્લભ છે. ॥૧૨॥

દુલહો પુણ જિણધમ્મો, તુમં પમાયાયરો સુહેસી ય ।

દુસહં ચ નરય-દુક્ખં, કહ હોહિસિ તં ન યાગામો ॥૧૩॥

ગાથાર્થ : જિનધર્મની ફરી પ્રાપ્તિ દુર્લભ છે. તું પ્રમાદી અને સુખનો અભિલાષી છે, નરકનું દુઃખ દુઃસહ છે. તારું શું થશે

ते अमे जाणता नथी. ॥१३॥

भाषांतर : हे जीव ! जीनेश्वरे कहेलो, अहिंसादि रूप, एक वार प्राप्त थयेलो (ए अध्याहारथी ग्रहण करवानुं छे) आ धर्म फरी प्राप्त थवो अत्यंत दुर्लभ छे. तुं आळसादि तेर काठियानी खाण छे. आलसादिथी हणायेलो धर्मने प्राप्त करतो नथी अने थई जाय तो प्राप्त थयेला एवा आ धर्मने खरेखर सारी रीते आचरतो नथी. जेथी आवश्यक निर्युक्तिमां कहेलुं छे के १. आळस २. मोह ३. अवज्ञा ४. मान ५. क्रोध ६. प्रमाद ७ कृपणता ८. भय ९. शोक १०. अज्ञान ११. व्याक्षेप १२. कूतुहल १३. रमत आ तेर काठीया छे. १. आलसथी साधुनी पासे जतो नथी. २. घरना कार्यमां ज मूढ मोहथी, धर्मने सांभळतो नथी, ३. आ साधुओ शुं जाणे ? ए प्रमाणे अवज्ञा करे छे. ४. जाति-बळादिना अभिमानथी स्तब्ध रहे छे. ५. साधुना दर्शनथी ज कोप करे छे. ६ मद्यादि प्रमादने वश थाय छे. ७. कृपणताथी कोईने कांईपण आपतो नथी. ८. नारकादिना वर्णनथी भय पामे छे. ९. इष्टना वियोग रूप शोकथी १०. कुदृष्टि रूप अज्ञानताथी ११. व्याक्षेपपणाथी १२ कूतुहल रूप नटादि विषयोथी, १३. रमणताथी -शोखथी-तित्तिरादि पक्षीओना शिकार वडे. आ बधा कारणोथी सुदुर्लभ एवा पण मनुष्य भवने मेळवीने जीव संसारथी पार उतारनारा अने हितकारी एवा श्रवणने पामतो नथी. अने वळी तुं आलोकना सुखनी लालसावाळो छे. वळी नरकनुं दुःख दुःसह छे एटले सहन करवुं अशक्य छे. आथी ! परलोकमां तारुं शुं थशे ? ते अमे जाणता नथी. ॥१३॥

अथिरेण थिरो समलेण, निम्मलो परवसेण साहीणो ।

देहेण जइ विढप्पइ, धम्मो ता किं न पज्जतं ? ॥१४॥

गाथार्थ : अस्थिर, मलिन अने पराधीन देहथी जो स्थिर निर्मळ अने स्वाधीन धर्म उपार्जन थई शके छे, तो तने शुं प्राप्त नथी थयुं ? ॥१४॥

भाषांतर : हे जीव ! अशाश्वत एवा शरीर वडे जो परलोकमां पण साथे आवनार धर्म उपार्जन थई शके छे, तो शुं प्राप्त नथी थयुं ? अर्थात् के शुं पूर्ण नथी थयुं ? तथा विष्टा अने मूत्रादि अशुचिथी पूर्ण एवा देह वडे जो निर्मळ एवो धर्म उपार्जन करी शकाय छे, तो शुं प्राप्त नथी करायुं ? तथा रोगादिथी आधीन एवा देह वडे आत्माने स्वाधीन धर्म मेळवी शकाय छे, तो शुं नथी मेळवायुं ? ॥१४॥

जह चिंतामणि-रयणं, सुलहं न हु होइ तुच्छविहवाणं ।

गुणविहव-वज्जियाणं जियाण तह धम्मरयणंपि ॥१५॥

गाथार्थ : तुच्छ वैभववाळाओने जेम चिंतामणि रत्न सुलभ नथी होतुं, तेम गुण रूपी वैभवथी रहित जीवोने धर्मरत्न पण सुलभ थतुं नथी. ॥१५॥

भाषांतर : जे प्रकारे चिंतामणि रत्न तुच्छ वैभववाळाने अर्थात् अल्प पुण्यवाळाने सुलभ थतुं नथी. अहीं कारणमां कार्यनो उपचार करेलो छे. वैभवनुं कारण जे पुण्य छे, ते तुच्छ वैभववाळाने अल्प होय छे. अहीं कारण पुण्य अने कार्य वैभव छे ते कारण (पुण्य)मां कार्य (वैभव)नो उपचार करेलो छे. तेवा प्रकारना पशुपालकनी जेम. ते ज प्रकारे अक्षुद्रतादि गुणोनुं होवुं एटले तेनी सत्ता ते गुणवैभव तथा गुण ए ज वैभव ते गुणवैभव, तेवा गुण वैभवथी रहित जीवोने धर्म रूपी रत्न पण सुलभ थतुं नथी. अने कहेलुं छे के बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रियोने प्राणीओ कहेवाय, वनस्पतिकायने भूत कहेला छे. पंचेन्द्रिय होय ते जीवो जाणवा. ते सिवायना सर्वे सत्त्व कहेवायेला छे. ॥११॥ अपि शब्द जे कहेवायेल छे, तेनो अहीं संबंध होवाथी आ प्रमाणे अर्थ करवो के एकेन्द्रिय अने विक्लेन्द्रियोने धर्मनी प्राप्ति नथी. धर्मनी योग्यताना कारणभूत गुणोथी रहित पंचेन्द्रिय जीवोने पण धर्मरत्न सुलभ नथी. ए प्रमाणे संबंध जोडवो. पूर्वे सूचित करायेलुं पशुपालनुं दृष्टांत आ प्रमाणे - 'घणा पंडितजनोथी युक्त, प्रभुथी रक्षित, सेंकडो अप्सराओथी युक्त, इन्द्रना नगरनी जेम श्रेष्ठ एवुं हस्तिनापुर नामनुं नगर छे. ॥११॥ त्यां श्रेष्ठीओमां उत्तम, पुण्यशाळी नागदेव नामनो श्रेष्ठी हतो. तेने निर्मळ एवा शील रूप गुणने धारण करनारी वसुंधरा नामनी पत्नी हती. ॥१२॥ तेमनो विनय अने उज्जवळ मति

रूप वैभवने धारण करनारो जयदेव पुत्र हतो. ॥३॥ होंशियार एवो ते बार वर्ष सुधी रत्ननी परीक्षा शीख्यो हतो. जेणे अन्यना तेजने जीती लीधुं छे, निर्मल, चितवेला अर्थने आपवामां होंशियार एवा विशाल चिंतामणि रत्नने छोडीने बीजा मणिओने ते पत्थर समान माने छे. ॥४॥ ते उद्यमशील एवो जयदेव समग्र नगरना घरे घरे अने दुकाने दुकाने भमतो थाक्या वगर चिंतामणि रत्ननी शोध माटे उद्यम करे छे. ॥५॥ दुःखे करीने प्राप्त थाय तेवुं चिंतामणी रत्न तेने प्राप्त न थयुं. एटले मातापिताने कहे छे के मारा वडे अहीं नगरमां चिंतामणि रत्न प्राप्त न करायुं तेथी तेने शोधवा माटे हुं अन्य ठेकाणे जाउं छुं. ॥६॥ तेओ वडे कहेवायुं हे स्वच्छ मतिवाळा वत्स ! समग्र भुवनमां अन्यत्र कोई ठेकाणे आवुं चिंतामणि रत्न नथी. खरेखर आ चिंतामणि रत्न काल्पनिक छे. ॥७॥ तेथी तेना समान बीजा रत्न वडे इष्ट वस्तुने मेळववा व्यवहार कर, जेथी निर्मल कमलथी युक्त भवन तने थशे. ॥८॥ आ प्रमाणे कहेवा छतां पण ते चिंतामणिरत्ननी प्राप्ति माटे करेलो छे निश्चय एवो ते बुद्धिमान मातापिताए अटकाव्यो होवा छतां हस्तिनापुरथी नीकळ्यो ॥९॥ पर्वत, नगर, गाम, खाण, कर्बट, पत्तन, सागरना किनाराने विषे तेने शोधवा माटे तेयार थयेला मनवाळो लांबो समय भमतो, दुःखने पामतो. ॥१०॥ पण तेने प्राप्त नहि करतो वैमनस्यवाळो विचारे छे खरेखर आवुं रत्न जगतमां नथी ए वात शुं साची छे ? अथवा तेनी चिंता करवानी जरूर नथी कारण के शास्त्रमां कहेलुं अन्यथा-फोगट होतुं नथी. ॥११॥ ए प्रमाणे चित्तमां निश्चय करीने फरीथी भमवा माटे शरू करे छे. घणी मणीनी खाणोने वारंवार पूछतो निश्चय करतो ॥१२॥ एक वृद्ध पुरुष वडे ते कहेवायो के अहीं मणीवाळी खाण छे. मणीओमां श्रेष्ठमणि पुण्यवाळो ज पामे छे. ॥१३॥ ते त्यां गयो अने निर्मल एवा मणिना समुदायने शोधतो हतो, एटलामां एक अधिक मूर्ख एवो पशुपाल तेने मळ्यो ॥१४॥ जयदेव वडे तेना हाथना तळियामां वर्तुळ एवो पत्थर जोवायो, ग्रहण कर्यो ते प्रमाणे परीक्षा कर्यो अने ए पत्थर चिंतामणि रत्न छे एम जाण्युं ॥१५॥ अने आनंदित थयेला एवा तेणे ते माग्युं. पशुपाले कहुं 'आना वडे शुं काम छे ?' तेणे कहुं. घरे गयेलो हुं बाळकने रमवा माटे आपीश. ॥१६॥ ते पशुपाले कहुं 'आवा घणा पत्थर अहीं छे तेने तुं केम ग्रहण करतो नथी ? श्रेष्ठिपुत्रे कहुं. हुं मारा घरे जवा माटे उत्सुक थयो छुं. ॥१७॥ तेथी तुं मने ते आप अने हे भद्र ! अहीं तुं बीजो पण प्राप्त करी लेजे छतां पण परोपकार करवानो स्वभाव नहि होवाथी ते आपतो नथी. ॥१८॥ तेथी आ पशुपालने चिंतामणि रत्न मळे ते पण श्रेष्ठ छे एने उपकार करनार थाओ पण रत्न अफळ न थाओ. तेथी करुणाथी परिकर्मित थयेली बुद्धिवाळो श्रेष्ठिपुत्र पशुपालने कहे छे ॥१९॥ भद्र ! जो तुं मने नथी आपतो तो आ चिंतामणिने तुं पोते आराधना कर जेनाथी तारी ईच्छाने तुं पूरी करशे. ॥२०॥ त्यारे पशुपाले कहुं जो आ साचो चिंतामणि छे तो मारा वडे इच्छा कराय छे के बोर-केरडा-कचरा प्रमुख मने घणुं आपो. ॥२१॥ त्यारे हसता अने विकसित मुखवाळा श्रेष्ठिपुत्रे कहुं. आ प्रमाणे इच्छा न कराय. परंतु त्रण उपवास करी छेल्ला उपवासनी रात्रिमां पृथ्वीने लीपी पवित्र वस्त्र उपर स्नपन अने विलेपन करेला मणिने स्थापन करीने कपूर अने पुष्पादि वडे पूजीने विधिपूर्वक नमस्कार करीने आराधना करवामां आवे ॥२२, २३॥ पछी जे इच्छितनी मागणी कराय, ते आ रत्ननी आगळ सर्व प्राप्त कराय, ए प्रमाणे सांभळीने मणिने उछाळतो पशुपाल गाम तरफ चाल्यो. ॥२४॥ न्यूनपुण्यवाळा एवा आ पशुपालना हाथना तळियामां आ चिंतामणि रत्न टकतुं नथी. ए प्रमाणे विचारीने श्रेष्ठिपुत्र तेनी केडने छोडतो नथी. ॥२५॥ रस्तामां जता पशुपाले कहुं हे मणि ! आ अहीं छाणा पड्या छे तेने वेच अने वेचीने कपूरादि लाव. जेथी तारी पूजाने करुं ॥२६॥ मारा इच्छितने पूरा करवा वडे तुं पण त्रण भुवनमां सार्थक नामवाळो था. आ प्रमाणे मणिने कहेवाये छते मणिए कांई जवाब न आप्यो. ॥२७॥ गाम हजी दूर छे, तो हे मणि ! मारी आगळ तुं कथाने कर. हवे जो तुं नथी जाणतो तो हुं तने कहुं छुं. तुं एकलो सांभळ. ॥२८॥ एक देवगृह एक हाथनुं हतुं तेमां चार हाथनो त्यां देव वसे छे. ए प्रमाणे फरी कहुं तो पण मणि कांई बोलतो नथी ॥२९॥ तेटलामां गुस्से थईने तेणे कहुं जो हुंकार माग पण मने आपतो नथी तो इच्छित अर्थने संपादन करवामां तारी पासे केवी रीते आशा रखाय ? ॥३०॥ तेथी चिंतामणि ए प्रमाणे तारुं नाम फोगट छे. सत्य जो होय तो तारी प्राप्ति थये छते मारी चिंता दूर केम न थाय ? ॥३१॥ वळी क्षण माटे पण हुं जे राब अने छाश विना रहेवा माटे शक्तिमान नथी, तो शुं हुं त्रण उपवास वडे मरी न जाउं ? ॥३२॥ तेथी मने मारवाना हेतुथी वाणियाए वर्णन कर्युं छे. जेथी तने कोई जुवे नहि, त्यां जा. ए प्रमाणे कहीने तेना वडे

ते मणि नाखी देवायो. ॥३३॥ हर्षित थयेल मनवाळो जयदेव संपूर्ण मनोरथवाळो नमस्कारपूर्वक चिंतामणिने ग्रहण करीने हवे पोताना नगर तरफ चाल्यो. ॥३४॥ मणिना प्रभावथी उल्लसित वैभववाळो महापुर नगर तरफ जतां रस्तामां सुबुद्धिनामना श्रेष्ठीनी रत्नवती नामनी कन्याने परणीने बहु परिवारथी परिवरेला जन समुदाय वडे गुणो गवातो हस्तिनापुर पहोंच्यो अने माता-पिताना चरणोमां पड्यो. ॥३५,३६॥ ते बंनेना स्वजनो वडे अभिनंदन अपातो बहुमान वडे सन्मान करायेल अने बाकीना माणसो वडे प्रशंसा करायेलो भोगोनुं भाजन थयो. आ दृष्टांतनो उपनय आ प्रमाणे छे - देव, नरक अने तिर्यच गति ए बीजा मणिओनी खाणनी जेम छे. कोईपण रीते परिभ्रमण करवा वडे जीव वडे आ सारा रत्ननी खाण समान मनुष्यगति मेळवाई छे. तेमां पण दुर्लभ एवा चिंतामणि रत्न समान परमात्माए उपदेशेल धर्म छे. ॥३९॥ अहीं पशुपालनी जेम जेणे सुकृत रूपी धन नथी मेळव्युं ते मणिने मेळवी शकतो नथी. ज्यारे पुण्यरूपी धनथी युक्त वणिकपुत्र जयदेवे ते प्राप्त कर्युं. ॥४०॥ तेवी ज रीते जेनी पासे गुणवैभव नथी. ते आ धर्मरत्नने मेळवतो नथी. संपूर्ण अने निर्मल गुणना समुदायना वैभववाळो धर्मरत्नने प्राप्त करे छे. ॥४१॥ (धर्मरत्न प्रकरणनी देवेन्द्रसूरिकृत टीकामां) ॥९५॥

जह दिट्ठीसंजोगो, न होइ जच्चंधयाण जीवाणं ।

तह जिणमयसंजोगो, न होइ मिच्छंधजीवाणं ॥९६॥

गाथार्थ : जन्मांध जीवोने जेम चक्षुनो योग न होय तेम मिथ्यात्वथी अंध जीवोने जिनधर्मनो योग न होय. ॥९६॥

भाषांतर : जेम जन्मथी ज अंध होय तेवा जीवोने चक्षुनो योग होतो नथी. ते ज प्रकारे कुवासना रूपी मिथ्यात्वथी जे विवेकथी रहित जीवो छे तेओने श्री जिनशासननी प्राप्ति थती नथी. ॥९६॥

पच्चक्खमणंतगुणा, जिणिंदधम्मे न दोसलेसो वि ।

तह वि हु अत्राणंधा, न रमंति कयावि तम्मि जिया ॥९७॥

गाथार्थ : श्री जिनेन्द्रधर्ममां प्रत्यक्ष अनंतगुणो छे अने दोष लेशमात्र नथी. खेदनी वात छे के तो पण अज्ञानथी अंध जीवो तेमां रमणता करता नथी. ॥९७॥

भाषांतर : श्री जिनेन्द्रना धर्ममां आ लोकमां यश विगेरेनी प्राप्ति अने परलोकमां स्वर्ग अने मोक्षना सुखनी प्राप्ति विगेरे साक्षात् अनंतगुणो छे तथा अयश विगेरे लेशमात्र पण दोष नथी, तो पण खेदनी वात छे के वस्तुनुं जेवुं स्वरूप छे तेवा स्वरूपने नहीं जाणनारा, अज्ञानथी अंध बनेला जीवो, क्यारे पण जिनेश्वरे कहेला धर्ममां रमणता करता नथी, अज्ञान पणाथी ज तेओ वस्तुना साचा स्वरूपने समजी शकता नथी. ॥९७॥

मिच्छे अणंत दोसा, पयडा दीसंति न वि य गुणलेसो

तह वि य तं चव जिया, ही मोहंधा निसेवंति ॥९८॥

गाथार्थ : मिथ्यात्वमां अनंत दोषो प्रगट देखाय छे अने तेमां गुणनो लवलेश पण नथी. खेदनी वात छे के छतां पण मोहथी अंध बनेला जीवो मिथ्यात्वने ज सेवे छे. ॥९८॥

भाषांतर : कुदेव, कुगुरु अने कुधर्मना स्वीकार करवाना अध्यवसाय रूप मिथ्यात्वना सेवनमां नरकपातादि अनंत दोषो स्पष्ट देखाय छे अने गुणनो लेश पण देखातो नथी. आश्चर्यनी के खेदनी वात छे के तो पण अज्ञानथी अंध बनेला जीवो ते मिथ्यात्वने ज सेवे छे - आश्रय करे छे. ॥९८॥

धीद्धी ताण नराणं, वित्राणे तह गुणोसु कुसलत्तं ।

सुहसच्च-धम्मरयणे सुपरिक्खं जे न जाणंति ॥९९॥

गाथार्थ : जेओ सुखद सत्य धर्म रूप रत्ननी सारी रीते परीक्षा नथी करी शकता, ते पुरुषोनी विज्ञाननी अने गुणोनी

कुशळताने धिक्कार थाओ ! धिक्कार थाओ ! ॥१९१॥

भाषांतर : ते पुरुषोना विज्ञान रूप शिल्पना कुशलपणाने धिक्कार थाओ, तेओना शिल्पना कुशलपणा वडे शुं ? तथा शूरवीरता, उदारता, धीरतादि गुणोमां रहेला कुशलपणाने पण धिक्कार हो, शा माटे तेओनुं धिक्कारपणुं कहुं ? तो कहे छे के जे पुरुषो सुखने आपनारा सत्य रूप धर्मरत्ननी परीक्षा करी शकता नथी के आ धर्म ज कल्याणकारी छे के बीजो ? ए प्रमाणे धर्मनी परीक्षाथी रहित तेओनुं अन्य ठेकाणे रहेलुं कुशलपणुं पण धिक्कारने पात्र ज छे. जेथी कहेलुं छे के सर्व कळाओमां श्रेष्ठ एवी धर्मकळाने जेओ जाणता नथी तेवा बहोत्तेर कळाओमां कुशल पण पंडित पुरुषो अपंडित ज छे अर्थात् के मूर्ख ज छे. ॥१९१॥

जिणधम्मोऽयं जीवाणं, अपुब्बो कप्पपायवो ।

सग्गापवग्गसुक्खाणं, फलाणं दायगो इमो

॥१९०॥

गाथार्थ : आ जिनधर्म जीवोने माटे अपूर्व कल्पतरु छे, स्वर्ग अने मुक्तिना सुख रूप फलने ते आपनार छे. ॥१९०॥
भाषांतर : हे जीव ! प्राणीओने आ जिनधर्म अपूर्व नवा कल्पवृक्ष समान छे. शा माटे तेनुं अपूर्वपणुं कहुं ? तो कहे छे के आ केवा प्रकारनुं छे ? आ धर्म रूपी कल्पवृक्ष स्वर्ग अने मोक्षना सुख रूप फलने आपनार छे. खरेखर अन्य कल्पवृक्ष आवा उत्तम फलने आपनार नथी थतुं. आ धर्म रूपी कल्पवृक्ष एने पण आपनार थाय छे. तेथी आ धर्म रूपी कल्पवृक्षनुं अन्य कल्पवृक्षोथी अपूर्वपणुं छे. ॥१९०॥

धम्मो बंधु सुमित्तो य, धम्मो य परमो गुरू ।

मुक्खमग्ग पयट्टाणं, धम्मो परमसंदणो

॥१९१॥

गाथार्थ : धर्म बंधु अने सुमित्र छे अने परम गुरु छे. मोक्षमार्गमां प्रवृत्त थयेलाओने परम रथ समान छे. ॥१९०१॥
भाषांतर : हे जीव ! आ जिनधर्म बंधु जेवो छे. जेम बंधु आपत्तिमां सहाय करे छे, ते ज प्रकारे आ धर्म पण भवरूपी आपत्तिमां रक्षण करनार छे. वळी आ धर्म सुमित्र छे. जेम सुमित्र हितार्थनां संपादनथी सुखने आपे छे, तेम आ धर्म पण सुखने आपे छे. तथा आ धर्म परमगुरु छे. जेम गुरु खराब मार्गथी पाछा वाळे छे, ते प्रमाणे आ धर्म पण नरक-तिर्यचादि रूप दुर्गति मार्गोथी पाछा वाळे छे. अर्थात् के दुर्गतिमां पडता जीवोने बचावे छे.
तथा मोक्षमार्गमां चालता जीवोने आ धर्म रथ समान छे. जेम रथ वडे मार्गमां सुखेथी जवाय छे तेम धर्म रूपी रथ वडे पण मोक्षमार्गमां प्रवृत्त थयेला पुरुषो सुख वडे शिवपुरीमां जाय छे. ॥१९०१॥

चउगइणंतदुहानल-पलित्तभवकाणणे महाभीमे ।

सेवसु रे जीव! तुमं, जिणवयणं अमियकुंडसमं

॥१९०२॥

गाथार्थ : हे जीव ! चार गति रूप अनंत दुःखाग्निथी बळता एवा आ महाभयंकर भववनमां अमृतकुंड समान जिनवाणीनुं तुं सेवन कर. ॥१९०२॥
भाषांतर : हे जीव ! महाभयंकर, नरकादि चारगति रूप जे भववन छे, ते वन अनंत दुःखो रूपी अग्निथी बळी रह्युं छे. तेमां अमृतना कुंड समान श्री जिनवाणीनुं एटले के श्री सिद्धांतनुं सेवन कर अर्थात् सिद्धान्तमां कहेला अनुष्ठाननुं तुं आचरण कर. ॥१९०२॥

विसमे भवमरुदेसे, अणंतदुहगिम्ह-तावसंतत्ते ।

जिणधम्म-कप्परुक्खं, सरसु तुमं जीव! सिवसुहदं

॥१९०३॥

गाथार्थ : हे जीव ! अनंत दुःख रूप ग्रीष्मऋतुना तापथी संतप्त अने विषम एवा संसाररूप मरुदेशमां शिवसुखने आपनार जिनधर्मरूपी कल्पवृक्षनुं तुं स्मरण कर. ॥१९०३॥
भाषांतर : हे जीव ! विषम एटले के जेमां दुःखे करीने फरी शकाय तेवा तथा अनंत दुःख रूप ग्रीष्मऋतुना तापथी बळता एवा आ संसार रूप मरुदेशमां जिनधर्म ज कल्पवृक्ष समान छे, ते ज रक्षण करनार छे, एम तु

विचार. जिनधर्म रूपी कल्पवृक्ष केवा प्रकारनुं छे ? ते जिनधर्मरूपी कल्पवृक्ष मोक्षसुखोने आपे छे. ॥१०३॥

किं बहुणा ? जिणधम्म, जइयव्वं जह भवोदहिं घोरं ।

लहु तरियमणंतसुहं लहइ जिओ सासयं ठाणं ॥१०४॥

गाथार्थ : घणुं कहेवा वडे शुं ! घोर भवोदधिने सहेलाईथी तरीने अनंत सुखनुं शाश्वत स्थान जे रीते जीव प्राप्त करे ते रीते जिनधर्ममां यत्न करवो जोईए. ॥१०४॥

भाषांतर : हे जीव ! घणुं कहेवा वडे शुं ? ते प्रकारे जिनेश्वरे कहेला धर्ममां यत्न करवा योग्य छे, जेथी आत्मा घोर अने अनादि अनंत होवाथी अपार एवा भव रूपी समुद्रने तरीने अनंत सुख रूप, एटले ज्यां सुखनो अंत नथी एवा शाश्वत स्थानने मेळवे. ते अवस्थामां शरीरादि दुःखनां कारणोनो अभाव होवाथी आत्मा केवल सुखने भजनारो ज होय छे. श्री आचारांगमां लोकसार नामना पाचमा अध्ययनना छट्ठा उद्देशामां कहेलुं छे के ते परम पद रूप मोक्षमां रहेल पुरुष, अनंतज्ञान अने अनंत दर्शनथी युक्त होय छे. आकारने आश्रयीने ते लांबो होतो नथी, नानो होतो नथी, गोल, त्रिकोण चतुष्कोण अने परिमंडलाकारे संस्थानने आश्रयीने होतो नथी. वर्णने आश्रयीने काळो-लीलो-लाल-पीळो अने सफेद होतो नथी. गंधने आश्रयीने सुगंध अथवा दुर्गंधवाळो होतो नथी. रसने आश्रयीने तीखो-कडवो तुरो-खाटो अने मीठो होतो नथी. स्पर्शने आश्रयीने कठोर-कोमळ, हलको-भारे, ठंडो-गरम, चीकणो-लुखवो होतो नथी. ते लेश्यावाळो तेमज शरीरधारी पण होतो नथी. (वेदान्तवादि आ प्रमाणे माने छे के एक ज मुक्तात्मा छे अने तेनी कायामां बीजा क्षीण क्लेशवाळा जीवो प्रवेशे छे. जेम सूर्यनां किरणो सूर्यमां प्रवेशे तेम, परंतु आ प्रमाणे होतुं नथी. रूह धातु बीज रूप जन्ममां अने प्रादुर्भावमां छे. रूह एटले उगे छे अने अरुह एटले उगतो नथी तथा कर्मरूपी बीजनो अभाव होवाथी पुनर्जन्मवाळा नथी. (वळी शाक्य दर्शनवाळा तीर्थनो उद्धार करवा माटे मुक्तात्माओ फरी जन्मने धारण करे छे तेम माने छे) कह्युं छे के तारुं शासन छिन्नभिन्न थये छाते परार्थ माटे शूरवीर एवो, मुक्त होवा छती कर्यो छे भव जेने एवो तुं, नथी धारण कराई भयनी निष्ठा जेमां एवा निर्वाणनुं मथन करीने कर्म रूपी इंधन बळी जवा छतां मोहराज्यवाळा संसारने फरी पामे छे. तथा ते अमूर्त होवाथी संग विद्यमान नथी होतो. ते स्त्री वेद पुरुष वेद अने नपुंसक वेदथी रहित होय छे. ए प्रमाणे केवल सर्वे आत्मप्रदेशो वडे सर्व प्रकारे विशेषथी जाणे छे. आथी परिज्ञ तथा सामान्यथी पण सारी रीते जाणे छे अर्थात् के देखे छे. आथी संज्ञ एटले के ज्ञान-दर्शनथी युक्त छे आ प्रमाणेनो अर्थ थयो. जो नाम अने स्वरूपथी मुक्तात्मा जणातो नथी तो शुं उपमा आपवा द्वारा सूर्यनी गतिनी जेम जाणी शकाय छे के नहीं ? ए प्रकारे कोई मानतुं होय तो कहे छे के उपमा द्वारा पण जाणी शकातो नथी. जेथी कह्युं छे के जेना सदृशपणाथी अन्य जाणी शकाय ते उपमा कहेवाय परंतु ते मुक्तात्माना ज्ञान अथवा सुखनी तुलना करवा माटे कोई उपमा नथी. तेओनुं लोकातिगपणुं छे. कया कारणथी तेओनुं लोकातिगपणुं छे ? ते मुक्तात्माना सत्ता रूप रहित छे. अने वळी तेओनुं अरूपीपणुं दीर्घादिना निषेध वडे प्रतिपादन करेलुं ज छे. ते आत्माना कोई अवस्था विशेष पण नथी. आथी ते अपद छे एटले के तेनुं कोई वाचक पद नथी. पदो द्वारा जेनुं कथन कराय छे तेमां तेमां रूप-रस-गंध-स्पर्शादिमांथी कोईपण अवश्य होय छे. परंतु मुक्तात्मानां आमांथी बधानो अभाव छे. अने तेनो अभाव बताववा माटे कहे छे के ते मुक्तात्मा शब्दरूप नथी, रूप स्वरूप नथी, गन्ध रूप नथी रस रूप नथी, स्पर्श रूप नथी, आटला ज वस्तुना भेदो होय, परंतु तेनो प्रतिषेध होवाथी मुक्तात्मानां कोईपण विशेष संभवतो नथी के जेना वडे आ व्यपदेश करी शकाय. आ प्रमाणे आचारांगनी टीकामां कहेलुं छे. ॥१०४॥

ते धन्ना ते साहू, तेसिं च नमो अकज्जपडिविरया ।

धीरा वयमसिहारं, चरंति जह थूलभद्दमुणी ॥१०५॥

गाथार्थ : अकार्यथी विरत थयेला अने धीर एवा ते साधुओ धन्य छे. तेओने नमस्कार थाओ, जेओ तलवारनी धार समान दुष्कर एवा व्रतने स्थूलभद्र मुनिनी जेम आचरे छे. ॥१०५॥

श्रीउवसग्गहरं महाप्रभाविक स्तोत्र

उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं, विसहरविसनिन्नासं, मंगलकल्लाण आवासं	१
विसहरफुल्लिगमंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ, तस्स गह रोगमारी, दुट्ठजरा जंति उवसामं	२
चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहु फलो होइ; नरतिरिएसु वि जीवा, पावंति न दुक्खदोगच्चं-	३
ॐ अमरतरु कामधेणु, चिंतामणिकामकुंभमाइया; सिरिपासनाहसेवा, गहाण सव्वे वि दासत्तम्	४
ॐ ह्रीं श्रीं ऐं तुह दंसणेण सामिय, पणासेइ रोगसोगदुक्ख दोहग्गं; कप्पतरुमिव जायइ, ॐ तुह दंसणेण सव्वफलहेउ स्वाहा	५
ॐ ह्रीं नमिऊणविग्घनासय, मायाबीएण धरणनार्गिंदं; सिरिकामराज कलियं पासजिणिंदं नमंसामि-	६
ॐ ह्रीं श्रीं सिरिपासविसहर-विज्जामंतेण ज्ञाणज्ञाएज्झा; धरणपउमावइदेवी, ॐ ह्रीं क्ष्म्लव्यु स्वाहा	७
ॐ जयउ धरणिंद- पउमावइ य नागिणी विज्जा; विमलज्झा-णसहियो, ॐ ह्रीं क्ष्म्लव्यु स्वाहा	८
ॐ थुणामि पासनाहं, ॐ ह्रीं पणमामि परमभत्तीए, अट्ठक्खर धरणेन्दो, पउमावइय पयडिया किन्ती	९
जस्स पयकमलमज्झे, सया वसेइ पउमावइ य धरणिंदो; तस्स नामइ सयलं, विसहरविसं नासेइ	१०
तुह समते लद्धे, चिंतामणिकप्पपायव-ब्भहिए; पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं	११
ॐ नट्ठट्ठमयठाणे, पणट्ठकमट्ठनट्ठसंसारे, परमट्ठानिट्ठिअट्ठे, अट्ठगुणाधिसरं वंदे	१२
ॐ गरुडो वनितापुत्रो, नागलक्ष्मीं; महाबलः; तेणमुच्चंति मुसा, तेण मुच्चंति पन्नगाः	१३
स तुह नाम सुद्धमंतं, सम्मं जो जवइ सुद्धभावेण; सो अयरामरं ठाणं पावइ नय दोग्गइं, दुक्खं वा	१४
ॐ पंडुभगंदरदाहं, कासं सासं च सूलमाइणि, पासपहुपभावेण, नासंति सयलरोगाई ह्रीं स्वाहा	१५
ॐ विसहरदावानल-साइणि वेयालमारिआयंका; सिरिनिलकंठपासस्स, स्मरणमित्तेण नासंति	१६
पन्नास गोपीडां कुरग्रह, तुह दंसणं भयं काये; आवि न हुंति ए तह वि, तिसंजं जं गुणिज्जासो	१७
पिंड जंत भगंदर कासं, सास सूल तह निव्वाह; सिरिसा मलपास महंत, नाम पउर पऊलेण	१८
ॐ ह्रीं श्रीं पासधरणसंज्जुत्तं, विसहरविज्जं जवेइ सुद्धमणेणं,	

पावइ इच्छयं सुहं, ॐ ह्रीं श्रीं क्ष्मल्यु स्वाहा..... १९
 ॐ रोग-जल-जलण-विसहर-चोरारि-मइंद-गय-रण-भयाइं;
 पासजिणनामसंकित्तेणेण, पसमंति सव्वाइं ह्रीं स्वाहा..... २०
 ॐ जयउ धरणिंद नमंसिय, पउमावइपमुह निसेविया पाया
 ॐ क्लीं ह्रीं महासिद्धिं, करेइ पास जगनाहो..... २१
 ॐ ह्रीं श्रीं तं नमः पासनाहं, ॐ ह्रीं श्रीं धरणेन्द्र नमंसियं दुहविणासं;
 ॐ ह्रीं श्रीं जस्स पभावेण सया, ॐ ह्रीं श्रीं नासंति उवदवा बहुसो ... २२
 ॐ ह्रीं श्रीं पइं समरंताण मणे, ॐ ह्रीं श्रीं न होइ वाहि न तं महादुक्खं,
 ॐ ह्रीं श्रीं नामपि हि मंतसमं, ॐ ह्रीं श्रीं पयडं नत्थीत्थ संदेहो २३
 ॐ ह्रीं श्रीं जलजलणभय तह सप्पसिंह, ॐ ह्रीं श्रीं चोरारिसंभवे खिप्पं,
 ॐ ह्रीं श्रीं जो समरेइ पासपहुं, ॐ श्रीं क्लीं पहुविकयावि किं तस्स . २४
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं इह लोगट्ठी परलोगट्ठी, ॐ ह्रीं श्रीं जो समरेइ पासनाहं,
 ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रूं गां गीं गुं गं: ग्रां ग्रीं ग्रूं ग्रः तं तह सिज्जइ खिप्पं २५
 इह नाह समरह भगवंत, ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ग्रां ग्रीं
 ग्रूं ग्रः क्लीं क्लीं श्रीकलिकुंडस्वामिने नमः..... २६
 इअ संथुओ महायस!, भत्तिब्बरनिब्भरेण हियएण;
 ता देव दिज्ज बोहिं भवे भवे पासजिणचंद २७

श्री शान्तिधारा पाठः

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं वं वं मंमं हंहं संसं तंतं पंपं डंडं म्वीं म्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रॉं द्रॉं द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय
 नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ॐ ह्रीं कौं मम पापं खण्डय खंडय हन हन दह दह पच पच पाचय पाचय सिद्धिं कुरु कुरु.

ॐ नमोर्हं डं म्वीं क्ष्वीं हं सं डं वं व्हः पः हः क्षौं क्षीं क्षूं क्षौं क्षं क्षः १

ॐ ह्रूं ह्रां ह्रिं ह्रीं ह्रूं ह्रूं ह्रें ह्रें ह्रों ह्रों ह्रूं ह्रः असिआउसाय नमः मम पूजकस्य ऋद्धिं वृद्धिं कुरु कुरु स्वाहा.

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते डः डः डः मम श्रीरस्तु वृद्धिरस्तु तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु शान्तिरस्तु कान्तिरस्तु
 कल्याणमस्तु मम कार्यसिद्ध्यर्थं सर्वविघ्ननिवारणार्थं श्रीमद् भगवते
 सर्वो-तकृष्टत्रैलोक्यनाथार्चितपादपद्म-अर्हत्-परमेष्ठि-जिनेन्द्र-देवाधिदेवाय नमोनमः। मम श्री
 शान्तिदेव-पादपद्मप्रसादात् सधर्म-श्री-बलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु स्वस्तिरस्तु धन- धान्यसमृद्धिरस्तु श्रीशांतिनाथो मां
 प्रति प्रसीदतु, श्री वीतरागदेवो मां प्रति प्रसीदतु, श्री जिनेन्द्रः परममांगल्य-नामधेयो ममेहामुत्र च सिद्धिं तनोतु.

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीचिन्तामणिपार्श्वनाथाय, तीर्थकराय रत्नत्रयरूपाय अनंतचतुष्टयसहिताय
 धरणेन्द्र-फणमौलिमण्डिताय समवसरण लक्ष्मीशोभिताय, इन्द्र-धरणेन्द्रचक्रवर्त्यादिपूजितपादपद्माय
 केवलज्ञान-लक्ष्मी-शोभिताय जिनराजमहादेवाष्टादशदोष-रहिताय षट्-चत्वारिंशद्गुणसंयुक्ताय परमगुरुपरमात्मने

सिद्धाय बुद्धाय त्रैलोक्यपरमेश्वराय देवाय सर्वसत्त्वहितकराय धर्म-चक्राधीश्वराय सर्वविद्यापरमेश्वराय
 त्रैलोक्यमोहनाय धरणेन्द्र-पद्मावतीसहिताय अतुलबलवीर्य-पराक्रमाय अनेक दैत्य-दानवकोटिकुटघृष्टपादपीठाय
 ब्रह्माविष्णु-रुद्र-नारद- खेचरपूजिताय सर्वभयजनानन्दकराय सर्वजीवविघ्न-निवारणसमर्थाय श्रीपार्श्वनाथ-देवाधिदेवाय
 नमोऽस्तु ते श्रीजिनराजपूजनप्रसादाद् मम सेवकस्य सर्वदोषरोग-शोकभयपीडाविनाशनं कुरु कुरु सर्व शान्तिं तुष्टिं
 पुष्टिं कुरु कुरु स्वाहा.

ॐ नमो श्रीशान्तिदेवाय सर्वारिष्टशान्तिकराय ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रूं ह्रः असिआउसा मम सर्वविघ्नशान्तिं कुरु कुरु श्री
 चतुर्विध संघस्य .अमुकस्य. मम तुष्टिं पुष्टिं कुरु कुरु स्वाहा

श्री पार्श्वनाथ पूजनप्रासादाद् मम अशुभान् पापान् छिन्धि २, मम अशुभकर्मापार्जितदुःखान् छिन्धि २, मम
 परदुष्टजनकृत मंत्र-तंत्र-दृष्टि-पुष्टि-छलच्छिद्रादि- दोषान् छिन्धि २, मम अग्नि-चोर-जल-सर्पव्याधिं छिन्धि २,

मारीकृतोपद्रवान् छिन्धि २, डाकिनी शाकिनी भूत-भैरवादिकृतोपद्रवान् छिन्धि २, सर्वभैरवदेवदानव-वीरनरनार-सिंहयोगिनीकृतविघ्नान् छिन्धि २, अग्निकुमार कृतविघ्नान् छिन्धि २, उदधिकुमार-सनत्कुमारकृतविघ्नान् छिन्धि २, दीपकुमारभयान् छिन्धि २, भिन्धि २, वातकुमारमेघकुमारकृतविघ्नान् छिन्धि २ भिन्धि २, इन्द्रादिदश दिक्पालदेवकृतविघ्नान् छिन्धि-२, जय-विजय-अपराजितमाणिभद्र पूर्णभद्रादिक्षेत्रपालकृतविघ्नान् छिन्धि..२ राक्षस वैताल दैत्य दानवयक्षादिकृतदोषान् छिन्धि २, नवग्रह कृतग्रामनगरपीडां छिन्धि २, सर्व अष्टकुल-नागजनित विषभयान् सर्वग्रामनगरदेशरोगान् छिन्धि...२

सर्वस्थावर जंगम वृश्चिकदृष्टिविषजाति-संपादिकृतविष- दोषान् छिन्धि २, सर्वसिंहाष्टापदव्याघ्र-व्यालवनचर-जीवभयान् छिन्धि २

परशत्रुकृतमारणो-च्चाटनविद्वेषणमोहनवशीकरणादि-दोषान् छिन्धि २ भिन्धि २

सर्वगो-वृषभादि-तिर्यग्मारीं छिन्धि २,

सर्व-वृक्ष-फल-पुष्प-लता-मारीं छिन्धि २,

ॐ नमो भगवति। चक्रेश्वरि ज्वालामालिनी पद्मावतीदेवी अस्मिन् जिनेन्द्रभुवने आगच्छ २, एहि २ तिष्ठ २ बलिं गृहाण २ मम धनधान्यसमृद्धिं कुरु २, सर्वभव्यजीवानन्दं कुरु २, सर्वदेश-ग्राम-पुर-मध्यक्षुद्रोपद्रव- सर्व-दोष-मृत्यु-पीडा विनाशनं कुरु...२।। सर्वपरचक्रभयनिवारणं कुरु .२. सर्वदेशग्रामपुरमध्यक्षुद्रोपद्रव-सर्वदोषमृत्युपीडाविनाशनं कुरु २, सर्वदेशग्रामपुर मध्यसुभिक्षं कुरु २, सर्व विघ्नशांतिं कुरु २ स्वाहा

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं वृषभादिवर्धमानान्तचतुर्विंशति-तीर्थकरमहादेवाः प्रीयन्तां २ मम पापानि शाम्यन्तु, घोरोपसर्गाः सर्वविघ्नाः शाम्यन्तु. ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं रोहिण्यादिमहादेव्यः अत्र आगच्छन्तु २ सर्वदेवताः प्रीयन्तां २.

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं वर्धमानस्वामी-गौतमस्वामी-धर्मचक्र-तीर्थाधिष्ठायिकाः देवदेव्यः, श्री पार्श्वपुरमतीर्थाधिष्ठायिका

दिव्यपद्मावतीदेवी वर्धमानविद्याधिष्ठायिन्यः जयाविजया-जयन्ताऽपराजितादेव्यः सूरिमंत्राधिष्ठायिकाः भगवती सरस्वती देवीत्रिभुवनस्वामिनी देवी-श्रीदेवी-यक्षराजगणी-पिटक-चतुषष्टीसुरेन्द्रा-षोडश-विद्यादेव्य-चतुर्विंशतियक्षाः चतुर्विंशति यक्षिण्यः प्रियन्तां २, मम अज्ञान निवारण-सारस्वत-रोगापहारिणीविषापहा-रिणीबंधमोक्षणी-श्री-लक्ष्मीसंपादनी-परमंत्रविद्याछेदिनी-दोषनाशिनी-अशिवो-पश मनी-विद्यासिद्धिं कुर्वन्तु, मम बाहुबलीविद्या-सौभाग्या-विद्या-जयविजयादिस्वप्न-विद्यासिद्धिं कुरुत २. विजयाजया-जयन्ती नन्दाभद्रादेव्यः सान्निध्यं कुर्वन्तु २.. जैनशासन प्रत्यनीक निवारणं कुर्वन्तु २.. मम सर्वकार्यसिद्धिं कुर्वन्तु २ स्वाहा..

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं चक्रेश्वरी ज्वालामालिनी पद्मावती महादेवी प्रीयन्तां २

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं माणिभद्रादि यक्षकुमारदेवाः प्रीयन्ताम् २ सर्व जिनशासनरक्षकदेवाः प्रीयन्तां २ श्री आदित्य सोम मङ्गल बुध बृहस्पति शुक्र शनि राहु केतवः सर्वे नवग्रहाः प्रीयन्तां प्रसीदंतु देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधिव्यसनवर्जितम्।

अभयं क्षेममारोग्यं स्वस्तिरस्तु च मे सदा..... १

यदर्थं क्रियते कर्म, सप्रीतिनित्यमुत्तमम्।

शान्तिकं पौष्टिकं चैव, सर्वकार्येषु सिद्धिदम्..... २

इति श्री शान्तिधारापाठः समाप्तः